राजभाषा भारती

রাজভাষা ভারতী راج بھاشا بھارتی

राजभाषा भारती

രാജ ഭാഷാ ഭാരതി રાજ ભાષા ભારતી

ਰਾਜ ਭਾਸ਼ਾ ਭਾਰਤੀ

రాజ భాషా భారతి ராஜ்பாஷா பாரதி

ৰাজভাষা ভাৰতী

ರಾಜ ಭಾಷಾ ಭಾರತಿ ରାଜ ଭାଷା ଭାରତୀ

राजभाषा भारती راج ڀاشا ڀارتي

राजभाषा विभाग

गृह मंत्रालय, भारत सरकार

जनं बिभ्रती बहुधा विवाचसम्
नानाधर्माणं पृथिवी यथौकसम् ।
सहस्रम् धारा द्रविणस्य मे दुहां
ध्रुवेव धेनुरनपस्फुरन्ती ॥

—अथर्ववेद : 12:1.45

नाना प्रकार की भाषाओं के बोलने वाले बहुभाषी जन समुदाय को और अनेक धर्मों, रीति-रिवाजों, रस्मों के मानने वाले जन समूह को यह पृथ्वी एक कुटुम्ब की तरह धारण करे । यह अविचल पृथ्वी सीधी दुधारू गाय की तरह हमें हजारों प्रकार से विपुल वैभव दे ।

राजभाषा भारती

राजभाषा विभाग की त्रैमासिकी

वर्ष–4, अंक–14 [सरल और सुबोध भाषा का मुखपत्र] जुलाई-सितम्बर, 1981

संपादक
राजमणि तिवारी

□

उप संपादक
रंग नाथ त्रिपाठी राकेश

पत्र व्यवहार का पता :
संपादक, राजभाषा भारती,
राजभाषा विभाग गृह मंत्रालय,
लोकनायक भवन (प्रथम तल),
खान मार्केट, नई दिल्ली-110003

□

फोन : 617807

□

पत्रिका में प्रकाशित लेखों की अभिव्यक्ति से राजभाषा विभाग का सहमत होना अनिवार्य नहीं है ।

□

[नि:शुल्क वितरण के लिए]

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

कुछ अपनी .... कुछ आपकी : 2—3

1. हिन्दी सम्बन्धी सभी प्रावधानों का अनुपालन किया जाएगा 4
—श्री भागवत झा 'आजाद'
2. अण्डमान और निकोबार प्रशासन में हिन्दी (भेंटवार्ता) 5
—श्री जयनारायण तिवारी एवं श्री मनुज
3. परिचर्चा: भाषा और राष्ट्रीय एकीकरण . . . 8
   (1) सुनन्दा सान्याल 8
   (2) डा० प्रभाकर माचवे 10
   (3) श्री गुलाब दास ब्रोकर 11
   (4) श्री के० के० राघवन 13
   (5) डा० अजय तिवारी 14
   (6) योहिचि युकिशिता 17
4. संपादकाचार्य पण्डित अम्बिका प्रसाद वाजपेयी . . . 19
—श्री गौरीशंकर गुप्त
5. राष्ट्रभाषा और हिन्दी —डा० परमेश्वरदीन शुक्ल 21
6. भारतीय भाषाओं में हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं का स्थान 23
—डा० रामचन्द्र तिवारी
7. नागरी लिपि तथा संक्षिप्तीकरण : —डा० कैलाश चन्द्र भाटिया 27
8. सर्वभारतीय साहित्य : शिखर की तलाश : —श्री रंगनाथ राकेश 29
9. हिन्दी सलाहकार समितियों की बैठकें : कुछ प्रमुख निर्णय 33
   (1) शिक्षा मंत्रालय 33
   (2) डाकतार विभाग 35
   (3) गृह मंत्रालय 37
10. 'ग' क्षेत्र में नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों का गठन 39
   (1) कलकत्ता 39
   (2) त्रिवेंद्रम 40
11. भाषा बहता नीर 42
12. राज्यों में उनकी प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग 43
   (1) केरल 43
   (2) बिहार 45
13. पाँचवां अखिल भारतीय नागरी लिपि सम्मेलन 47
14. बढ़ते कदम 50
15. समीक्षा 56
16. अतीत के झरोखे से 56

कुछ अपनी

गत तीन वर्षों से हम एक ही बात को भिन्न-भिन्न शब्दों में दोहराते हुए कुछ ऊब से गए थे और शायद यही आलम हमारे विवेकशील पाठकों का भी रहा हो। लेकिन हिन्दी जगत में सहजभाव और शालीनता इतनी ज्यादा है कि हमारे शहनशील पाठकों ने इस बात को लेकर कड़े शब्दों में हमारी आलोचना नहीं की। फिर भी हमें निरन्तर अपनी इस कमजोरी का एहसास रहा है। कुछ समय से हम इस पत्रिका में परिवर्तन लाने की कोशिश कर रहे हैं। पिछले अंक में तो हमने केवल आवरण ही बदला था। मौजूदा अंक में मजबून में भी चन्द बुनियादी परिवर्तन लाने का प्रयास किया गया है। इन तबदीलियों का मकसद सिर्फ पठनीयता या रोचकता को बढ़ाने तक ही सीमित नहीं है। मुख्य उद्देश्य यह है कि "राजभाषा भारती" महज प्रचारबाजी की पक्षवक्ता ही बन कर न रह जाए, बल्कि यह भाषा के व्यापक क्षेत्र में प्रश्नात्मक विचार-विमर्श, संवाद और बहस के लिए एक मंच की भूमिका निभाए, ताकि भाषा के बारे में समय-समय पर पैदा होने वाले भ्रम, आशंकाएं, गिले और शिकवे दूर होते रहें।

"परिचर्चा" शीर्षक से एक नये स्तम्भ की शुरुआत की गई है। इसका उद्देश्य यह है कि राजभाषा के किसी महत्वपूर्ण पहलू को लेकर पाठकों के सामने विभिन्न दृष्टिकोण और विचारधाराएं रखी जाएं ताकि व्यापक पैमाने पर चिंतन और मनन की प्रक्रिया शुरू हो और भाषा के बारे में जागरूकता और चेतना आए। एक ही विचार-धारा की संपुष्टि करवाने का हमारा इरादा बिल्कुल नहीं है। इस अंक में चर्चा का विषय है : "भाषा और राष्ट्रीय एकीकरण"। संस्कारात्मक विवशता के कारण हम यह मानकर चलते आए हैं कि भाषा राष्ट्रीय एकीकरण का मूलभूत साधन है। क्या इस के विपरीत भी कोई दलील हो सकती है? क्या इस विषय पर भी कोई सार्थक बहस मुमकिन है? इस विषय पर हमने कुछ प्रमुख बुद्धिजीवियों और चिंतकों को भाग लेने के लिए आमंत्रित किया था। उनके विचार पढ़िये पृष्ठ 8 पर।

इसी स्तम्भ में एक विद्वान लेखक ने राष्ट्र के भावात्मक एकीकरण के लिए सभी क्षेत्रीय भाषाओं की साहित्यिक वृत्तियों के अनुवाद और प्रसार पर बल दिया है। "भारतीय ज्ञान-पीठ पुरस्कार" ने इस बारे में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। पृष्ठ 29 पर हमने एक श्रृंखला शुरू की है जिसमें अब तक के सभी पुरस्कार विजेताओं तथा उनकी कृतियों के बारे में अपने पाठकों तक जानकारी पहुंचाएंगे।

जहां भी 'राजभाषा' या 'सम्पर्क भाषा' के रूप में हिन्दी का जिकर होता है तो सभी ओर से एक ही आवाज़ उठती है कि भाषा सरल, सुबोध और स्वाभाविक होनी चाहिए! कुछ लोग तो यहां तक कह देते हैं कि यदि हिन्दी में ये गुण नहीं लाए गए तो उसका भविष्य अंधकारमय हो जाएगा। परन्तु सर्वभारतीय संदर्भ में सादा या सरल हिंदी की परिभाषा किसी ने नहीं बताई। सरल भाषा का स्वरूप क्या हो, इस विषय को लेकर हमने एक नया स्तम्भ "भाषा बहता नीर" शुरू किया है जिसमें सरल और सुबोध भाषा की कुछ मिसालें विख्यात साहित्यकारों की कलम से ली गई हैं। शुरुआत उपेन्द्रनाथ 'अश्क' की जुबानी की जा रही है, पृष्ठ 42 पर।

सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रयोग को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखने के लिए हमने एक झरोखा बनाया है। 'अतीत के झरोखे से' आप पिछली शताब्दी के दौरान हिन्दी में लिखे कुछ मूल सरकारी दस्तावेजों को देख सकेंगे। पाठकों से आग्रह है कि वे भी इसमें हमारा हाथ बटाएं और यदि उन के पास कोई ऐसी खानदानी सनद या दस्तावेज़ हो तो वे हमें उसका फोटोस्टेट करवा कर भेजें। हम उसको सभार स्वीकार करेंगे।

"राजभाषा भारती" कुछ बदले हुए रूप में आपके हाथ में है। हम आपकी राय जानने के लिए उत्सुक हैं। पत्रिका में और संशोधन लाने की दिशा में भी आपके सुझाव की हम प्रतीक्षा करेंगे।

कुछ आपकी

"राजभाषा भारती" का राजभाषा विशेषांक मिला। मैं इस अंक के लगभग सभी लेख पढ़ गया हूं। निस्संदेह इस अंक की सामग्री राजभाषा की वर्तमान स्थिति और प्रगति पर समग्रता से प्रकाश डालती है। राजभाषा के विविध पहलुओं को समेटने के साथ आपने विविध विभागों में हिन्दी के बढ़ते चरण शीर्षक से जो जानकारी प्रस्तुत की है, वह हिन्दी के विकास, प्रचार, प्रसार आदि की दृष्टि से उपयोगी है। मुझे स्वयं इस अंक से ऐसी सूचनाएं प्राप्त हुई, जो कहीं अन्यत्र सुलभ नहीं हैं। इस विशेषांक को मैं संग्रहणीय मानता हूं और आपको तथा आपके सहयोगियों को इतना सुंदर, सारयुक्त विशेषांक प्रकाशित करने के लिए हार्दिक बधाई देता हूं।

–डा. विजेन्द्र स्नातक
पूर्व-प्रोफेसर, हिन्दी-विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय

"राजभाषा भारती" का राजभाषा विशेषांक प्राप्त हुआ। धन्यवाद। पत्रिका का मुख पृष्ठ मुझे बहुत अच्छा लगा। प्रकाशित लेखकों में श्री शिवसागर मिश्र तथा डा. भोलानाथ तिवारी के लेख बड़े ही सारगर्भित लगे। दूसरे लेख भी काफी पसन्द आये। श्री शिवसागर मिश्र के इस कथन से मैं पूर्णतः सहमत हूं–"हिन्दी एक ऐसी गंगा है, जिसे विभिन्न समृद्ध बोलियों और भाषाओं की धाराओं ने मिलकर संपुष्ट किया है" लेकिन अफसोस की बात है कि शुद्ध हिन्दी के आग्रहियों द्वारा उर्दू सहित दूसरी भाषाओं के बोलचाल के लोकप्रिय शब्दों को अपनाया नहीं जाता है। अपने लेखक-जीवन में मुझे तो यही अनुभव हुआ है कि हिन्दी भाषियों को और भी उदार होना चाहिए। इससे हिन्दी और भी आगे बढ़ेगी और हिन्दी सही अर्थों में राजभाषा बन सकेगी।

–विमल मित्र
29/1/1, चेतला सेंट्रल रोड,
कलकत्ता-27

मुझे यह अंक देखकर प्रसन्नता हुई कि सभी दृष्टियों से "राजभाषा भारती" का स्वरूप निखरता जा रहा है। साज-सज्जा तो पहले से अच्छी हो ही गई, साथ ही सामग्री भी बहुत ही अच्छी आ रही है। जितनी प्रशंसा की जाए, कम है। इस अंक में मैंने यह विशेषता पाई है कि सरकारी क्षेत्र की हिन्दी की गतिविधियों के साथ अर्ध सरकारी क्षेत्र की ऐसी गतिविधियां भी दी गई हैं जिनसे हिन्दी को प्रोत्साहन मिल रहा है। यह प्रयास प्रशंसनीय है।

—हरिशंकर, संपादक "हिंदी शिक्षक" बम्बई

"राजभाषा भारती" का अप्रैल–जून, 1981 का राजभाषा विशेषांक प्राप्त हुआ। यह विशेषांक सामग्री, छपाई, बंधाई आदि सभी दृष्टियों से उत्तम है। इसका मुखपृष्ठ अति आकर्षक है। इसमें अनेक विद्वानों के सामयिक लेख प्रकाशित हुए हैं। इस प्रकार यह स्थाई रूप में संग्रह योग्य बन गया है। इस उपयोगी विशेषांक के प्रकाशन के लिए आप तथा आपके सभी सहयोगी बधाई के पात्र हैं।

—जगन्नाथ,
महामंत्री "केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद",
नई दिल्ली

अप्रैल—जून 1981 के अंक की सामग्री इतनी रोचक और प्रभावी थी कि एक ही बैठक में पूरा अंक उपन्यास की तरह पढ़ने पर विवश हो गया। यह अंक बड़ी मेहनत और कड़े परिश्रम से तैयार किया गया है। सामग्री का चुनाव, प्रस्तुतीकरण, छपाई आदि सभी मनमोहक हैं। इतना सुन्दर अंक प्रस्तुत करने के लिए बधाई।

—हीरालाल दुसानी, भूतपूर्व उपमंत्री, भाषा भारती, बंबई

'राजभाषा भारती' के उक्त राजभाषा विशेषांक में भारत सरकार की हिंदी नीति सम्बन्धी सभी मुख्य निर्णयों को एक अंक में रखकर संकलित की गई सामग्री ज्ञानप्रद, सूचनात्मक व उपयोगी लगी। नया मुखपृष्ठ आकर्षक है तथा उसमें हिंदी के सामाजिक विकास की नीति की झलक है। प्रत्येक लेख की समाप्ति पर मुद्रित रेखा चित्र बड़े भले लगते हैं।

—श्रीमती न. ज. राव, उप निदेशक, हिं. शि. यो., बंबई

आपकी पत्रिका अब एक ऐसा आईना बन गई है जिसमें हिंदी भाषा निखरती नजर आ रही है। राजभाषा को कामकाज की भाषा बनाने के लिए हिंदी को क्लिष्ट शब्दों से बचाने की आवश्यकता समझते हुए हिन्दी को आसान बनाने को मैं हिन्दी की सबसे बड़ी सेवा समझता हूं। इसमें शक नहीं कि दूसरी भारतीय भाषाओं को फूलने-फलने का पूरा अधिकार देते हुए राजभाषा आगे बढ़ रही है। अब तो कालेजों और यूनिवर्सिटियों के अलावा सरकारी विभागों में भी चाहे वह डाकतार विभाग हो या रेलवे, सरकारी बैंक हो या अन्य राष्ट्रीयकृत संस्थायें, वहां हिन्दी पहुंच कर ही रहेगी।

—नजीर बनारसी, वाराणसी

निश्चय ही इस विशेषांक के प्रकाशन में आपका भारी श्रम परिलक्षित हो रहा है। ऐसे विभिन्न उच्च कोटि के विद्वता-पूर्ण लेखों के संग्रह में किंवा प्रकाशन में श्रम स्वाभाविक ही है। यही कारण है कि यह अंक केवल पठनीय ही नहीं अपितु संग्रहणीय भी बन पड़ा है। हार्दिक बधाई स्वीकार करें।

—भगवानदास षोपट, हिन्दी विभाग, हैदराबाद विश्वविद्यालय

पत्रिका में प्रकाशित सभी सामग्री पठनीय एवं अत्यंत उपयोगी है। भारत सरकार की राजभाषा नीति और विभिन्न मंत्रालयों, विभागों, कार्यालयों में उसकी प्रगति की जानकारी के लिए 'राजभाषा भारती' का पठन-पाठन आवश्यक सा हो गया है। छपाई अत्युत्तम है।

—हरिशंकर सिंह, संगठन और प्रबंध सेवा निदेशालय, दिल्ली

उपरोक्त विशेषांक में हिंदी शब्दों का जो प्रयोग किया गया है, वह सरल है एवं समझने योग्य है। संस्कृत से सामान्य जनता अवगत नहीं है। अतएव दिन-प्रतिदिन के प्रयोग में आने वाली भाषा को अधिक प्रयोग में आना चाहिए।

—आर. डी. गुप्ता, आयकर अधिकारी, हरिद्वार

प्रकाशन की दृष्टि से पत्रिका उत्कृष्ट कोटि की है। इसमें चित्र-समाचार का प्रवेश कर उसे और भी आकर्षक बना दिया गया है। यह भी आशा की जाती है कि आप अन्य अच्छे चित्रों का समावेश नियमित रूप से किया करेंगे। आशा यही की जाती है कि इस प्रकार के निबंधों को आप पत्रिका में शामिल करके हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए सरकारी विभागों को वैज्ञानिक दृष्टि प्रदान करते रहेंगे।

—रमेश चन्द्र, हिंदी अधिकारी, कनारा बैंक, आगरा

हिंदी संबंधी सभी प्रावधानों का अनुपालन किया जाएगा

–भागवत झा 'आजाद'
पूर्ति और पुनर्वास मंत्री, भारत सरकार

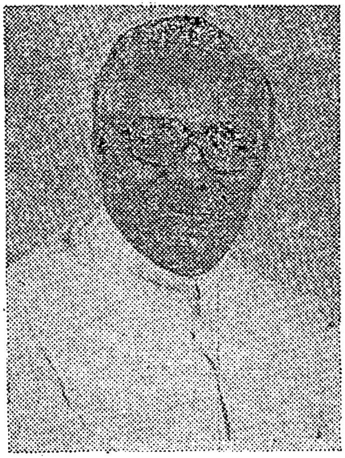

(केन्द्रीय पूर्ति और पुनर्वास मंत्री श्री भागवत झा "आजाद" हिन्दी के समर्थक और विद्वान हैं। वे अत्यन्त स्पष्टवादी और अदम्य उत्साह तथा विशाल अनुभव के धनी हैं। अपने लेखों और व्याख्यानों के माध्यम से राजभाषा हिन्दी की गरिमा बढ़ाने में उनकी सराहनीय भूमिका रही है। पूर्ति और पुनर्वास मंत्रालय की 1-8-81 को हुई हिन्दी सलाहकार समिति की बैठक में उन्होंने जोरदार शब्दों में यह संकल्प किया कि उनके मंत्रालय में हिंदी संबंधी किसी सांविधिक उपबंध का उल्लंघन नहीं किया जाएगा और राजभाषा नीति तथा कार्यक्रमों का दृढ़ता से पालन किया जाएगा। प्रस्तुत है श्री आजाद का वक्तव्य–– संपादक)

कुछ वर्ष पूर्व मैंने यह व्रत लिया था कि मैं अपना काम हिन्दी में ही करूंगा। व्रत के अनुसार मैंने उस समय के अपने विभागों में सरकारी काम हिन्दी में शुरू करवा दिया था। अब भी मैं यही चाहूंगा कि मेरे इस मंत्रालय में भी हिन्दी के प्रयोग की ओर उचित ध्यान दिया जाए, और इस दृष्टि से संविधान अथवा कानून का किसी भी प्रकार से उल्लंघन न किया जाए। मैं अपने सभी अधिकारियों से कहना चाहता हूं कि मेरे मंत्रालय में हिन्दी संबंधी सभी प्रावधानों का अनुपालन किया जाए। **इसका उल्लंघन स्वीकार नहीं किया जाएगा।** सांविधिक व्यवस्था के अनुसार सरकार द्वारा जारी किए जाने वाले ठेकों और करारों को दोनों भाषाओं में जारी करना अनिवार्य है। अतः भविष्य में मेरे विभाग से ये कागजात दोनों भाषाओं में जारी होने चाहिए। **मैं अपने सभी सहयोगियों के साथ यह व्रत लेता हूं कि मेरे मंत्रालय में अधिनियम की किसी भी धारा का उल्लंघन नहीं किया जाएगा।**

कुछ लोग भाषा की दुरूहता का तर्क देकर यह कहते हैं कि सरकारी कार्यालयों की हिन्दी बड़ी कठिन और दुरूह होती है। मैं बता देना चाहता हूं कि हिन्दी भाषा में दुरूहता की ऐसी कोई बात नहीं है। हिन्दी में अंग्रेजी तथा अन्य भाषाओं के प्रचलित शब्दों का सरलता से प्रयोग किया जा सकता है। कई लोगों ने तो हिन्दी का मजाक उड़ाने के लिए कई काल्पनिक शब्द गढ़ लिए हैं, जैसे कि "टाई" शब्द के लिए "कण्ठलंगोट"। मैं पूछता हूं कि यह शब्द कहां लिखा हुआ है, कौन से शब्दकोश में है। इस प्रकार के शब्द तो हिन्दी का मजाक बनाने के लिए कहे जाते हैं। प्रचलित शब्दों को अपनाने में कोई संकोच नहीं होना चाहिए।

विश्व में अंग्रेजी भाषा का अधिपत्य समाप्त होता जा रहा है। विश्व भर में सबसे अधिक मौलिक साहित्य तथा सबसे ज्यादा अनुवादित साहित्य रूसी भाषा में है। अंग्रेजी भाषा का स्थान तो बाद में आता है। हिन्दी को भी उच्च स्थान दिया जा सकता है। इसके लिए हमें अपनी इच्छा शक्ति का प्रयोग करना होगा। मैं यह भी पूछना चाहूंगा कि वैज्ञानिक विषयों के जो शब्द अंग्रेजी में हैं क्या वे आम जनता की समझ में आ जाते हैं? वैज्ञानिक विषयों के पारिभाषिक शब्द तो कठिन होते ही हैं? अनुवादक, विषय के अनुसार भाषा का कुछ स्तर रखेगा ही। विषय की गहनता और ऊंचाई के अनुसार न अंग्रेजी शब्द ही आसान होते हैं और न ही हिन्दी शब्द ही।

मैं यह नहीं कहता कि अंग्रेजी नहीं सीखनी चाहिए, बल्कि मैं तो यह कहता हूं कि अंग्रेजी के साथ-साथ कुछ अन्य विदेशी भाषाएं एवं भारतीय भाषाएं सीखनी चाहिएं। हिन्दी भी सीखनी चाहिए। अपने घर के सभी दरवाजे एवं खिड़कियां खोलकर रखनी चाहिए और सभी भाषाओं का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। सभी दरवाजे बन्द करके केवल अंग्रेजी भाषा के लिए एक खिड़की खोलना गलत बात है। इस सम्बन्ध में राष्ट्रपिता बापू को याद रखें जिन्होंने कहा है कि अपने घर के सभी दरवाजे एवं खिड़कियों को खुला रखें ताकि....

इस विशाल देश में, उत्तर से लेकर दक्षिण तक तथा पूर्व से लेकर पश्चिम तक, संपूर्ण भारत में रहने वाली भारतीय जनता को भाषात्मक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से प्रेम के सूत्र में बांधने की क्षमता हिन्दी में ही है। भारत की चारों दिशाओं में स्थित चारों धामों के दर्शनों के लिए आने वाले सभी यात्री–चाहे वे उत्तर भारत के हों या दक्षिण भारत के हों, पूर्वांचल के हों या पश्चिमी भारत के–उन सभी के पारस्परिक व्यवहार की एक ही भाषा होती है, और वह है "हिन्दी"। अतः हिन्दी के विकास की ओर ध्यान देना हमारा परम धर्म है।

अधिनियमों आदि के प्रावधानों के अनुपालन में, चाहे कठिनाइयां आएं तो भी हमें कानून के अनुसार हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं का प्रयोग करना है। संविधान का उल्लंघन किसी को भी सहन नहीं करना चाहिए। यह बहुत बड़ा अपराध है अस्तु मैं स्वयं को दोषी नहीं बनाना चाहता। यह काम तो नियम के अनुसार होना ही चाहिए। इसके लिए हिन्दी स्टाफ की भी जरूरत पड़ेगी। यदि वित्त मंत्रालय हिन्दी कार्य के लिए पदों को नहीं बनाता है तो इसके लिए मैं प्रधान मंत्री जी से भी कहूंगा कि कानून के उल्लंघन के लिए मैं दोषी नहीं हूं, इसके लिए उनको दोषी माना जाए जो इसके रास्ते में अवरोध खड़ा करते हैं। अतः मैं अपने व्रत को पुनः दोहराता हूं और कहता हूं कि मेरे मंत्रालय के सचिव, संयुक्त सचिव तथा अन्य अधिकारी भी आज मेरे साथ व्रत लें कि वे आज से अपना काम हिन्दी में करेंगे।

अण्डमान-निकोबार प्रशासन में हिंदी : एक भेंटवार्ता

--श्री जयनारायण तिवारी एवं श्री मनुज

(अण्डमान तथा नीकोबार प्रशासन के कामकाज में हिन्दी के प्रयोग की स्थिति का जायजा लेने के लिए सचिव, राजभाषा विभाग एवं भारत सरकार के हिन्दी सलाहकार, श्री जयनारायण तिवारी ने फरवरी, 1981 में अण्डमान तथा नीकोबार द्वीप समूह की यात्रा की थी। इस दौरान आकाशवाणी, पोर्टब्लेयर के प्रतिनिधि श्री मनोज सिन्हा ''मनुज'' ने उनसे भेंट की। श्री तिवारी ने अण्डमान तथा नीकोबार द्वीप समूह में राजभाषा हिन्दी के संदर्भ में अपने विचार प्रकट किए। जिसे आकाशवाणी के पोर्ट ब्लेयर केन्द्र से 5-2-81 को रात साढ़े सात बजे और पुन: 8-2-81 को प्रात: सात बजे प्रसारित किया गया। प्रस्तुत है भेंट-वार्ता का संपादित पाठ।)

श्री मनुज–तिवारी जी, बड़े सौभाग्य की बात है कि आपसे राजभाषा कार्यान्वियन के संबंध में चर्चा करने का आज अवसर मिल रहा है। कृपया यह बताएं कि इन द्वीपों में अपने दौरे के समय यहां के कार्यालयों में आपने हिन्दी की प्रगति कैसी पाई है?

श्री तिवारी–मुझे बड़ी खुशी है कि मुझको यहां आने का मौका मिला। यह देश का एक पिछड़ा प्रदेश है, एक बार्डर का हिस्सा भी है और एक माने में बहुत महत्वपूर्ण है कि यहां पर जितने लोग रहते हैं उनमें अधिकतर लोग, थोड़े से आदिवासियों को छोड़कर, मुख्यभूमि भारत के विभिन्न हिस्सों से आए हैं। यहां पर एक ऐसा ''मिक्स्चर'' देखने को मिलता है जो हमारे लिए ''आइडल'' है। यहां पर बंगला भाषी बंगाली हैं, तमिलनाडु के तमिल बोलने वाले हैं, हिन्दी भाषी भी हैं। बंगलाभाषियों की संख्या संभवत: हिन्दी भाषियों से भी ज्यादा है। हमारा देश बहुभाषी है, उसी का एक छोटा सा रूप हमें अण्डमान-नीकोबार में देखने को मिलता है। इस छोटे रूप में ही यह भी दिखाई पड़ता है कि बहुत से भाषा वाले जहां आपस में अपनी-अपनी भाषाओं में बात करते हैं, वहीं परस्पर सम्पर्क के लिए उन्होंने स्वयं अपनी ही पहल पर हिन्दी को अपना लिया है। जब कोई बंगाली किसी तमिल भाषी से बात करता है तो वह न तो बंगला में बात करता है न तमिल में और न ही अंग्रेजी में बल्कि ज्यादा तर हिन्दी में बात करता है। यहां इस तरह हिन्दी आम भाषा हो गई है, लिंक भाषा के तौर पर। यह हमारी भारत सरकार की राजाभाषा नीति का एक तरह से पुष्टिकरण है। आगे चलकर जबकि सभी प्रदेशों में अपनी-अपनी भाषाओं का प्रयोग होने लगेगा और अंग्रेजी राजभाषा के रूप में धीरे-धीरे हट जाएगी तो अपने आप हिन्दी ही ऐसी भाषा है जो कि लिंक भाषा के रूप में विकसित हो सकेगी। इस प्रकार मुझको यहां आने पर बड़ी खुशी हुई। मैंने वही चीज देखी जो कि हम लोगों के लिए एक प्रकार का ''आइडिल'' है। वैसे अंडमान ''ख'' श्रेणी के प्रदेशों में आता है। ''ख'' श्रेणी के प्रदेश वे प्रदेश हैं जहां हिन्दी अपनी भाषा तो नहीं है मगर हिन्दी का इतना काफी प्रचलन है कि उनसे यह अपेक्षा की जाती है कि वहां के शासन में हिन्दी का काफी प्रयोग हो और वहां से हिन्दी भाषी प्रदेशों और केन्द्र सरकार के साथ जो पत्र-व्यवहार हो वह भी अधिकतर हिन्दी में ही हो। मैंने यहां के अधिकारियों से बात की है। केन्द्र सरकार के मंत्रालयों के अधिकारियों और यहां के प्रदेशीय शासन के अधिकारियों से मुझे मिलने का मौका मिला है। मेरी यही धारणा है कि यहां के स्थानीय शासन में भी हिन्दी का काफी प्रयोग हो रहा है। यहां जो केन्द्रीय विभाग हैं वे भी अपने यहां इस बात के लिए प्रयत्नशील हैं कि यहां ''ओरीजिनल'' काम हिन्दी में शुरू हो। अभी जो परिस्थिति है उसमें अंग्रेजी का काफी प्रयोग यहां होता है। हम लोगों ने जो बैठकें की हैं उनसे हमको काफी ''रिसपांस'' मिला है और हमें यह आशा है कि हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने के सिलसिले में हमको भविष्य में काफी सुविधाएं मिलेंगी और इसमें काफी प्रगति होगी। वैसे हिन्दी के पत्रों का जवाब हिन्दी में जा रहा है। राजभाषा अधिनियम के अनुसार जिन कामों के लिए हिन्दी का प्रयोग करना जरूरी है उनमें हिन्दी का प्रयोग अधिकतर हो रहा है और उसके बारे में मुझे खास शिकायत नहीं है। मगर हिन्दी का और अधिक प्रयोग हो, इसके लिए इस दौरे के समय हम लोगों ने प्रयत्न किया है और यहां के मंत्रालयों के अधिकारियों ने और प्रशासन के अधिकारियों ने, दोनों ने यह वायदा किया है कि इस संबंध में भी वे सतत प्रयत्नशील रहेंगे और यहां जो कार्यान्वयन समितियां बनी हैं उनकी बैठकें भी बराबर नियमित रूप से बुलाते रहेंगे और उनमें इस विषय पर चर्चा होती रहेगी।

श्री मनुज–आपने जो चर्चा की है और यहां जिस संतोषजनक ढंग से हिन्दी का कार्य हो रहा है वह काफी उत्साहवर्द्धक है। अब आपसे हम यह जानना चाहेंगे कि राजभाषा नीति को अधिक कारगर ढंग से इन द्वीपों में लागू करने के संबंध में, आपके क्या सुझाव हैं?

श्री तिवारी–सबसे पहला सुझाव तो मैंने यहां के अधिकारियों को यह दिया है कि इसकी अपेक्षा कि जो अहिन्दी-भाषा-भाषी लोग हैं वे हिन्दी का प्रयोग करें, वे जोर इस बात पर दें कि जो हिन्दी भाषी लोग हैं वे अपने कार्य में अधिक से अधिक हिन्दी का प्रयोग करें। यह स्वाभाविक है कि हिन्दी जिसकी मातृभाषा है उस को हिन्दी का प्रयोग करने में अधिक सुविधा होगी, वह जल्दी सीख भी सकेगा। अभी जो अंग्रेजी में कार्य करने के आदी हैं उनको अपनी आदत बदलने में जितनी सुविधा हिन्दी मातृभाषा वालों को होगी उतनी औरों को नहीं हो सकती और हिन्दी वाले जब हिन्दी का प्रयोग शुरू करेंगे तो औरों को भी अनुकरण करने के लिए प्रोत्साहन मिलेगा, क्योंकि जब हिन्दी वाले ही हिन्दी का ज्यादा प्रयोग नहीं करते तो अहिन्दी वालों

को तो थोड़ी-सी झिझक होती ही है कि हमसे तो लिखने में कोई न कोई गलती हो ही जाएगी। मैंने अधिकारियों से यह भी कहा है कि वे झिझक को छोड़कर जो काम अभी तक अंग्रेजी में करते रहे हैं उनमें हिन्दी का प्रयोग शुरू करें, इसमें झिझकने की कोई बात नहीं है। अगर किसी शब्द का पर्यायवाची नहीं मिलता है तो वे अंग्रेजी के शब्द को ही देवनागरी लिपि में लिख सकते हैं। अंग्रेजी से हिन्दी लिखने में कोई दिक्कत नहीं है। केवल यह आदत की बात है। हमारी आदत हो गई है कि हम अंग्रेजी भाषा में सोच करके लिख देते हैं। जब हम घर में बोलते हैं तो आदतन हिन्दी बोलते हैं, मगर जब आफिस में काम करते हैं तो अंग्रेजी में करने लगते हैं। यह तो आदत बदलने की बात है और यह धीरे-धीरे बदलेगी। मगर इसमें प्रयास तुरन्त शुरू हो जाना चाहिए। दूसरा सुझाव मैंने यह दिया है कि यहां जो कार्यान्वयन समितियां बनी हैं जैसे एक केन्द्रीय कार्यान्वयन समिति यहां के लोकल शासन की है और एक नगर कार्यान्वयन समिति यहां के सभी केन्द्रीय मंत्रालयों के विभागों को मिलाकर बनाई गई हैं, इनकी नियमित रूप से बैठकें होनी चाहिए। जितने वरिष्ठ अधिकारी हैं वे सब इसमें भाग लेते हैं। इसकी नियमित मीटिंगें होती रहेंगी तो सबको मौका मिलेगा चर्चा करने का। वे एक दूसरे की दिक्कतें समझ सकेंगे, सुझाव दे सकेंगे और सबसे बड़ी बात यह होगी कि जिनका ध्यान इस ओर नहीं है उनका ध्यान अपने आप इधर जाएगा। जब नियमित रूप से तीन महीने में या छह महीने में उनके सामने बैठकों में यह ब्यौरा आता रहेगा कि और विभागों में इसकी क्या प्रगति हो रही है तो उनको अपने यहां इस काम को करने के लिए प्रोत्साहन मिलेगा। इसके विषय में मुझको यहां के अधिकारियों ने और खासतौर से कार्यान्वयन समिति के अध्यक्षों ने आश्वासन दिया है कि वे नियमित रूप से इस मीटिंग को बुलाया करेंगे। और मैं समझता हूं कि इससे हिन्दी के काम को बहुत प्रोत्साहन मिलेगा।

श्री मनुज—प्रोत्साहन की जो बात आपने उठाई है, इसी प्रसंग में एक बात मैं और निवेदन कर दूं कि लोगों की ऐसी धारणा है कि जो अहिन्दी भाषी हिन्दी में काम करने का यत्न करते हैं या सीखते हैं उनकी कुछ व्यावहारिक कठिनाइयां भी होती हैं। इसके लिए ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि कार्यालय में उनके कार्य का समय कुछ इस प्रकार से हो कि शिफ्ट वाले स्टाफ के लोग या और लोग भी नियमित कक्षाओं में बिना असुविधा के जा सकें। दूसरे उन लोगों को जो हिन्दी में कार्य करते हैं, कुछ प्रोत्साहन मिलते हैं किन्तु ऐसा अनुभव किया जा रहा है कि वे प्रोत्साहन पर्याप्त नहीं हैं।

श्री तिवारी—आपने जिस समस्या की ओर ध्यान दिलाया है उस ओर हम लोगों का ध्यान पहले से है। आपने एक बात तो रनिंग स्टाफ के विषय में कही कि जिनकी नियमित ड्यूटी नहीं होती और इसलिए उनको नियमित रूप से कक्षाओं में बैठने का समय नहीं मिलता। उसके विषय में हम लोग यह निर्णय लेने जा रहे हैं कि उनको यह छूट दे दी जाए कि वे अपने अनियमित समय में भी किसी तरह से हिन्दी पढ़ लें। किसी भी साधन से अगर वे हिन्दी पढ़ लेते हैं तो जो भी इंसेंटिव या इनक्रीमेंट वगैरह दिए जाते हैं और स्टाफ को क्लास अटेन्ड करने पर और क्लास अटेन्ड करके परीक्षा पास करने पर जो लाभ मिलते हैं वे लाभ ऐसे स्टाफ को जो तकनीकी है या रनिंग किस्म के हैं उनको केवल परीक्षा पास करने पर दे दिए जाएंगे और उनके लिए क्लास अटेन्ड करना जरूरी नहीं होगा। इससे लोगों को यह प्रोत्साहन मिलेगा कि वे अपने किसी भी साथी के जरिए जो हिन्दी जानता हो या उनको वे सभी सुविधाएं मिल जाएंगी जो नियमित कक्षाओं में किसी और साधन से हिन्दी सीख लें या पत्राचार से सीख लें। उनको वे सभी सुविधाएं मिल जाएंगी जो नियमीत कक्षाओं में बैठकर सीखने वाले कर्मचारियों को मिलती हैं। अभी तक तो प्रोत्साहन केवल इस बात के लिए था कि परीक्षा पास करें। परीक्षा पास करने का तो एक वक्त का एक प्रयास का प्रोत्साहन था और वह स्वभावतः निश्चित समय तक मिलता था और उसके बाद एबजार्ब हो जाता था। लेकिन अब हम लोग इस विषय पर भी विचार कर रहे हैं और मेरा ख्याल है कि जल्दी ही इस पर सरकार का निर्णय हो जाएगा कि केवल परीक्षा पास करने के ऊपर ही नहीं बल्कि नियमित रूप से हिन्दी में काम करने पर भी प्रोत्साहन दिया जाए और इसके लिए भी हम कुछ इनाम या इंक्रीमेंट रखेंगे। नकद पुरस्कार स्टाफ को इस बात के लिए मिलेगा कि वे हिन्दी में निरंतर काम करते रहें।

श्री मनुज—यह महत्वपूर्ण है।

श्री तिवारी—हां, जब तक वे काम करते रहेंगे तब तक उनको बराबर पुरस्कार मिलता रहेगा। इसके लिए व्यवस्था भी करनी पड़ेगी कि कितना काम किस स्टाफ ने हिन्दी में किया। इसकी थोड़ी सी व्यवस्था रखी जाए। इसका थोड़ा सा हिसाब रखा जाए और यह काम विभागाध्यक्षों को ही सौंपा जाएगा और वे अपना अंदाज लगा लेंगे कि अगर किसी स्टाफ ने अपना अधिकतर काम हिन्दी में किया है तो वह इस इनाम का अधिकारी हो जाएगा और बराबर रहेगा, जब तक कि वह हिन्दी में काम करता रहेगा। हम समझते हैं कि इस स्कीम से काफी फायदा होगा और विशेष रूप से अहिन्दी भाषी लोगों को इससे काफी प्रोत्साहन मिलेगा कि वह अंग्रेजी छोड़कर हिन्दी में काम करें।

श्री मनुज—यह चर्चा हिन्दी से संबंधित हुई है अब इससे थोड़ा हटकर आपके विचार हम जानना चाहेंगे। इन द्वीपों में आप सम्भवतः पहली बार आए हैं?

श्री तिवारी—जी हां, पहली बार आया हूं।

श्री मनुज—ये द्वीप आपको कैसे लगे? यहां की किन समस्याओं ने आपका ध्यान आकर्षित किया और आप अपनी प्रतिक्रिया किस प्रकार से व्यक्त करना चाहेंगे? इन द्वीपों के संदर्भ में?

श्री तिवारी—इन द्वीपों का रमणीक सौंदर्य तो ऐसी चीज है जिसके विषय में मैं समझता हूं कि यहां के किसी रहने वाले को "कमेंट्स" की जरूरत ही नहीं है। ये द्वीप बहुत

हों रमणीक और बड़े ही सुंदर स्थान हैं। मैंने केरल में देखा है कि जिस तरह के स्त्री-पुरुष वहां हैं वैसे ही यहां पर चारों तरफ दिखाई देते हैं। साथ-साथ, यहां पहाड़ियां हैं, किसी भी "हिल स्टेशन" का दृश्य यहां पर है। आबोहवा भी हमको बहुत अच्छी लगी। इन द्वीपों का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि ये हमारे देश के आगे के एक तरफ के प्रहरी हैं। हमारे देश से हजार-बारह सौ मील की दूरी पर स्थित ये अंडमान और नीकोबार के द्वीप समूह हैं, इनमें से कुछ द्वीप तो ऐसे हैं जो इंडोनेशिया के ज्यादा पास हैं, हिन्दुस्तान की बनिस्बत। इस दृष्टि से हमारे देश का यह एक बड़ा एक्सटेंशन है, जो बड़ी दूर तक समुद्र में चला गया है। इनकी रक्षा का भी कभी प्रश्न उठ सकता है। इनकी रक्षा के लिए हमें सजग और जागरूक रहना चाहिए। इनकी रक्षा के लिए क्या आवश्यकताएं पड़ेंगी इसके विषय में बहुत काफी सोचने विचारने और पूर्व योजना की जरूरत है। इसके अलावा, इन इलाकों में अभी तक अधिक सुधार भी नहीं हो पाया है। यहां जो लोग आए हैं, उनमें से कुछ व्यापारी हैं। यहां कुछ छोटी-मोटी इन्डस्ट्रीज भी हैं। अभी तक यहां पर ज्यादा सुख-सुविधाएं उपलब्ध नहीं हुई हैं। आर्थिक प्रगति के लिए तो प्राकृतिक संपदा इतनी ज्यादा है कि यदि कायदे से उनका उपभोग किया जा सके तो काया पलट हो जाए। यहां के जंगलों का लाभ उठाया जाना चाहिए और यहां पर जो साधन उपलब्ध हैं उनको ले करके यहां उनकी इंडस्ट्रीज लगाई जानी चाहिए, चाहे छोटी-छोटी इंडस्ट्रीज ही लगें, जिससे कि यहां के रहने वालों को रोजी भी मिल सके और यहां की व्यवस्था भी अच्छी हो सके और उसी के साथ-साथ देश का भी फायदा हो सके। इस व्यवस्था की मुझे बड़ी आवश्यकता मालूम पड़ी। इस विषय में सरकार की ओर से काफी प्रयत्न हुआ है। मैंने आज एक फार्म देखा है जहां पर कि तरह-तरह के मसाले और तरह तरह के और वृक्ष उगाने की चेष्टा हो रही है जिससे कि यहां की कृषि को बड़ा फायदा होगा। एक बड़ी चीज मेरी समझ में यह आई कि यहां की प्रगति में और तेजी लाई जानी चाहिए, थोड़ा और ध्यान देने की आवश्यकता है।

वह यह है कि यहां के जो आदिमनिवासी हैं, कुछ जातियां तो ऐसी हैं जिनसे हमारा किसी प्रकार का सम्पर्क नहीं है जिनको कि "हास्टाइल" या "हिंसू" समझा जाता है ऐसी हिंसू अथवा आक्रामक जनजातियों को भी सभ्यता के सम्स्पर्श में लाना होगा। ये जनजातियां लुप्त होती जा रही हैं। इनको भी हमको सिविलाइजेशन के दायरे में लाना चाहिए। उनकी सबसे बड़ी समस्या तो यह है कि वे खत्म होती जा रही हैं। कुल सौ, दो सौ, तीन सौ, चार सौ संख्या की दो तीन जनजातियां रह गई हैं और वे भी खत्म हो जाएंगी अगर उनके इलाकों के ऊपर "एनक्रोचमेंट" होता रहेगा और यदि उनको बीमारियों से बचाने के लिए और सभ्य बनाने के लिए पूरा प्रयत्न नहीं हुआ। इसलिए इस विषय में भी बड़ी जागरुकता की जरूरत है और मेरे ख्याल से इस पर विशेष ध्यान देने की जरूरत है।

श्री मनुज—बहुत, बहुत धन्यवाद। आज आपसे बड़ी ज्ञान-वर्द्धक और रोचक चर्चा हुई है और इसके लिए हम आपके कृतज्ञ हैं। धन्यवाद। ☐ ☐ ☐

परिचर्चा

भाषा और राष्ट्रीय एकीकरण

(राष्ट्रीय एकीकरण के कई उपादान होते हैं—जैसे संस्कृति, परम्परा, जातिगत एकता, भौगोलिक सीमा, भाषा आदि। इनमें भाषा अत्यन्त महत्वपूर्ण उपादान है पर केवल भाषा ही राष्ट्रीय एकीकरण का साधन है–ऐसा भी नहीं कहा जा सकता। अंग्रेजी दैनिक "द इंडियन एक्सप्रेस" मई 28, 1981 के अंक में श्रीमती सुनन्दा सान्याल का एक लेख छपा था–"डज लैंग्वेज यूनाइट पीपुल?" उसमें बड़े ही निराले तर्क दिए गए हैं। हमारा उनसे मतभेद हो सकता है पर वे हैं विचारणीय तर्क। यहां उस लेख का हिन्दी अनुवाद तथा उसके संबंध में अन्य पांच विद्वानों के विचार प्रस्तुत हैं जो क्रमशः मराठी, गुजराती, तमिल, हिन्दी तथा जापानी भाषी हैं।

(1) सुनन्दा सान्याल

हिन्दी को संघ की एक मात्र राजभाषा बनाने का संविधान का निर्णय इस प्रचलित लेकिन गलत धारणा पर आधारित है कि एक समान भाषा ही बहुभाषा भाषी लोगों को एकता के सूत्र में बांधती है। यह सर्वत्र देखने में आया है कि भाषागत भिन्नताओं के होते हुए भी लोगों में एकता की भावना बनी रहती है। भारत में भी भाषाई अनेकता के बावजूद सांस्कृतिक सामंजस्य की भावना, अंग्रेजी बोलने वाले भारतीयों और विश्व के अन्य अंग्रेजी भाषी लोगों के बीच पाए जाने वाले सामंजस्य की तुलना में, अधिक है (आर. वी. ले पेज : राष्ट्रभाषा का प्रश्न)। यदि भाषा ही एकता की भावना पैदा करने वाली शक्ति होती तो अंग्रेजी बोलने वाले भारतीय उन लोगों के विरुद्ध संघर्ष न करते जिनकी मातृभाषा अंग्रेजी है।

न ही यह सही है कि अंग्रेजी भाषा ने भारतवासियों को विदेशी शासकों के खिलाफ एकता के सूत्र में बांधा। यह एक अन्य प्रचलित दलील है जिसे अभी तक सामाजिक शास्त्र या भाषा विज्ञान की दृष्टि से कोई मान्यता प्राप्त नहीं हुई है। यद्यपि नेहरू और जिन्ना जैसे भारतीय नेताओं को अपनी अंग्रेजी भाषा की प्रवीणता पर पूरा गर्व था, लेकिन इसके बावजूद वे आपस में मिलकर नहीं चल पाए। इस बारे में युक्तिसंगत तर्क तो यह है कि स्वाधीनता से वंचित होना ही भिन्न-भिन्न भाषा बोलने वाले भारतीयों के लिए एक मत होने का साधन बना और उन्होंने अंग्रेजी जैसी सामान्य भाषा के माध्यम से अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष करने की ठानी।

आमतौर पर यह देखा गया है कि एक जैसी संस्कृति वाले लोगों के हित एक समान होते हैं। भाषा संस्कृति से जुड़ी रहती है। भाषा संस्कृति को प्रतिबिंबित करती है। लेकिन भाषा अपने आप में संस्कृति नहीं है। आईना अक्स नहीं बन सकता। भाषा न तो कोई ऐसी कला है और न ही ऐसी आस्था जो कि मानव-शास्त्र की परिभाषा में किसी समुदाय या जाति की विशिष्ट संस्कृति की लक्षणात्मक प्रतीक हो। गो-रक्षा में समान आस्था रखने के कारण भिन्न-भिन्न भाषाएं बोलने वाले लोग "गो-रक्षा समिति" बना लेते हैं। ऐसे ही समान विश्वास के कारण भिन्न भाषा-भाषी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना करते हैं। इससे भी कहीं अधिक भाषागत भिन्नता रखने वाले लोग अंतर्राष्ट्रीय कम्यूनिस्ट पार्टी की स्थापना कर लेते हैं। भाषाई विषमता समान विचारधारा वाले लोगों को अलग नहीं करती है।

हित एक होने पर लोग अपने विचारों को व्यक्त करने के लिए जैसे-तैसे एक सामान्य भाषा, चाहे वह खिचड़ी भाषा ही क्यों न हो, तैयार कर लेते हैं। इसके विपरीत की स्थिति बहुत कम देखने में आती है। पेज ने कहा है : "यह जरूरी नहीं है कि भाषागत एकता होने के कारण आस्ट्रिया और जर्मनी के वासियों के हित एक हो जाएं।" असल में भाषाई समानता कई बार पृथकता का कारण बन जाती है। अंग्रेजों और अमरीकियों की भाषा एक है, फिर भी वे बंटे हुए हैं। इस विरोधाभास के पीछे सच्चाई यह है कि अटलांटिक के दोनों छोरों पर बोले जाने वाले मुहावरे ऊपर से तो एक जैसे लगते हैं परन्तु वे बहुत हद तक अलग-अलग सांस्कृतिक परम्पराओं से उत्पन्न हुए होते हैं। इसलिए वाक्‌व्यवहार आसानी से बोधगम्य होते हुए भी एक दूसरे को सही रूप में समझने में सहायक सिद्ध नहीं हुआ।

यह विचारणीय है कि क्या बंगला भाषा ने तत्कालीन पूर्वी पाकिस्तानियों को पश्चिम पाकिस्तान के खिलाफ एक सूत्र में बांधा था? यह ध्यान देने योग्य बात है कि शुरू में बंगाली और गैर-बंगाली मुसलमानों ने एक होकर भारत का विभाजन करवा कर धर्मतंत्रीय पाकिस्तान की स्थापना की थी। 1933 में रहमत अली ने इस नये देश का नाम "दीनिया" (जो कि "इंडिया" शब्द का वर्ण विपर्यास है) तजवीज किया था और सर्वसम्मति से केवल उर्दू को ही "दीनिया" की भाषा बनाया जाना था। बाकी भाषाएं, जिनमें बंगला भी शामिल थी, "हिन्दू भूमि" (रहमत अली के शब्दों में) की ही भाषाएं होनी थीं।

अब प्रश्न यह है कि पाकिस्तान की स्थापना के बाद, पूर्वी पाकिस्तान के बंगालियों ने उर्दू को अपने ऊपर थोपी हुई भाषा क्यों माना था? इस का उत्तर यह है कि उन्होंने महसूस किया कि अन्ततः उर्दू का बोलबाला हो जाने पर वे अपने सामाजिक अधिकारों से वंचित हो जाएंगे। कारण यह कि भाषा सामान्यतः सामाजिक नियंत्रण का एक माध्यम होती है। जब आप कुछ लोगों को इस माध्यम से वंचित कर देते हैं तो उनके लिए हनन की भावना ही एकीकरण का साधन बन जाती है।

'राष्ट्रीय राजभाषा' नीति निर्धारण करने वालों का उद्देश्य कितना ही सदाशयपूर्ण क्यों न हो, किन्तु यदि वह यह नहीं समझते हैं कि भाषागत हनन क्या है और इसके क्या परिणाम हो सकते हैं, तो वह ऐसी भावना को पैदा करते हैं जिसे पं. नेहरू के शब्दों में "विघटन की प्रवृत्ति" कहा गया है। एक बार फिर हम यह सोचें कि विभाजन से पूर्व हिन्दू और मुसलमान बंगालियों के आपसी संबंध कैसे थे? उनको एक सूत्र में बांधना तो दरकिनार, वास्तव में बंगला भाषा ने दोनों बंगलाभाषी सम्प्रदायों के बीच धार्मिक खाई को और बढ़ाया। समूचे तौर पर उस समय के मुसलमान बंगला को हिन्दू धर्मशास्त्रों की भाषा संस्कृत के इतना निकट समझते थे कि वे उसे अपनी मातृभाषा नहीं मानते थे। हाल ही में एक बंगला दैनिक में एक मुसलमान लेखक ने लिखा है : "विभाजन से पहले बंगाली मुसलमान हिन्दुओं को ही बंगाली मानते थे, जब कि वे अपने आपको मुसलमान कहलाना पसन्द करते थे ..... 'विशुद्ध बंगला' को इतना नापसन्द किया जाता था कि मुल्लाओं और मौलवियों ने बंगाली मुसलमानों की आम बोलचाल की भाषा पर अरबी और फारसी शब्द जड़ दिए। ...वस्तुतः शिक्षित मुसलमान परिवार बंगला की अपेक्षा उर्दू और अंग्रेजी का प्रयोग ज्यादा पसन्द करते थे (हुमायूं सत्तार-"आजकल" 13 मई)।

1947 में देश का विभाजन हुआ और रातों रात हालात बदल गए। पश्चिम पाकिस्तान के हुक्मरान तबके ने पूर्वी पाकिस्तान के बंगालियों को राजनीतिक शक्ति से वंचित कर दिया। देश के दोनों हिस्सों में एक ही धर्म हो जाने के बाद, अब वंचक और वंचित के दरमियान भाषा का ही एक भेद चिन्ह रह गया था। वंचित के लिए यह विसंगत था कि "दीनिया" की धर्म विधि में उर्दू का क्या दर्जा है। उसके लिए तो महत्वपूर्ण बात यह थी कि वह उस जुबान में कभी भी उतनी महारत हासिल नहीं कर सकता जितनी वंचक को हासिल थी। दूसरी ओर, क्योंकि अब हिन्दू बीच में से हट गए थे, इसलिए वे बे-रोक-टोक अपने आपको पहले बंगाली और बाद में मुसलमान समझ सकता था। इस बात का भी अब कोई महत्व नहीं रह गया था कि बंगला संस्कृतनिष्ठ भाषा है। इन हालात में ऐसा प्रतीत होता था कि उर्दू को एकमात्र राष्ट्रीय राजभाषा के रूप में थोपा जा रहा है। बंगाली मुसलमानों ने इसका विरोध किया।

अंग्रेजी की भांति, बल प्रयोग के द्वारा तो जनता पर कोई अन्य भाषा थोपी जा सकती है, परन्तु लोगों को इस तर्क का कायल नहीं किया जा सकता कि कोई एक भाषा किसी दूसरी परायी भाषा से कम विदेशी है या उसे सीखना ज्यादा आसान है। मिसाल के तौर पर किसी तेलगू या तमिल भाषी के लिए यदि अंग्रेजी परायी भाषा है तो हिन्दी भी उसकी अपनी भाषा नहीं है। यह एक साफ और सीधी बात है। यह कहना केवल एक वाक्छल ही है कि भारतीय भाषा होने के नाते हिन्दी पर अधिकार प्राप्त कर लेना अंग्रेजी के मुकाबले में अधिक आसान होना चाहिए। इस तर्क में कोई बल नहीं है।

दूसरी ओर यह स्पष्ट है कि अब देश में विदेशी शासक नहीं हैं, जो कि भारतीयों के अंग्रेजी भाषा के अल्प ज्ञान का लाभ उठा सकें। यह भी स्पष्ट है कि हिन्दी की अपेक्षा अंग्रेजी द्वारा कहीं अधिक विशाल समाज पर प्रभुत्व रखा जा सकता है। यही कारण है कि आज कोई भी व्यक्ति अपने बच्चों को अंग्रेजी पढ़ाने के लिए बेहिसाब खर्च करने में संकोच नहीं करता।

हिन्दी के समर्थकों के लिए कौतूहलपूर्ण बात यह है कि कोई भी राष्ट्रीय दल एकमात्र राष्ट्रीय राजभाषा के रूप में हिन्दी के प्रश्न को लेकर अपना राजनीतिक भविष्य दांव पर लगाने को तैयार नहीं है। इसका कारण स्पष्ट है जो राजनीतिक दल केन्द्रीय सत्ता में आना चाहता है, वह यह कभी नहीं चाहेगा कि उस पर क्षेत्रीयता का धब्बा लग जाए।

वास्तव में सभी उभरते हुए बहुभाषी राष्ट्रों के लिए राष्ट्रीय राजभाषा का चुनाव एक बड़ी जटिल समस्या है। भाषाशास्त्री इस समस्या की चर्चा "राष्ट्रीयता" और "राष्ट्रवाद" के रूप में करते हैं। ये दोनों संकल्पनाएं राजभाषा नीति निर्धारकों के समक्ष परस्पर विरोधी दावे रखती हैं। राष्ट्रध्वज, राष्ट्रगान, राष्ट्रीय राजभाषा जैसे बाह्य चिह्नों के माध्यम से "राष्ट्रीयता" अपने आपको उद्घाटित करती है। दूसरी ओर "राष्ट्रवाद" सरकारी प्रशासन तंत्र की देख-रेख में शिक्षा, स्वास्थ्य, क्षेत्रीय-यातायात, वित्तीय व्यवस्था के नियंत्रण द्वारा उद्घाटित होता है। जहां "राष्ट्रवाद" से कार्य कुशलता बढ़ती है, वहां "राष्ट्रीयता" एकता की व्यापक भावना उत्पन्न करती है। यदि इनमें से कोई भी एक हद से बढ़ जाए तो शासन तन्त्र का संतुलन बिगड़ सकता है।

राष्ट्रीय राजभाषा का चुनाव करने में शासक वर्ग उस तत्व का सहारा लेता है, जिसे भाषा शास्त्री "महान परंपरा" कहते हैं। इस महान परंपरा की व्याख्या कानून; शासन, धर्म, इतिहास आदि ऐसे सांस्कृतिक तत्वों के आधार पर की जाती है जो शासन के विभिन्न अंगों को एक संगठित रूप देने में सहायक होते हैं। यदि कोई एक मात्र देशी भाषा ऐसी महान परंपरा की प्रतीक समझी जाये तो कोई समस्या खड़ी नहीं होती और उसी भाषा को राष्ट्रीय राजभाषा का दर्जा दिया जा सकता है। परन्तु यदि किसी देश में "महान परंपरा" की धरोहर होने का दावा बहुत सी देशी भाषाएं करती हों, तो समस्याओं का कोई अन्त नहीं। भारत की यही स्थिति है। इसमें संदेह नहीं कि क्षेत्रीय स्तर पर ऐसी भाषाओं को राजभाषाओं का दर्जा दिया जा सकता है, किन्तु राष्ट्रीय स्तर पर अनेक भाषाओं को राजभाषाओं के रूप में नहीं चुना जा सकता। राष्ट्रीय राजभाषा के रूप में, जिस भाषा का भी चुनाव किया जाएगा, वह सदा ही अभिजात शासक वर्ग के सबसे शक्तिशाली गुट द्वारा प्रयोग की जाने वाली या उस गुट द्वारा आसानी से समझी जाने वाली भाषा होगी। परन्तु इस चयन प्रक्रिया से विवाद के लिए सभी द्वार खुल जाते हैं। चुनी हुई भाषा के माध्यम से कुछ लोगों के हाथ में सामाजिक नियंत्रण आ जाता है और उसी अनुपात में कुछ अन्य वर्ग इस शक्ति से वंचित हो जाते हैं। हनन की यह भावना समान हित द्वारा जुड़े समाज को विखण्डित कर देती है और उसके उतने ही टुकड़े हो जाते हैं जितनी कि "महान परंपरा" का दावा करने वाली भाषाएं होती हैं। भारत की स्थिति में यह

द्विविषय उजागर होता है। उदाहरणार्थ बिहार के मैथिल अपनी भाषा को प्रदेश की राजभाषा बनाने की मांग कर रहे हैं।

राष्ट्रीय स्तर पर सह-राजभाषा के रूप में अंग्रेजी सभी भारतीयों के लिए एक समान असुविधाजनक है और यह समान क्षति एकता की भावना को उत्पन्न करती है। आज जब कि अंग्रेज यहां से हट चुके हैं तो, भाषागत विशेषाधिकार की आकांक्षा करने वालों को छोड़कर, कोई भी व्यक्ति अंग्रेजी को थोपी हुई भाषा नहीं कहता। अब यह सर्वमान्य है कि पर्याप्त सुविधा दिये जाने पर प्रत्येक व्यक्ति अंग्रेजी सीख सकता है और साथ ही हिन्दी की अपेक्षा अंग्रेजी भाषा सामाजिक नियंत्रण के कहीं अधिक अवसर प्रदान कर सकती है।

□ □ □ □ □

(2)—डा० प्रभाकर माचवे

दिल्ली से 7 जुलाई को भेजा पत्र 10 अगस्त को कलकत्ते में इस लिये मिला कि पता देवनागरी में था। गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग के पत्र के साथ किन्हीं सुनन्द या सुनन्दा सान्याल के इण्डियन एक्सप्रेस (नई दिल्ली मई, 23, 1981) में छपे लेख "डज लैंग्वेज यूनाइट पीपुल" में तर्क यह दिया गया है कि एक ही भाषा वाले लोग आपस में क्यों लड़ते हैं जैसे कम्युनिस्ट लोग कई देशों में अलग-अलग भाषायें बोलते हैं, ब्रितानवी लोग अमरीकियों से संस्कृति में क्यों भिन्न हैं? जैसे बंगाली बोलने वाले मुसलमान उर्दू बोलने वाले मुसलमानों से अलग हुए, पर "दीनिया" की भाषा उर्दू अकेली नहीं रही। कम्युनिस्ट लोग कई देशों में अलग-अलग भाषायें बोलते हैं, उनके विश्वास एक से हैं। भाषा-भेद से उनकी एकता कम नहीं होती। 'गोरक्षा-समिति' और 'भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस' में अनेक भाषाओं के लोग एकजुट होकर काम करते हैं। आज भी भारत में ऊंची, महंगी अंग्रेजी शिक्षा के पीछे लोग लगे रहते हैं। दक्षिण भारतीयों के लिए क्या हिन्दी क्या अंग्रेजी दोनों एक सी विदेशी हैं, इत्यादि-इत्यादि।

ये सारे पिटे-पिटाये तर्क हैं। हिंदी भारत की राष्ट्र-भाषा, राजभाषा, संपर्क भाषा आज नहीं बनी। यह सवाल अंग्रेज बहादुर की कम्पनी सरकार के बाद ही पैदा हुआ। जब इस देश में मुस्लिम या विरतानवी राज नहीं था तब भी तो उत्तर भारत के लोग रामेश्वरम् की तीर्थ यात्रा करते थे और दक्षिण भारत के लोग काशी, मथुरा, बदरीनाथ जाते-आते थे। क्या वे सब संस्कृत बोलते थे? या उनका बिना भाषा के ही काम चल जाता था? हिन्दी न नामदेव की मातृ-भाषा थी, न स्वातितिरुनाल की, न गुरू नानक की। किन्तु सभी ने उसमें कविता की। हिन्दी नाट्य-संवाद "अंकिया नाट" आसाम में मिलते हैं और तंजौर में लिखे गये कोरवंजी तमिल में। क्या कारण है कि सत्यजित राय "शतरंज के खिलाड़ी" फिल्म हिन्दी में बनाते हैं? और अखिल भारतीय स्तर पर अब प्रमाण मिले हैं कि बंकिम चन्द्र, केशवचंद सेन, विवेकानंद, रवीन्द्रनाथ, सुभाष चन्द्र बोस सबने हिन्दी में भाषण दिये हैं और उसके पक्ष में वक्तव्य दिये हैं। महाराष्ट्र में, तिलक, सावरकर, पराड़कर, विनोबा, काका कालेलकर, दादा धर्माधिकारी आदि अनेक हिन्दी सेवक मिलेंगे। और यह सूची सभी प्रदेशों में हिंदी बोलने, लिखने तथा उसमें काम करने वाले हजारों सामाजिक कार्यकर्ताओं और विचार नेताओं तक बहुत लम्बी बन सकती है। डा. ज्ञानवती दरबार और डा. विलास गुप्ते के दो शोध ग्रन्थ छपे हैं "राष्ट्रीय नेताओं की हिन्दी सेवा और अहिन्दी भाषियों का हिन्दी को योगदान।" डा. मलिक मुहम्मद ने इसी विषय पर अनेक लोगों के लेखों का संग्रह किया है। पर यह सब सामग्री हिन्दी में है। सुनन्द सान्याल (यदि छद्म नाम न हो तो) हिन्दी पढ़ लेते/लेती हैं या नहीं, हम नहीं जानते। उन्हें पहले यह सब जानकारी अंग्रेजी में देनी होगी।

हिन्दी-विरोधी सदा विदेशियों के, अंग्रेजी या अमरीकी भाषा वैज्ञानिकों के ही उद्धरण क्यों देते हैं। राजगोपालाचारी ने आरम्भ में हिन्दी के बारे में क्या कहा था। डा. सुनीति कुमार चटर्जी का कराची हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अधिवेशन का भाषण है 'समानासु हिन्दी प्रथमा'। डा. रघुवीर पंजाब से थे। राहुल सांकृत्यायन या रामचन्द्र वर्मा या सिद्धेश्वर वर्मा का भाषा विज्ञान को अवदान लोग क्यों भूल जाते हैं? असली बात यह है कि दोनों दो तरह के लोग हैं : एक तो स्थिति स्थापकतावादी और दूसरो अमूल्य परिवर्तनवादी। पहले वर्ग के लोग अंग्रेज बहादुर जैसी साम्राज्यशाही, सड़ी नौकरशाही और उसकी जंग खायी हुई कल-पुर्जों की मशीनें छोड़ गए, वही चलाना चाहते हैं। उससे उनका वर्ग स्वार्थ बंधा है। दूसरे वर्ग के लोग जो समाज के निचले तबके से एकदिल होना चाहते हैं वे हिन्दी-हिन्दुस्तानी के पक्ष में हैं।

हाल में अभी मराठी साप्ताहिक साधना में मैंने मधु लिमये का एक लेख पढ़ा कि हिन्दी के बदले अंग्रेजी का रोग बढ़ रहा है। लोग सादगी को बुद्धूपन समझ रहे हैं। नई जीवन पद्धतियां (लाइफ स्टाइल्स) अपनाई जा रही हैं। जैसे परिवार टूटते हैं, गांव से लोग शहर की ओर खिंचकर चले आते हैं जैसे-जैसे नए आर्थिक हितों के समान-धर्म (चोर-चोर मोसेरे भाई) बनते जाते हैं, वैसे ही वैसे उनकी भाषा के प्रति वफादारी भी बदलती जाती है। "करंट" अंग्रेजी साप्ताहिक में "अरे भाई" कालम चलता था। अब "साप्ताहिक हिन्दुस्तान" में मनोहर श्याम जोशी "नेताजी कहिन" में अर्ध अंग्रेजी पढ़े नए अर्ध गंवार नेता की भाषा का नमूना पेश कर रहे हैं। यह सब लोग भूल रहे हैं कि मौखिक से लिखित भाषा बनने की प्रक्रिया में संस्कृतीकरण (एम. एन. श्रीनिवास) के साथ-साथ प्राकृतीकरण (हाईब्रिडाइजेशन) भी होता है। "हाब्सन जाब्सन कोश" में कितने हिन्दुस्तानी शब्द अंग्रेजी में रच-पच गये।

भाषा एक प्रक्रिया है। 70 प्रतिशत निरक्षर महादेश भारत में जहां फिल्म द्वारा पैसा कमाना होता है (और वह आज नम्बर दो का उद्योग है भारत में,- इसका अर्थ यह नहीं कि 'दो नम्बरी' पैसा वहां ज्यादा है) वहां हिन्दी का ही आश्रय लिया जाता है। दक्षिण में तमिलनाडु में हिन्दी का विरोध भले ही होता हो, लेकिन फिल्में हिन्दी में खूब बनती हैं। अभिनेत्रियां भी वहां से खूब हिन्दी में आई, चमकीं। बैजयंती

माला, हेमामालिनी, रेखा, आदि। हिन्दी फिल्मों में सदा श्रेष्ठ अभिनेत्रियों की मातृभाषा हिन्दी नहीं रही। चाहे वह जमुना, कानन हो, मीनाकुमारी हो या नरगिस दत्त, स्मिता पाटिल या अन्य कोई। यह बात मैंने बहुत पहले एक लेख में पूना से निकलने वाली राष्ट्र भाषा की पत्रिका 'राष्ट्रवाणी' में लिखी थी।

किसी देश की एकता अकेली भाषा पर निर्भर नहीं रहती। पर संस्कृति का सम्बंध भाषा से बहुत गहरा है। अंग्रेज यहां से 1947 में अपनी सत्ता छोड़ गये पर उनकी भाषा की मोहिनी अब भी बुरी तरह महानगरों में छाई हुई है। परन्तु भारत का अर्थ केवल दिल्ली, बम्बई, कलकत्ता, मद्रास का भद्रजनों की वह बस्ती नहीं जो मातृभाषा भूलकर केवल अंग्रेजी में ही अपना सारा काम करती है। वह केवल एक 'परोपजीवी' (पैरेसाइट) वर्ग है। जरा नीचे उतरने पर पता चलेगा कि भारत में सबसे अधिक अखबार हिन्दी के ही छपते-बिकते हैं। अंग्रेजी के बाद नम्बर दो संख्या में सर्वाधिक किताबें हिन्दी में ही छपती हैं। हिन्दी की ही पाठक संख्या, नाटक-सिनेमा की दर्शक-संख्या, रेडियो-टी. वी. की श्रोतृ संख्या सर्वाधिक है। एक सौ बीस विश्वविद्यालयों में से अब 30 से अधिक में हिन्दी माध्यम से उच्चतम शिक्षा प्राप्त की जा सकती है।

हिन्दी में आज सर्वाधिक अनुवाद अन्य भारतीय भाषाओं से हो रहे हैं--पत्र-पत्रिकाओं में, पुस्तकों में, मंचों पर नाटकों में, जन-संचार माध्यमों में, हिन्दी अकादमियों में, और संस्थाओं द्वारा। प्रत्येक मंत्रालय का एक हिन्दी विभाग है जिसमें सारे विधि-विधान, नियम-उपनियम हिन्दी में अनूवादित किये जा रहे हैं। प्रगति संतोषजनक चाहे न हो, फिर भी विदेश मंत्रालय को लगाकर गृह मंत्रालय तक, आर्थिक मामलों के मंत्रालयों से लगाकर शिक्षा-संस्कृति तक सब जगह ही मंत्रालयों की हिन्दी प्रकाशन समितियां हैं। पत्रिकाएं हैं। हिन्दी अधिकारीगण हैं। बैंकों में, बाजारों में, किसानों और मजदूरों में, घर-घर में और यात्रा-संचार-पर्यटन स्थानों में हिन्दी पहुंच चुकी है। जहां पर पहले कभी नहीं पहुंची थी। यह सब स्वेच्छा से हुआ है। किसी पर हिन्दी 'थोपी' नहीं गई है न 'लादी' गई है और न 'आरोपित' की गई है। केन्द्रीय साहित्य अकादमी पहले 23 वर्षों तक अंग्रेजी में त्रैमासिक पत्रिका चलाती थी। अब यह साथ-साथ 'हिन्दी का समकालीन भारतीय साहित्य' त्रैमासिक भी चलाने लगी है। साहित्य अकादमी स्वायत्त संस्था है। वह ऐसा क्यों करती है? पहले केवल 'इंडियन होराइजन' था अब 'गगनांचल' भी छपने लगा है, क्यों?

अधिकांश अच्छी हिन्दी पत्र-पत्रिकायें अहिन्दी प्रदेशों से प्रकाशित हो रही हैं। जैसे बम्बई से धर्मयुग और अन्य पत्रिकायें। हैदराबाद से 'कल्पना' निकलती थी, कलकत्ता से 'विशाल भारत' और 'नया समाज'। श्रीनगर से 'श्रीराजा', पंजाब से 'जागृति'। मद्रास से 'चन्दामामा', केरल से 'युगप्रभात' पाक्षिक चलता था। ऐसे पचासों नाम हैं। यदि अहिन्दी प्रांतों में हिंदी का प्रेम न होता तो ये सब क्यों छपते ?

विज्ञापन का क्षेत्र आज सारा हिन्दी से भरा है। अमीन सयानी हों या तबस्सुम सारे प्रोग्रामों की घोषणाएं हिंदी में होती हैं। रिकार्डों पर हिन्दी में इबारत छपती है। वस्तुओं के कार्टन और डिब्बों पर हिन्दी में लिखावट होती है। सारा संतति-निरोध का, साक्षरता प्रसार का, योजना प्रचार का कार्यक्रम सबसे अधिक हिन्दी में होता है। सेना की बहुत सी कार्रवाइयां हिन्दी में होती हैं। वायु सेवा और रेल सेवा, नौवहन और ट्रकों से माल ढुलाई का सारा कामकाज अधिकतर उन लोगों द्वारा होता है जो अंग्रेजी से अधिक भारतीय भाषायें ही जानते हैं।

सुनंदा सान्याल के लेख की सिर्फ एक ही बात सच है---अंग्रेजी से सबको यह लगता है, लगता रहेगा कि हम सब समान रूप से "पूंछ कटे हैं"। सबको समान "असमर्थता" रहेगी। यह कौन सा तर्क है? "तेरी नाक सुन्दर है, मैं अपनी भी नाक काट लूं और तेरी भी" ऐसा ही यह तर्क है। सान्याल का लेख तर्क की कसौटी पर नहीं टिकता। स्वार्थियों के लिए कुछ भी तर्क के लिए तोड़ा-मरोड़ा जा सकता है।

हिन्दी का भविष्य उज्ज्वल है, क्योंकि वह हिन्दुस्तान की बहुसंख्यक जनसाधारण की भाषा है।

□ □ □

(3) गुलाबदास ब्रोकर

भाषा की समस्या सदा ही बड़ी महत्वपूर्ण समस्या रही है। भारत में इस समय इस समस्या का व्यावहारिक रूप यह है कि इस देश में विभिन्न भाषाएं हैं। इस प्रकार की भाषाई विभिन्नता अपने आप में कोई पेचीदगी नहीं पैदा करती। दिक्कत उस समय आती है जब कुछ भाषाओं के समर्थक यह दावा करने लगते हैं कि उनकी ही भाषा सर्वोत्तम और सर्वगुण संपन्न है और कोई अन्य भाषा राष्ट्रभाषा होने की भूमिका नहीं निभा सकती। भाषागत अनेकता की यह स्थिति हमारे देश में बहुत लम्बे समय से चली आ रही है। परन्तु इस समस्या ने भयंकर रूप तब से धारण किया जब भाषा के आधार पर प्रांतों का विभाजन किया गया, जिसके फलस्वरूप एकता की निस्बत अनेकता की भावना को अधिक बल मिला और क्षेत्रीय भाषाओं को पूर्ण रूप से सभी स्तरों पर शिक्षा का माध्यम बनाने की मांग ने जोर पकड़ना शुरू किया। एक मत तो यह है कि ऐसा करने से देश बंट जाएगा और उसका विघटन होने लगेगा। कुछ अन्य यह कहते हैं कि इससे जनता में एकता, विश्वास और आत्मसम्मान की नई भावना उत्पन्न होगी और साथ ही जागृति भी आएगी।

भाषा समस्या के अनेक पहलू हैं और इन्हें देखने के भी अनेक ढंग हैं। परन्तु इस समय हमारे सामने विषय विशेष यह है कि क्षेत्रवाद और उससे जुड़ी उग्र प्रवृत्ति देश में विभिन्न भाषाएं होने की वजह से है या कि यह भाषागत कट्टरपन, समाज में पिछले कुछ वर्षों से उभरने वाले पृथकतावाद की देन है। मैं नहीं मानता कि भाषागत अनेकता ने पृथकतावाद और भाषागत राजनीतिक अवसरवाद को जन्म दिया है। 30 वर्ष पूर्व भी भारत में ये सभी भाषाएं थीं। किन्तु बहुत थोड़े लोग अपनी भाषा के कारण

स्वयं को श्रेष्ठ और भाग्यवान और दूसरों को तुच्छ और असम्पन्न मानते थे। सभी भारतवासी अलग-अलग भाषाएं बोलने और लिखने के बावजूद यह महसूस करते थे कि वे एक ही देश के रहने वाले हैं और उनकी सर्वोच्च निष्ठा देश के ही प्रति थी। भाषा या क्षेत्रीयता देश भक्ति में बाधक नहीं हुई। राजगुरू, भगत सिंह और सुखदेव एक साथ विदेशी शासन से लड़ सकते थे और वे सभी समान उत्साह और गर्व के साथ फांसी के फंदे का स्वागत कर सकते थे। आज जो क्षेत्रवादी महत्वाकांक्षाएं और स्पर्धाएं देश में दिखाई देती हैं उनके लिए भारत में भाषागत अनेकता को दोषी ठहराया सही नहीं है।

भाषा, रीति-रिवाज, रहन-सहन तथा आचार-विचार में विविधता के कारण भारत के सांस्कृतिक स्वरूप में भी एक विशेष प्रकार की विविधता आई है जिसके कारण भारतीय जीवन में एक प्रकार का वैविध्य उत्पन्न हुआ है और इस सम्पूर्ण विविधता के बीच भारत की सांस्कृतिक परम्परा के रूप में एकता की एक धारा प्रवाहित हुई है। हम अज्ञानवश यह कह देते हैं कि अंग्रेजों ने व्यापक रूप से भिन्न-भिन्न लोगों के इस छिन्न-भिन्न देश को एक राष्ट्र बना दिया। किन्तु ऐसा कहते समय हम यह भूल जाते हैं कि अंग्रेजों के भारत में आने से पहले भी भारत सांस्कृतिक एकता के एक सूत्र में बंधा हुआ था। संस्कृत भाषा सांस्कृतिक एकता एवं बौद्धिक सम्पर्क का आधार थी। उच्चतम प्रकार का चिंतन, अध्ययन तथा साहित्य-सृजन एक अखिल भारतीय संवृति थी और इस अखिल भारतीयता के क्षेत्र में क्षेत्रीयता की कोई दीवार नहीं खड़ी थी। वास्तव में समस्या यह है कि क्षेत्रीय भाषाओं के अपने-अपने स्थान पर सम्पन्न और समृद्ध होते हुए भी यदि देश को एक सामान्य सम्पर्क भाषा के सूत्र में नहीं बांधा जाता तो यह महान राष्ट्रीय इकाई बनी नहीं रह पाएगी चाहे यह इकाई अपने गौरवपूर्ण इतिहास, समृद्ध और चिरकालीन परम्परा पर ही क्यों न आधारित हो। डाक्टर संकालिया के अनुसार भारतीय इतिहास में महानता के ऐसे युग रहे हैं जब सम्पूर्ण देश को एक सम्पर्क-सूत्र में जोड़ने वाली एक सामान्य भाषा थी। भले ही यह भाषा प्राचीन काल में संस्कृत रही हो अथवा मध्य काल में फारसी और उसके बाद आधुनिक काल में अंग्रेजी ही क्यों न सही। किन्तु इतना तो निश्चित है कि किसी एक सम्पर्क भाषा के एकीकारी प्रभाव के बगैर भारत विखण्डित तथा भिन्न-भिन्न भागों में विभाजित हो सकता है। अतः आज भारत के समक्ष सर्वाधिक प्रासंगिक तथा महत्वपूर्ण प्रश्न एक ऐसी भाषा अपनाने का है जो पूरे देश की सम्पर्क भाषा के रूप में स्वीकार्य हो। यह तभी सम्भव होगा जब क्षेत्रीय स्तर पर भाषागत श्रेष्ठता के दावों को भूल कर एक सचेत तथा सर्वमान्य निर्णय किया जाए कि वह कौनसी भाषा होगी जो कि अंतर्क्षेत्रीय सम्पर्क का सक्षम और समुचित माध्यम बन सके।

ऐतिहासिक कारणों से अंग्रेजी ने अभी तक यह भूमिका निभाई है। यह भारत के शासकों की भाषा थी और उन्होंने इसे हमारी शिक्षा का माध्यम बनाया। अब प्रश्न यह है कि क्या अंग्रेजी को अब भी सम्पर्क भाषा और केन्द्रीय स्तर पर राजभाषा के रूप में बनाए रखना चाहिए ? यह कहा जाता है कि ऐसा करने से एक बहुत विषम और जटिल समस्या का शांतिपूर्ण हल हो जाएगा। हो सकता है कि तात्कालिक आधार पर ऐसा करना राजनीतिक दृष्टि से कालोचित हो, परन्तु इस प्रकार के सामयिक मध्यम मार्ग को अपनाने से समस्या नजरों से तो दूर हो जाएगी, परन्तु हल नहीं होगी। कुछ मूलभूत प्रश्न फिर भी रह जाएंगे। क्या एक विदेशी भाषा को सदा-सदा के लिए भारतीयों के लिए सम्पर्क सूत्र बने रहने देना चाहिए ? क्या यह नैतिक, राजनीतिक और राष्ट्रीय आत्म सम्मान की दृष्टि से अच्छी बात है ? क्या अपनी दीर्घकालीन संस्कृति पर गर्व करने वाला भारत आज इतना असमर्थ है कि भाषाओं के इतने बाहुल्य के होते हुए भी उसे कोई ऐसी भाषा नहीं मिलती जो सम्पर्क भाषा के तौर पर समृद्ध हो ? क्या ऐसा करना यथार्थ की सच्चाइयों से मुंह मोड़ने वाली बात नहीं होगी ? मेरे विचार में ऐसा करना पलायनवाद की एक नंगी मिसाल होगी। यह तर्क खोखला और नकारात्मक है कि केवल एक विदेशी भाषा ही भिन्न-भिन्न देशी भाषाएं बोलने वालों के साथ समता का व्यवहार कर सकती है क्योंकि यह सभी के लिए समान कठिनाई पैदा करती है। क्या इस प्रकार की नकार वृत्ति से जन्मी एक राजभाषा या सम्पर्क भाषा राष्ट्र की सांस्कृतिक, सामाजिक और आर्थिक प्रगति का साधन बन सकती है? मेरे कहने का कदाचित यह अभिप्राय नहीं कि अंग्रेजी का भारत भूमि से उन्मूलन कर दिया जाए। अंग्रेजी विश्व की एक महत्वपूर्ण, वैभवशाली और समृद्ध भाषा है और इसी रूप में इसका अध्ययन भारत में भी होना चाहिए। संसार को देखने के लिए इसे हमारे लिए एक खिड़की का काम करना है। परन्तु प्रश्न इस समय भारतीय प्रसंग में एक सम्पर्क भाषा के चयन का है, जो किसी भी सूरत में अंग्रेजी नहीं हो सकती।

गांधी जी और उनके अनुयायी वर्षों तक यह कहते रहे कि स्वाभाविक रूप से केवल हिन्दी ही सम्पर्क भाषा की भूमिका निभा सकती है क्योंकि यह भारत के विशाल समुदाय द्वारा बोली जाती है। उनका यह आशय कभी नहीं रहा, और न ही उनके सहयोगियों ने कभी ऐसा कहा, कि हिन्दी भारतीय भाषाओं में श्रेष्ठ है, इसलिए उसे यह स्थान दिया जाए। उन्होंने हिन्दी को सम्पर्क भाषा बनाने की जो बात कही उसका आधार सिर्फ यह था कि हिन्दी भारत में करोड़ों व्यक्तियों द्वारा बोली जाती है और उनसे भी कई करोड़ अधिक लोगों द्वारा समझी जाती है। आज भी इस तर्क को ठुकराने का कोई कारण नहीं है। यह सब कुछ होते हुए भी आज देश के कई भागों में हिन्दी का कड़ा विरोध है। इसके दो कारण हैं। एक कारण तो स्वयं हिन्दी समर्थकों द्वारा खड़ा किया गया है। न जाने कैसे उन्होंने यह धारणा बनाई है, या कम से कम दूसरों के मन में यह भ्रम उत्पन्न कर दिया है, कि हिन्दी ही अपवर्जक आधार पर एक महान परम्परा की प्रतीक है और राष्ट्र पर इसका आधिपत्य ऐसा होगा जैसा विदेशी शासन के समय अंग्रेजी का था। यह एक निहायत ही गलत धारणा है क्योंकि कोई भी व्यक्ति हिन्दी को इस आधार पर सम्पर्क भाषा के रूप में स्वीकार करने को तैयार नहीं कि वह भारतीय भाषाओं में श्रेष्ठतम है। स्वीकार्यता का दायरा बहुत सीमित है और उसका एकमात्र कारण बहुलता पर आधारित सुविधा है। हिन्दी को किसी

साम्राज्यवादी भाषा की भूमिका नहीं निभानी है। दूसरा कारण अहिन्दी भाषा-भाषी लोगों, विशेषकर दक्षिण के लोगों के मन में यह डर है कि यदि हिन्दी को भारत की संपर्क भाषा बना दिया जाता है तो वे उन सभी सुविधाओं से वंचित हो जाएंगे जिनका उपयोग वे इस समय कर रहे हैं। उनके अनुसार हिन्दी भाषा-भाषी लोगों का हिन्दी पर प्रभुत्व और अधिकार है तथा प्रतियोगी परीक्षाओं में हिन्दी बोलने वाले ही सफलता प्राप्त करेंगे। दूसरी ओर अंग्रेजी में यह गुण है कि वह सभी भारतीय भाषाएं बोलने वालों के लिए एक जैसी कठिनाई पैदा करती है और भाषा के आधार पर किसी भी वर्ग विशेष को कोई अतिरिक्त या अनावश्यक लाभ या हानि नहीं प्राप्त होती। मेरा यह दृढ़ विश्वास है यह आशंका या डर निराधार है। भाषा केवल विचारों की अभिव्यक्ति का एक साधन मात्र ही है। वह स्वयं में मानसिक उत्कृष्टता की परिचायक नहीं है। प्रतियोगी परीक्षाओं में केवल वही व्यक्ति सफल नहीं होता जिसकी मातृभाषा परीक्षा का माध्यम हो बल्कि वह व्यक्ति सफल होता है जिसका ज्ञान अपेक्षाकृत अधिक हो और जिसके पास कहने के लिए कुछ हो। भाषागत निपुणता वाचालता को तो प्रतिपादित करती है, परन्तु यह लाजमी नहीं है कि यह विद्वता की अपरिहार्य रूप से सूचक हो। यदि इस देश के वासी अंग्रेजी जैसी विदेशी भाषा पर पूर्ण अधिकार प्राप्त कर गए तो यह युक्तिसंगत ही है कि वह अधिक आसानी से हिन्दी जैसी भाषा में भी प्रवीणता प्राप्त कर सकते हैं। अतः एक देशी भाषा के सम्पर्क भाषा के रूप में अपनाए जाने से अन्य भाषा भाषियों के हितों को हानि नहीं पहुंचती। यह कल्पना या तो एक भ्रम है, या इसे केवल राजनीतिक कारणों से उठाया जाता है।

□ □ □ □

(4) श्री के० के० राघवन

हर एक राष्ट्र की अपनी कुछ विशेषताएं होती हैं। इनमें वेष-भूषा, आचार-विचार और भाषा मुख्य हैं। भारत एक बहु भाषा-भाषी देश है। यहां कई भाषाएं बोली जाती हैं। हमने देखा है कि समूचे उत्तर भारत को हिन्दी ने जोड़ रखा है। याने हिन्दी भाषी इलाका भारत का बड़ा इलाका है। हिन्दी की इसी शक्ति को देखकर ही राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने यह निश्चय किया था कि हिन्दी ही हमारे अन्तर्प्रान्तीय प्रयोग की भाषा हो सकती है। राष्ट्रपिता की इसी दूरदर्शिता के मुताबिक आज हिन्दी हमारी राजभाषा बन गई है। हिन्दी स्वतंत्र एवं स्वाभिमानी देश की राष्ट्रभाषा है। इस बात में जरा भी सन्देह नहीं है कि समूचे भारत की विभिन्न भाषाओं में पूरे भारत को एकता के सूत्र में बांधने की दृष्टि से एक विशाल राष्ट्र की सम्पर्क-भाषा होने की सारी ताकत तथा मान्यताएं केवल हिन्दी में ही हैं। अत्यंत सरल भाषा होने के कारण देश में राष्ट्रीय चेतना जगाने की प्रेरणा हिन्दी में विद्यमान है।

राष्ट्र की ताकत जनता की एकता में पाई जाती है। जनता की एकता के लिए हिन्दी से बढ़कर और कोई भाषा नहीं है। अंग्रेजी के जरिए जो एकता आज कायम समझी जाती है, वह टिकाऊ नहीं है। क्योंकि अंग्रेजी आम जनता की भाषा नहीं है। भारत की मिट्टी में वह पनपने वाली भी नहीं है। अंग्रेजी से या किसी अन्य भाषा से हिन्दी का कोई झगड़ा नहीं है। विश्व की भाषाओं में अंग्रेजी का समुन्नत स्थान है। मगर हिन्दी के मुकाबले में अंग्रेजी को खड़ा करके यह कहना कि अंग्रेजी ही हमारे लिए उपयुक्त है, इसलिए अंग्रेजी को ही यहां रहने दिया जाए, अत्यन्त अनुचित एवं अमंगलकारी है। हिन्दी के माध्यम से ही हम सभी भारतीयों को आपस में निकट ला सकते हैं। भारतीय संस्कृति की मूल भावना हिन्दी में ही छिपी हुई है। अपनी इसी विशेषता के कारण भारतीय संस्कृति मानवीय संस्कृति का पर्यायवाची मानी जाती है। विचारपूर्वक देखा जाए तो मालूम होगा कि भारतीय संस्कृति समता और ममता के चरणों से आगे बढ़ती है। वह अपने घर, परिवार, जाति, और देश की सीमाओं को पार करती हुई वसुधा पर के प्राणियों में एक-सूत्रता तथा आत्मीयता स्थापित करती चलती है। हिन्दी जानने मात्र से ही यह सिलसिला बेरोक बढ़ता रहेगा।

हिन्दी को राजभाषा का पद मिलने के बाद भारत के बाहर अधिकांश देशों में हिन्दी के प्रति विशेष रुचि दिखाई दे रही है। इस दृष्टि से रूस, अमेरिका, इंग्लैंड, जापान, चेकोस्लोवाकिया, इटली आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। विश्व के 79 विश्वविद्यालयों और संस्थाओं में हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन की समुचित व्यवस्था है। इन विदेशी विश्व-विद्यालयों में उच्चस्तरीय हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था तो है ही, शोध विभाग भी है, जहां भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से हिन्दी और उसकी बोलियों का सम्यक् अध्ययन हो रहा है। हिन्दी के मूर्धन्य लेखकों और कवियों की लोकप्रिय रचनाओं का अनुवाद उन भाषाओं में किया जा रहा है। इस दृष्टि से रूस, चेकोस्लोवाकिया, जर्मनी और अमेरिका का नाम विशेष रूप से लिया जा सकता है।

सोवियत संघ में याने रूस में अन्य देशों की अपेक्षा काफी समय से हिन्दी की ओर ध्यान दिया जा रहा है। वहां हिन्दी पुस्तकों का प्रकाशन भी बड़े पैमाने पर होता है। उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द के उपन्यास, डा. रामकुमार वर्मा के नाटक, यशपाल की कहानियां, पंत और प्रसाद की कविताएं रूसी भाषा में अनूदित करके छापी गई हैं। श्री ए. ए. वारान्निकोव हिन्दी के प्रकांड पंडित हैं। आपने रूसी भाषा में तुलसीदास की रामायण का पद्यानुवाद किया है जो विशेष लोकप्रिय हुआ है। इसी प्रकार अमेरिका के अनेक विश्वविद्यालयों में हिन्दी अध्यापन की व्यवस्था है। इसके अलावा चेकोस्लोवाकिया, जापान इंग्लैंड, पश्चिम जर्मनी तथा श्रीलंका के विश्वविद्यालयों में भी इसकी समुचित व्यवस्था है। इससे हम समझते हैं कि हिन्दी की लोकप्रियता दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है।

भारतीय संस्कृति समन्वय की ओर संकेत करती है। वह विभेद की नहीं अभेद की उपासिका है। भारत की इस प्राचीन एवं शाश्वत मूल्यों पर आधारित संस्कृति को एक जीवन-दर्शन के रूप में अभिव्यक्त करने का काम वर्तमान समय में हिन्दी

को ही करना है। इसके कई कारण हैं। हिन्दी संस्कृत की बेटी है। संस्कृत तो आर्यभाषा गोत्र की है। उसका आविर्भाव भी यहीं से हुआ है । अतः भारत की सभी विशेषताएं इसमें विद्यमान हैं। संस्कृत की बेटी होने के नाते सभी भारतीय भाषाओं से उसका निकटतम संबंध है। हिन्दी सबसे सरल और **मीठी भाषा** है। उसका स्वर-माधुर्य गंधर्वों के स्वर को भी मात करने वाला है। इन कारणों से हम यह भी कह सकते हैं कि हिन्दी भाषा भारत का प्रतीक भी है। हिन्दी ने सारे देश में भारतीय संस्कृति को बनाये रखा, भारतीयता के बोध को जीवित रखा। कानून आजकल हिन्दी के पक्ष में है। मगर हिन्दी कभी कानून से आगे नहीं बढ़ेगी। इसमें आधुनिकता और भारतीयता के जो संस्कार हैं, वे ही इसे आगे बढ़ायेंगे।

□ □ □

(5) डा० अजय तिवारी

स्वतंत्र भारत में अनेक बार भाषा का प्रश्न राष्ट्रीय एकता के लिए चुनौती बन कर उभर चुका है। भारत संघीय गणराज्य है। 'अनेकता में एकता' इस संघीय गणराज्य का आधारभूत सिद्धांत है। दूसरे शब्दों में, भारत अनेक भाषाभाषी जातियों से निर्मित एक राष्ट्र है। भाषा के सवाल को उठाते समय यह आवश्यक है कि हम भारतीय समाज के ऐतिहासिक विकास और उसके बुनियादी ढांचे के प्रति अत्यंत सचेत रहें। संक्षेप में, भारत की भाषा समस्या को वैज्ञानिक ढंग से तभी हल किया जा सकता है जब जातीय संगठन की इकाई और विभिन्न जातियों की पारस्परिक एकता के बीच विवेकपूर्ण संतुलन स्थापित करने का प्रयत्न हो।

इस ध्येय की प्राप्ति के लिए हमारा सबसे पहला सरोकार भारतीय जनता, उसकी भाषा और संस्कृति से हो, यह परम आवश्यक है। जनता की एकता, विभिन्न जातियों के सहअस्तित्व और उनके आपसी सम्बन्धों को जनता की स्वाभाविक भाषा-संस्कृति से अलग करके देखने पर हम सही नतीजों तक कभी नहीं पहुंच सकते। सुनंदा सान्याल का लेख "क्या भाषा जनता को संगठित करती है?" (द इंडियन एक्सप्रेस, 28 मार्च 1981) इसका उदाहरण है। लेख यों शुरू होता है: "हमारा यह संवैधानिक आदेश कि अंततोगत्वा हिन्दी ही संघ की एकमात्र राजभाषा होगी, इस प्रचलित, किन्तु गलत विश्वास से प्रेरित है कि एक भाषा बहु-भाषा-भाषी जनता को अनिवार्यतः संगठित करती है ।" अर्थात, अनेक भाषा बोलने वालों में एक भाषा एकता नहीं ला सकती, हिन्दी भाषा तो ला ही नहीं सकती। फिर भी हिन्दी 'अंततोगत्वा' भारत की 'एकमात्र राजभाषा' बनेगी, इसलिए कुछ लोगों की यह चिंता स्वाभाविक है कि देश की एकता का क्या होगा ।

बहुत संभव है, यह चिंता राष्ट्रीय विघटन से अधिक हिन्दी के "प्रभुत्व" की आशंका से हो । अभी सिद्धांत रूप में हिन्दी भारत की राजभाषा तो है लेकिन अंग्रेजी उसकी सहयोगी राज-भाषा है । हिन्दी अभी अंग्रेजी के सहयोग के बिना एक कदम नहीं चल सकती। इसलिए उत्तर प्रदेश जैसे हिंदी भाषी प्रांतों को भी सरकारी पत्रों आदि में हिन्दी के साथ-साथ अंग्रेजी की अनूदित प्रति अनिवार्यतः लगानी पड़ती है।

अंग्रेजी प्रेमी हिन्दी पर कुपित इसलिए होते हैं कि 'अंततोगत्वा' जब वह 'एकमात्र राजभाषा' के आसन पर आयेगी, तब अंग्रेजी को पदच्युत होना पड़ेगा । वह दिन कब आएगा, पता नहीं, लेकिन वह दिन आएगा जरूर । इसलिए छोटी से छोटी बात भी इन अंग्रेजी प्रेमी हिन्दुस्तानियों के दिलों को दहला देती है। 6 अगस्त, 1981 को 'द हिन्दुस्तान टाइम्स' ने एक संपादकीय लिखा है, जिसका शीर्षक: "किसी भी कीमत पर हिन्दी?" ('हिन्दी एट एनी कास्ट?') इस संपादकीय की दहशत का विषय क्या है, यह उसके पहले वाक्य से प्रकट होता है, "अपने विज्ञापनों और प्रेस वक्तव्यों को अंग्रेजी अखबारों के लिए भी हिन्दी में ही जारी करने का उत्तर प्रदेश सरकार का निर्णय भाषाई अदूरदर्शिता का लक्षण है ।"

भारत की राजभाषा के प्रचार के लिए जिस निर्णय की प्रशंसा होनी चाहिए, उसकी आलोचना का कारण क्या है? क्या विज्ञापन और प्रेस वक्तव्य हिन्दी में जारी करने का निर्णय ऐसा है जिसकी "कीमत" चुकानी पड़ेगी ? उत्तर प्रदेश सरकार के उक्त निर्णय को "अविवेकपूर्ण" और "आत्मघाती" बताते हुए संपादकीय ने लिखा है कि "पाठक अंग्रेजी दैनिकों में हिन्दी के प्रयोग की न तो इच्छा रखते हैं, न अपेक्षा ।" थोड़े से अंग्रेजी पाठकों की इच्छाओं-अभिलाषाओं की इतनी चिंता कि करोड़ों लोगों की भाषा हिन्दी के लिए रत्ती भर प्रयत्न भी "कीमत" का हिसाब-किताब लगाने को विवश कर देता है।

'हिन्दुस्तान टाइम्स' का यह अंग्रेजी प्रेम नया नहीं है। आजादी के बाद जब भारतीय भाषाओं को उनका गौरवपूर्ण आसन देने के लिए विचार शुरू हुआ तब अपने 'संपादकीय' में इस पत्र ने मांग की थी कि उच्च न्यायालयों में, उच्च शिक्षा आदि के क्षेत्र में एकरूपता बरकरार रखने के लिए "एक केन्द्रीय भाषा" का चलन लागू हो । **वह भाषा हिन्दी या अन्य भारतीय भाषा न हो कर अंग्रेजों के "संपर्क" की निशानी हो। (दि हिन्दुस्तान टाइम्स, 9 दिसंबर 1948)।** सन् '65 में अंग्रेजों के 'संपर्क' की इस निशानी को आंशिक धक्का लगा; हिन्दी को राजभाषा के रूप में मान्यता दे दी गई और अंग्रेजी को सहायक राजभाषा का आसान प्रदान किया गया । सन् 1978 में 'कोठारी आयोग' के फैसले लागू होने पर अंग्रेजों की इस निशानी को थोड़ा और धक्का लगा ; अब भारतीय युवक आई.ए.एस. आदि की परीक्षाएं अंग्रेजी की ही तरह भारतीय भाषाओं में भी दे सकते हैं। इन बातों से अंग्रेजी के दुर्ग पर व्यवहार में कोई तगड़ी चोट नहीं पड़ती थी। इसलिए थोड़ी बहुत चर्चा के बाद मामले ठंडे पड़ गए। लेकिन उत्तर प्रदेश सरकार के निर्णय से अंग्रेजी भक्तों के संस्कार को गहरी चोट पहुंची । अंग्रेजी पाठक अंग्रेजी पत्र में हिन्दी के दर्शन करें! राम-राम!! कहां गंवार हिन्दुस्तानी और कहा अंग्रेजों के 'संपर्क' की निशानी!!!

यह ध्यान देने योग्य है कि बड़े-बड़े अंग्रेजीप्रेमी भद्रजन पहले यह विवाद उठाकर कि 'एक केन्द्रीय भाषा' का स्थान कौन-सी भारतीय भाषा ले, भारतीय भाषाओं के सम्यक् विकास को और व्यवहार में एक राष्ट्रभाषा के उदय की संभावना को पीछे धकेल कर अंग्रेजी की रक्षा की कोशिश करते थे। अब हिन्दी ने सीमित तौर पर ही सही, अपना स्थान लेना शुरू किया है, साथ-साथ अन्य भारतीय भाषाओं ने जैसे बंगला, मराठी, गुजराती, तमिल आदि ने भी अपना वाजिब महत्व पाना शुरू किया है, फलस्वरूप उनके आपसी विरोध कम हो रहे हैं। अंग्रेजीप्रेमी इस स्थिति से घबरा रहे हैं क्योंकि भारत में "मुख्य अंतर्विरोध हिन्दी और अहिन्दी भाषाओं में नहीं, अंग्रेजी तथा समस्त भारतीय भाषाओं में है।" (डा. रामविलास शर्मा, 'भारत की भाषा समस्या' पृ-227) इस परिस्थिति में हिन्दी-अहिन्दी का झगड़ा करा पाना आसान नहीं रह गया है। फलत: उन्हें खुल कर अंग्रेजी की सुरक्षा और हिन्दी पर आक्रमण करते हुए प्रकट होना पड़ता है।

भारत के अंग्रेजी प्रेमियों को मुख्य भय हिन्दी से क्यों है? उसका सबसे मुख्य कारण यह है कि भारत में जब कभी सचमुच अंग्रेजी हटेगी तब राजभाषा के रूप में हिन्दी उसका स्थान लेगी। तब हिन्दी "एकमात्र राजभाषा" बनेगी, अंग्रेजी के साथ इस पद को बांटेगी नहीं। इससे अंग्रेजी आभिजात्यवाद के दुर्ग पर गहरी चोट लगेगी।

इसका दूसरा मुख्य कारण यह है कि हिन्दीभाषी जाति भारत की सबसे बड़ी जाति है। यहां तक कि कुछ लोगों को उसके बहुभाषाभाषी होने तक का भ्रम होता है। इस हिन्दी जाति का महत्व, सोवियत चिंतक बोरिस क्लुयेव (Boris Kluyev) के शब्दों में, इसलिए और भी बढ़ जाता है कि "ऐतिहासिक कारणों से, हिन्दी देश के अनेक भागों में एक लम्बे समय से जातीय समुदायों के बीच संपर्क की भाषा बनी हुई है। ऐसे हिन्दी और उन क्षेत्रों के बीच, जहां वह अंतर्जातीय संपर्क का माध्यम है, कोई सीमारेखा नहीं है, और है तो बहुत अस्थिर" (इंडिया: नेशनल एंड लैंग्वेज प्राब्लेम, पृ. 55)।

इसका तीसरा कारण यह है कि अंग्रेज जिन भारतीय मजदूरों को सस्ती कुलीगिरी के लिए जोर-जबर्दस्ती से या उनकी मजबूरी का फायदा उठाकर धोखाधड़ी से विदेश ले गए थे, वे फिजी, मारिशस, अफ्रीका आदि में रहने वाले भारतीय हिन्दी को विश्व-भाषा बनाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं।

इस प्रकार, हिन्दी का राष्ट्रीय ही नहीं अंतर्राष्ट्रीय महत्व भी दिनोंदिन बढ़ रहा है। हिन्दी के इस प्रसार से जिन अंग्रेजी भक्तों के विशेषाधिकारों को चोट पहुंचती है वे कभी हिन्दी के पिछड़ेपन की और कभी राष्ट्रीय विघटन के खतरे की दुहाई देकर उसके विकास को रोकने की कोशिश करते हैं। सुनंदा सान्याल ने और भी अनोखा तर्क यह निकाला है कि भाषाएं राष्ट्रीय एकता का आधार ही नहीं होती। लोग यह न कहें कि वे हिन्दी-विरोधी और अंग्रेजीभक्त हैं इसलिए उन्होंने अंग्रेजी का उदाहरण देकर राष्ट्रीय एकता लाने में हिन्दी की असमर्थता प्रमाणित की है। उनका तर्क यह है कि अगर भाषा सचमुच जोड़ती है तो अंग्रेजों के खिलाफ खुद "अंग्रेजी बोलने वाले भारतीय नेता आजादी की लड़ाई का नेतृत्व" क्यों करते। यहीं नहीं, अंग्रेजी ने भारतीय जनता को अंग्रेजों के खिलाफ कभी संगठित नहीं किया। (द इंडियन एक्सप्रेस, 28 मई 1981)

पूछा जा सकता है कि अगर भाषा राष्ट्रीय एकता के मोर्चे पर कोई सकारात्मक भूमिका नहीं अदा करती तो अंग्रेजी रहे या हिन्दी या कोई अन्य भारतीय भाषा आए, इतनी परेशानी की क्या जरूरत है? और क्या भारतीय स्वाधीनता संग्राम का नेतृत्व सचमुच अंग्रेजी भक्तों ने किया था?

वास्तव में सुनंदा सान्याल के दोनों तर्कों का सचाई से नाता ही नहीं है। भारतीय स्वाधीनता संग्राम के अगुवा थे गांधी और नेहरू। वे अंग्रेजीभक्त न थे। वे राष्ट्रीय एकता के सवाल पर भाषा के महत्व और उसकी गतिशील भूमिका से परिचित थे। आजादी से दस साल पहले 1937 में रूसी क्रांति में जातीय भाषा की भूमिका का उल्लेख करते हुए गांधी जी ने लिखा था, "लेकिन रूस का हाल देखिए। वहां क्रांति से पहले ही तमाम पाठ्य पुस्तकें (वैज्ञानिक पुस्तकों समेत) रूसी में छपती थीं। दरअसल इसी बात ने लेनिन की क्रांति के लिए मार्ग तैयार किया।" (थाट्स आन नेशनल लैंग्वेज, पृ. 53)।

अंग्रेजी हटाने के सवाल पर गांधी जी ने किस देश के अनुभव को अपना व्यावहारिक आदर्श माना था? **1946 में गांधी जी ने सोवियत संघ की मिसाल पेश करते हुए लिखा था: "रूस ने अपनी सारी वैज्ञानिक प्रगति अंग्रेजी के बिना ही की है। यह हमारी दिमागी गुलामी है जो हम कहते हैं कि अंग्रेजी के बिना काम नहीं चल सकता। मैं इस पराजयवादी मत को कभी स्वीकार नहीं कर सकता।" उपर्युक्त पृ. 201)**

राष्ट्रपिता भारत में राष्ट्रीय एकता और भाषा-समस्या के समाधान के लिए बार-बार सोवियत अनुभव की मिसाल पेश करते थे। उनका मुख्य सरोकार यह था कि आजाद भारत अपनी विविधता बनाए रखते हुए भी सोवियत संघ की तरह अपनी पूरी जनता को एक संगठित राष्ट्र का रूप दे सके। गांधी जी जानते थे कि सोवियत संघ ने क्रांति के बाद जिन मुख्य समस्याओं पर काबू पाया है, वे केवल समाज और अर्थतंत्र के विकास से नहीं जुड़ी थीं; उनका संबंध जातियों के उत्पीड़न, विग्रह और आपसी असामानता की समाप्ति से, सर्वांगीण सांस्कृतिक क्रांति से, सामूहिक निरक्षरता उन्मूलन और भाषाओं को लिखित रूप प्रदान करने से भी था। इसमें संदेह नहीं कि स्वतंत्र भारत सोवियत संघ के रास्ते से ही संकट रहित विकास कर सकता था। गांधी जी ने राष्ट्रीय और भाषाई सवाल के समाधान में सोवियत अनुभव के आलोक में ही यह सूचित किया: "प्रांतीय भाषाओं को अपना पूर्ण विकास करना है तो भाषा के आधार पर प्रांतों का पुनर्गठन आवश्यक है। हिन्दुस्तानी राष्ट्रभाषा होगी लेकिन वह प्रांतीय भाषाओं की जगह न लेगी। वह प्रांतों में शिक्षा का माध्यम न होगी--अंग्रेजी शिक्षा का माध्यम हो, इसका सवाल नहीं है। हिन्दुस्तानी का उद्देश्य यह होगा कि वह लोगों को महसूस कराए कि वे भारत के अभिन्न अंग हैं।" (उपर्युक्त पृ. 202) स्पष्टत: गांधी जी

के लिए भाषा जातीय पुनर्गठन का ही नहीं, राष्ट्रीय एकीकरण का भी मुख्य औज़ार थी।

गांधी जी के मत से ही मिलता-जुलता मत नेहरू जी का है। "अखिल भारतीय व्यवहार की एक सामान्य भाषा" की जरूरत पर बल देते हुए नेहरू जी ने अंग्रेजी भक्तों को लताड़ते हुए कहा था : "एक हद तक हमारे उच्च वर्गों के लिए और अखिल भारतीय राजनीतिक कार्यों के लिए अंग्रेजी ऐसी भाषा बनी हुई है। किन्तु यदि हम आम जनता को ध्यान में रखकर सोचें, यह बात साफ नामुमकिन लगती है। हम करोड़ों लोगों को नितांत विदेशी भाषा द्वारा शिक्षित नहीं कर सकते।" (नेशनल लैंग्वेज फार इंडियन : ए सिंपोजियम,, 1941, पृ. 49-50)

नेहरू जी का मत स्पष्ट है। अंग्रेजी उच्च वर्गों की भाषा है। अखिल भारतीय राजनीति-कार्यों में भी उसका उपयोग होता है। इसीलिए गांधीजी कांग्रेस से अंग्रेजी हटाने पर बेहद बल देते थे--- वह देश के जनसाधारण की भाषा नहीं बन सकती। कारण यह कि अंग्रेजी "नितांत विदेशी भाषा" है। क्रांति के बाद सोवियत संघ के उच्च वर्गों में फ्रांसीसी भाषा के लिए उसी तरह प्रेम बरकरार था, जैसे भारत में अंग्रेजी के लिए। भारत अंग्रेजी राज के अधीन था, किन्तु सोवियत संघ ने नेपोलियन और उसकी फ्रांसीसी सेना को हराया था। सोवियत नेताओं ने, लेनिन और स्तालिन ने, मजदूरों में राष्ट्रीय सम्मान का भाव जगाया, इस प्रकार फ्रांसीसी के स्थान पर विभिन्न जातीय भाषाओं को महत्व दिया।

इससे प्रमाणित होता है कि राष्ट्रीय आंदोलन का नेतृत्व अंग्रेजी भक्तों ने नहीं किया। अंग्रेजी भारतीय जनता की भाषा कभी नहीं थी और कभी नहीं होगी। नेहरू जी उसे "उच्च वर्गों" की भाषा मानते थे। इसलिए यदि अंग्रेजी हमारे देश की करोड़ों जनतों को संगठित नहीं कर सकी तो यह स्वाभाविक ही था। वह भारत में जिन वर्गों की भाषा थी, उसे उसने अवश्य संगठित किया। लार्ड मैकाले ने अंग्रेजी की शिक्षा लागू ही इसलिए की थी कि अंग्रेजी राज को दृढ़ करने, सांस्कृतिक क्षेत्र में उसका प्रभाव बढ़ाने और उसका राजकाज चलाने के लिए जनता से कटे हुए नौकरशाह तैयार किये जा सकें। इसी अंग्रेजी **शिक्षा नीति की जैसी तीखी आलोचना एनीबेसेंट ने की थी, इसे राष्ट्रीय गौरव पर कुठाराघात बताया था उससे आजकल के अनेक अंग्रेजीभक्त देशभक्ति की शिक्षा ले सकते हैं।**

नेहरूजी ने "उच्च वर्गों" की जगह करोड़ों जनसाधारण की संस्कृति के आधार पर समस्या सुलझाने का रास्ता सोचा था। इस दृष्टि से हिन्दी वह संपर्क भाषा हो सकती है। हिन्दी जाति के तथा बहुजातीय राष्ट्र के रूप में भारत के निर्माण के सम्पूर्ण इतिहास में हिन्दी बोलने वाले केवल हिन्दी प्रदेश तक सीमित नहीं रहे हैं। गैर-हिन्दी प्रदेशों में हिन्दी के माध्यम से संपर्क कायम करने वाले बंगाल, महाराष्ट्र, राजस्थान में ही नहीं, गुजरात, केरल, तमिलनाडु, कश्मीर आदि में भी बड़े पैमाने पर मौजूद हैं, इनमें मुख्यः मजदूर हैं। गांधी-नेहरू जिस राष्ट्रीय एकता का स्वप्न देखते थे वह 'उच्च वर्गों' की एकता नहीं, इन साधारण लोगों की एकता थी। इसलिए राजभाषा या राष्ट्रीय संपर्क की भाषा के रूप में हिन्दी के विरोध का अर्थ है जनता की एकता का विरोध करना।

जनता की एकता के विरोध का एक रूप है सांप्रदायिकता। उत्तर प्रदेश, बिहार, गुजरात, पंजाब, आसाम आदि अनेक स्थानों पर सांप्रदायिकता के ही विभिन्न रूप प्रकट होकर राष्ट्रीय एकता को चुनौती दे रहे हैं। सांप्रदायिकता की इस बहती गंगा में हाथ धोने से सुनंदा सान्याल ही क्यों चूके? सन् '47 को याद करते हुए उन्होंने लिखा है : "विभाजन से पहले हिन्दू बंगालियों और मुसलमान बंगालियों के संबंध देखिए। उन्हें आपस में एकताबद्ध करने की जगह बंगला भाषा ने वास्तव में अपने बोलने वाले दो समुदायों की धार्मिक फूट को गहरा किया।" (द इंडियन एक्सप्रेस), 28 मई 1981)

क्या खूबसूरत तर्क है! जहां जनता का संगठन न बने वहां असफलता भाषा की, जहां जनता में फूट पड़ जाए वहां जिम्मेदारी भाषा की! सारा दोष है भाषा का, भारतीय भाषाओं का खासकर! जब बंगला जैसी छोटी-मोटी भाषाएं विघटन करा सकती हैं तो "एकमात्र राजभाषा" बन कर हिन्दी क्या कहर न ढाएगी! इस विनाश को रोकना है, देश को विघटन से बचाना है, सांप्रदायिक दंगों की बाढ़ थामनी है तो अंग्रेजी बचाओ!!

इस प्रकार, भारत के अंग्रेजी-प्रेमी अपने निहित स्वार्थों की रक्षा के लिए जमीन – आसमान एक कर देते हैं। वे इसको अनदेखी करते हैं कि भारतीय जनता में फूट पैदा की अंग्रेजों ने और उसे गहरा किया हिन्दू-मुसलमान संप्रदायवाद ने। **भाषा गतिशील तत्व है, किन्तु उसकी गतिशीलता मर्यादित है। भाषा मनुष्य को नहीं बरतती, मनुष्य भाषा को बरतता है। फूट भाषा नहीं डालती, फूट डालने के लिए मनुष्य भाषा का इस्तेमाल करता है।** 'हिन्दी हैं हम, वतन है हिन्दोस्तां हमारा'—यह भावना जनता की थी। धर्म के आधार पर आपस में वैर का, हिन्दुओं मुसलमानों की दो संस्कृति और दो भाषा के सिद्धांत का सूत्रपात किया गिलक्राइस्ट नामक अंग्रेज ने। अनेक हिन्दू-मुसलमान इस वैरभाव के शिकार हुए; देश की जनता अविवेकपूर्ण आधार पर विभाजित हुई। सन् '47 का विभाजन भाषा के कारण हुआ था, यह धारण गलत है। धर्मान्धता एक चीज है और भाषा-संस्कृति दूसरी। यदि भाषा और संस्कृति को प्राथमिकता दी जाए तो आज भारत के सामने उपस्थित राष्ट्रीय विघटन का खतरा दूर हो सकता है।

जनता में बंटवारा होता है धर्म की आड़ से—भाषा, संस्कृति आदि की बातें धर्म से जोड़ दी जाती हैं। इस सांप्रदायिक फूट का परिणाम क्या होता है? पहले एक संप्रदाय का दूसरे संप्रदाय से संघर्ष, और फिर शिया-सुन्नी, अकाली-निरंकारी आदि रूपों में एक ही धर्म, संप्रदाय या पंथ के भीतर आपस में संघर्ष। यदि जातीय, स्वभावतः भाषाई आधार पर देखें तो इस तरह के संघर्षों का कोई कारण नहीं है। इससे पता चलता है कि धार्मिक मतवाद और सांप्रदायिकता जातीय भावना को विघटित करते हैं। इनसे अधिकाधिक संकीर्ण प्रवृत्तियों का द्वार खुलता है।

अपने विवेचन की इस पृष्ठभूमि में हम कह सकते हैं कि राष्ट्रीय एकता की समस्या और भाषा के संबंध को हम ठीक-ठीक तभी हल कर सकते हैं जब डा. रामविलास शर्मा के इस बुनियादी सूत्र को ध्यान में रखें : "भारत बहुजातीय राष्ट्र है। बहुजातीय है, इसलिए राज्यों में वहीं की भाषाएं राजभाषा होंगी, राष्ट्र है, इसलिए सब जातियों को मिलाने वाली केन्द्रीय भाषा हिन्दी होगी। इन दोनों बातों में से किसी एक को भूल जाना राष्ट्रीय विघटन को बुलावा देना होगा।" (भारत की भाषा समस्या पृ. 224) □ □ □ □

(6) योहिचि युकिशिता

भारतवर्ष में आये मुझे लगभग तीन वर्ष हो गये। इतने समय में मुझे कई बार देश में यात्रा करने का अवसर मिला। जब कभी मैं यात्रा में निकला, तब रेल में या कभी किसी के घर में भारत की भाषा समस्या के विषय में भारतीयों के साथ चर्चा करने का मुझे अवसर मिलता रहा। उस चर्चा से मुझे ज्ञात हुआ कि बहुत से लोगों का मत है कि भारत की भाषा अंग्रेजी होनी चाहिए। परन्तु जब-जब मैं यह बात सुनता हूं, मुझे आश्चर्य होता है।

एक सज्जन ने कहा कि इतने बड़े देश में किसी भारतीय भाषा से काम नहीं चल सकता, शासकीय भाषा के लिए अंग्रेजी ही उचित है। दूसरे सज्जन का कहना था कि यदि किसी भारतीय भाषा को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रचारित करने का प्रयत्न करेंगे तो दूसरी भाषा के लोग इस कार्य का विरोध करेंगे इससे भारत की एकता खतरे में पड़ सकती है। देश में सबसे ज्यादा अंग्रेजी प्रचलित है, इसलिए उसे रहने देना चाहिए। और तीसरे प्रकार का मत है कि साहित्य, कला, शास्त्र इत्यादि क्षेत्रों में तो भारतीय भाषाओं में शिक्षा दे सकते हैं पर मेडिकल, टेकनिकल इत्यादि विज्ञान के क्षेत्रों में जो अंग्रेजी शब्द हैं उनका कैसे हिन्दी में अनुवाद करेंगे? ऐसे क्षेत्रों के लिए तो अंग्रेजी ही ठीक है।

जब मैं ऐसी बातें सुनता हूं, तब जवाब में कहता हूं कि भाई साहब, आप कहते हैं कि यह देश बहुत बड़ा है जिसमें अनेक भाषाएं हैं, ऐसे देश में एकता लाने के लिए अंग्रेजी जैसी समृद्ध भाषा की जरूरत है। पर आप जरा रूस की हालत देख लीजिए और चीन का भी अच्छा उदाहरण है। क्या वे देश भारत से छोटे हैं ! उन देशों में भी भाषा समस्या तो है ही। उन देशों में भी अनेक प्रदेश व जातियां हैं और उनकी अलग-अलग भाषाएं हैं। पर उन्होंने कभी यह नहीं सोचा कि भाषा समस्या को हल करने के लिए दूसरे देश की भाषा को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार किया जाये, अपितु वे ऐसा सोचते हैं कि देश की एकता तथा उन्नति के लिए अपनी भाषा का प्रचार होना चाहिए। इस उद्देश्य से उन्होंने अपनी भाषा में उच्च शिक्षा देने का प्रबन्ध कर रखा है। उसके परिणाम स्वरूप उन देशों की कितनी उन्नति हुई है, यह आप देख ही रहे हैं।

कुछ सज्जन कहते हैं कि हम अमुक भाषा को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने की कोशिश करते हैं, तब अन्य भाषा-भाषी उस कार्य का विरोध करते हैं और उससे देश की एकता खतरे में पड़ जाती है। परन्तु मैं आपसे कहता हूं कि ऐसा कार्य करते समय आप लोग राष्ट्रभाषा का महत्व उनको दिल से समझायें और उनकी भलाई सबसे पहले सोचें तो क्या वे विरोध करेंगे ? मैं सोचता हूं कि अवश्य वे आप लोगों का विरोध नहीं करेंगे, वरन् वे इस कार्य में मदद भी करेंगे।

अब मुझे तीसरे प्रकार के सज्जन को जवाब देना है। वे कहते हैं कि क्या विज्ञान के क्षेत्र में अंग्रेजी के अतिरिक्त और कोई भाषा हो सकती है? मेरा दावा है कि ऐसा विचार बिलकुल गलत है। उदाहरणार्थ मैं अपने देश जापान का हाल बता रहा हूं। हमारे देश में सिर्फ एक ही भाषा है। वह है जापानी। हां, हमारे देश में भी उपभाषा-विभाषाएं हैं पर शिक्षा का माध्यम एक ही भाषा है। हम अपनी मातृभाषा जापानी में बी.ए., एम.ए. कर सकते हैं और मेडिकल हो या टेकनिकल हो, हम अपनी मातृभाषा में डाक्टरेट कर सकते हैं। हमारी शासकीय भाषा जापानी है और बड़ी-बड़ी कम्पनियों के दफ्तरों में भी जापानी मुख्य भाषा है। हमें ऐसी व्यवस्था का क्या फल मिलता है। विश्व के अन्य देशों के लोगों ने अपनी आंखों देखा है कि दूसरे महायुद्ध के बाद हमारा देश कितनी जल्दी उन्नत हुआ है। ऊंची शिक्षा जन-समुदाय में फैल गयी है और शिक्षा स्तर ऊंचा हो गया है। अब ऐसा भी कह सकते हैं कि जापान में अनपढ़ हैं ही नहीं। उदाहरणार्थ हमारे देश में मतदान करते समय हम उम्मीदवार का नाम लिखते हैं जब कि भारत में चुनाव चिन्ह पर मुहर लगाते हैं। कहते हैं कि जापानी विश्व की समृद्ध भाषाओं में है, पर वास्तव में जापानी भाषा उतनी समृद्ध भाषा नहीं है। विज्ञान आदि क्षेत्र में जब नया शब्द बनाना पड़ता है, तो हम चीनी भाषा में से अर्थयुक्त लिपि (चीनी भाषा में हर अक्षर यानी लिपि में अर्थ होता है। अत: उसमें लिपि और शब्द एक जैसे हैं) चुनकर फिर जापानी के व्याकरणानुसार नयी लिपि बनाकर और उच्चारण जापानी ढंग में बदलकर उसे अपने शब्द भण्डार में जोड़ लेते हैं।

भारत में संस्कृत भाषा है, जो विश्व की अत्यंत समृद्ध भाषाओं में गिनी जाती है। हिंदी आदि कई भारतीय भाषायें उसमें से उत्पन्न हुई हैं। तो क्या आप हिन्दी आदि भारतीय भाषाओं में संस्कृत के सहारे वैज्ञानिक शब्द नहीं बना सकते।

मैं कभी-कभी सुनता हूं कि भारत में सुशिक्षित आदमी उसे कहते हैं जिसे अच्छी तरह अंग्रेजी आती है और वे अंग्रेजी में ही बोलना पसन्द करते हैं। उसके घर में अंग्रेजी किताबों का संग्रह है और अंग्रेजी अखबार आता है। परंतु दूसरे देशों में शिक्षित आदमी उसे कहते हैं जिसे अपनी भाषा का पर्याप्त ज्ञान हो, जिसके घर में राष्ट्रभाषा की पुस्तकों का संग्रह हो और जिसे अपनी मातृभाषा का साहित्य पढ़ने में विशेष रुचि हो।

भारत में यह अटल सत्य है कि अंग्रेजी मुट्ठी भर वर्ग के विशेष लोगों के उपयोग की भाषा है। वे समझते हैं कि हमें

अंग्रेजी आता है इसलिये हम सुसंस्कृत हैं और जन-समुदाय से ऊंचे स्तर के हैं। अगर अंग्रेजी बोलने वाले सब सुसंस्कृत हों, तो जिस देश की भाषा अंग्रेजी तो नहीं, पर अपनी समृद्ध भाषा के अभाव के कारण जहां अंग्रेजी ही चलती है, क्या उस देश में रहने वाले सभी अर्थात बच्चे और भिखारी भी सुसंस्कृत हो जाते हैं? ऐसा नहीं होता। बात यह है कि सौभाग्यवश उन भारतीयों को अंग्रेजी सीखने का मौका मिला। इसलिए इसमें गर्व करने का कारण नहीं है।

इतिहास साबित करता है कि जिन भारतीय साहित्यकारों ने अंग्रेजी में साहित्य की रचना की उन्हें आज तक न अंग्रेजी के प्रतिनिधि संग्रह में स्थान मिला, न भारत में ही लोकप्रियता मिली। जिन साहित्यकारों ने जनता के कल्याण का उद्देश्य लेकर जनता की-भाषा में रचना की, उन्हीं को ख्याति मिली है।

हिंदी हर प्रदेश में संयोजक भाषा के रूप में फैल गयी है। यही भारत की राष्ट्रभाषा बन सकती है। किंतु इस देश में केवल हिन्दी की ही उन्नति नहीं होना चाहिए क्योंकि प्रादेशिक भाषा जो काम कर सकती है, उसे राष्ट्रभाषा नहीं कर पाती। वे अलग-अलग क्षेत्र में अपनी क्षमता दिखा सकती है। अपने मन का सूक्ष्म भाव हम अपनी मातृभाषा में ही व्यक्त कर सकते हैं। मेरा दावा है कि जब तक भारत में अंग्रेजी का बोलबाला है, तब तक इस देश की एकता तथा उन्नति नहीं होगी। अतः यथाशीघ्र अपनी भाषा को राष्ट्रभाषा की प्रतिष्ठा देनी चाहिए। नहीं तो, भारत इस संसार में और अधिक पिछड़ जाएगा।

□ □ □

रूप अनेक : भाव एक : भारतीय मुहाविरों में

यहां एक ही भाव को अभिव्यक्त करने वाली भारतीय भाषाओं की कहावतें अर्थ सहित दी जा रही हैं। कहावत है—**"मियां की दौड़ मस्जिद तक।"**

भाषाएँ	अर्थ	मुहाविरे
1. असमिया	1. मस्जिद लैइके मुल्लार दौर।	1. मुल्ला की दौड़ मसजिद तक!
2. उर्दू	2. मियां की दौड़ मस्जिद तक।	2. मियां की दौड़ मसजिद तक!
3. ओड़िया	3. एण्डुअ दउड़ किया मुळकु।	3. गिरगिट की दौड़ (केवड़े की) झाड़ी तक!
4. कन्नड़	4. ओगिद कुत्ते अगसत्तिय तावु होयितु।	4. गधे की दौड़ धोबिन तक!
5. कश्मीरी	5. मुल्लस् टुंख मशीदि तार्यि	5. मुल्ला की दौड़ मसजिद तक!
6. गुजराती	6. गीरगुतनी दोड़ वाड़ सुधी।	6. मुल्ला की दौड़ मसजिद तक!
7. तमिल	7. कलुदै केंट्टाल कुट्टिचुवर :	7. गधे की पहुंच टूटी-फूटी दीवार तक!
8. तेलुगु	8. कुण्टिवानि परुगु इण्टिमुन्दरे।	8. लंगड़े की दौड़ सामने के घर तक!
9. पंजाबी	9. मुल्ला दी दौड़ मसीत ताईं।	9. मुल्ला की दौड़ मसजिद तक!
10. बांग्ला	10. मोल्लार दउड़ मस्जिद पर्जन्तो।	10. मुल्ला की दौड़ मसजिद तक!
11. मराठी	11. सरड्याची धाव कुंपणापर्यन्त।	11. गिरगिट की दौड़ झाड़ी तक!
12. मलयालम	12. चेम्मीन तुललीयालु मुट्टिनुमीते वलयिल!	12. मछली की उछाल जाल (में फँसने) तक!
13. सिंधी	13. मुल्लेजी ड्रुक मस्जिद ताईं।	13. मुल्ला की दौड़ मसजिद तक!
14. हिन्दी	14. मुल्ला की दौड़ मस्जिद तक।	14. मुल्ला की दौड़ मसजिद तक!

संयोजन एवं अनुवाद : रंग नाथ राकेश

संपादकाचार्य पं० अम्बिका प्रसाद वाजपेयी

—गौरीशंकर गुप्त

पंडित अम्बिका प्रसाद वाजपेयी सम्पादकाचार्य के रूप में विशेष प्रसिद्ध रहे हैं। वे हिन्दी पत्रकारिता की बृहत्त्रयी के प्रमुख स्तम्भ रहे हैं। उनकी साहित्य-सेवा बहुमुखी रही है। वे केवल हिन्दी के ही नहीं, अन्य कई भाषाओं के भी मर्मज्ञ थे। अधिकाधिक ज्ञानार्जन करने की उनकी भूख अंत तक बनी रही। अंतिम दिनों में जब वे रुग्ण थे, तब भी कन्नड़ तथा तेलुगू भाषायें सीखने के लिए प्रयत्नशील रहे। हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत, बंगला, गुजराती, मराठी, अरबी, फारसी, और उर्दू पर उनका समान अधिकार था। उन्होंने न केवल हिन्दी में, वरन् अंग्रेजी में भी ग्रंथ लिख कर अपनी अलौकिक प्रतिभा का परिचय दिया था। उस ग्रंथ का नाम है "परशियन इन्फ्लुएन्स आन हिन्दी"। उक्त ग्रन्थ का अनुवाद "हिन्दी पर फारसी का प्रभाव" नाम से छपा है।

वाजपेयी जी सन्, 1939 में अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के काशी अधिवेशन के सभापति चुने गये थे, जिसका ऐतिहासिक महत्व है। राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन् के विशेष अनुरोध पर उन्होंने उक्त पद स्वीकार किया था। "सम्मेलन" के सभापति के रूप में वाजपेयी की शोभायात्रा काफी धूमधाम से निकाली गयी थी। कई घोड़ों की टमटम पर वे विराजमान थे। उस समारोह में स्वागत समिति के अध्यक्ष महामना पंडित मदन मोहन मालवीय और राष्ट्रभाषा परिषद् के अध्यक्ष देशरत्न राजेन्द्र बाबू जैसी विभूतियां उपस्थित थीं। साहित्य परिषद के अध्यक्ष थे महाकवि पं. सूर्यकांत त्रिपाठी "निराला"। टमटम में लगे रजत-छत्र पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए वाजपेयी जी ने कहा था—"साहित्यकार और पत्रकार अपनी कलम तथा अपने मन का धनी होता है। सोना-चांदी तो सेठ साहूकारों की चीज है।"

वाजपेयी जी ने उस समय लेखनी उठाई थी, जब हिन्दी का क्षेत्र अत्यंत संकुचित था। उस समय उन्होंने हिन्दी को स्वर दिया, गति दी और दी दिशा। इतना ही नहीं, उन्होंने सारे जन समाज में चेतना उत्पन्न की और स्वतंत्रता का पथ दिखलाया।

वाजपेयी जी व्याकरण के भी अप्रतिम विद्वान थे। जिस प्रकार हिन्दी पत्रकारिता की बृहत्त्रयी में स्व. पं. बाबूराव विष्णुपराड़कर तथा स्व. पं. लक्ष्मण नारायण गर्दे के साथ उनका नाम सर्व प्रथम लिया जाता है, उसी प्रकार हिन्दी वैयाकरणों की आचार्यत्रयी में स्व. पं. कामता प्रसाद गुरू और पं. किशोरीदास वाजपेयी के साथ उनका नाम लिया जाता है। पं. अम्बिका प्रसाद वाजपेयी का उक्त आचार्यत्रयी में मध्यवर्ती स्थान है। उनकी "अभिनव हिन्दी-व्याकरण" नामक कृति कालजयी रचना है, जो प्रत्यक्ष रूपेण छात्रोपयोगी होने पर भी नवीन दृष्टि सम्पन्न रचना है। उसमें खण्डन-मण्डन की पद्धति अपनाने के बजाय उन्होंने अपने विचार दृढ़ता तथा स्पष्टता से प्रस्तुत किये हैं।

"सम्मेलन" ने उनको "साहित्य वाचस्पति" की उपाधि से सम्मानित भी किया था। काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने उनको "डा. श्यामसुन्दरदास पुरस्कार" भेंट किया था। बहुत कम लोगों को यह ज्ञात होगा कि **वाजपेयीजी ने हिन्दी के शब्द भण्डार को अनेक नये शब्दों से समृद्ध भी किया था।** उदाहरण के लिए—अंगरेजी शब्द "नेशन" के स्थान पर बंगाल में उन दिनों "जाति" शब्द चलता था, जिसके अनुकरण पर हिन्दी के समाचारपत्र "जाति" शब्द का ही प्रयोग करते थे। बंगला में कदाचित "जाति" शब्द राष्ट्र का बोधक या प्रतीक होता है और बंगला भाषियों का अभिप्राय जातीय से राष्ट्रीय का होता है। राष्ट्रकवि पंडित माधव शुक्ल को देशबन्धु चितरंजन-दास "जातीय कवि" कहा करते थे। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस से सम्बद्ध "महाजाति सदन" में "जाति" शब्द राष्ट्र के अर्थ में ही प्रयुक्त हुआ प्रतीत होता है। **वाजपेयीजी पहले व्यक्ति थे,** जिन्होंने "नेशन" तथा "जाति" के लिए "राष्ट्र" शब्द का प्रयोग किया।

"राष्ट्रभाषा" शब्द भी वाजपेयी जी की ही देन है। एक पत्रकार के रूप में उनकी सर्वाधिक महत्वपूर्ण दो उपलब्धियां रहीं हैं—(1) राष्ट्रीय विचारों का निर्भीकतापूर्वक प्रचार-प्रसार एवं (2) राष्ट्रभाषा का प्रतिमानीकरण। आज से 75 वर्ष पूर्व उन्होंने हिन्दी की राष्ट्रीय महत्ता का विवेचन करते हुए हिन्दी भाषियों के कर्तव्य का संकेत किया था। सन् 1907 में उन्होंने कलकत्ता से "नृसिंह" नामक एक राजनीतिक मासिक निकाला था। शुद्ध राजनीतिक मासिक होते हुए भी वाजपेयी जी ने समाजचर्या की विविध सरणियों को अपने विचार का उपजीव्य बनाया और "नृसिंह" के माध्यम से उसे प्रकाशित किया। राष्ट्रभाषा का प्रश्न जातीय उन्नयन से सम्बद्ध एक मुख्य प्रश्न था। अतः उन्होंने "नृसिंह" के प्रथमांक में ही "राष्ट्र-भाषा" शीर्षक से सम्पादकीय लिखा था, जिसका ऐतिहासिक महत्व है। उक्त लेख क्रमशः चार अंकों में पूर्ण हुआ था। उसमें उन्होंने अपने विषय का पाण्डित्यपूर्ण विवेचन किया था। कुछ अंश द्रष्टव्य हैं—

"........समस्त देश में एकता उत्पन्न करने के लिए जिन तीन बातों की आवश्यकता होती है, उनमें सार्वजनिक भाषा ही प्रधान है।........अब समय आ गया है कि समस्त भारतवासी विद्वान अथवा मूर्ख तन, मन, धन से स्वदेशोन्नति के लिए कमर कसकर खड़े हो जायं। पर सर्वसाधारण को जगाने का काम विदेशी भाषा से कभी नहीं हो सकता। उसके लिए राष्ट्रभाषा का प्रयोजन है।"

वाजपेयी जी में पाण्डित्य, निर्भीकता तथा स्पष्टवादिता का अद्भुत समन्वय था। स्वाध्याय के बल पर ही उन्होंने अक्षय यश अर्जित किया था। सन् 1900 में उन्होंने एन्ट्रेन्स परीक्षा उत्तीर्ण

की थी और एक समय वह भी आया था, जब डिग्री डिप्लोमा से वंचित होने पर भी वे **कलकत्ता विश्वविद्यालय की सर्वोच्च परीक्षाओं के परीक्षक नियुक्त किये गये थे।** उनकी दृष्टि अत्यंत पैनी और नीरक्षीर-विवेचनी थी। उनमें एक आदर्श आलोचक या समीक्षक के सभी गुण विद्यमान थे। उन जैसे आचार्य इने-गिने ही हुए हैं। वस्तुतः वे आचार्यों के आचार्य थे। तभी एक बार उन्होंने कहा था—"........आज के पत्रकार स्वयंभू हैं। उन्हें किसी बात की अपेक्षा नहीं, सब बातों की उपेक्षा है। स्वराज्य नहीं था, तब लोगों को ज्ञान पिपासा थी। अब आकण्ठ तृप्ति हो गयी है।......."

एक बार अपनी पुस्तक "पत्रकार बृहत्त्रयी" (वाजपेयी पराड़कर, गर्दे) में मैंने सुप्रसिद्ध गांधीवादी साहित्यकार स्व. रामनाथ 'सुमन' के ये विचार उद्धृत किये थे—

".......यह हिन्दी के लिये बड़े आश्चर्य और गौरव की बात है कि उसके पुराने उन्नायकों में सर्वश्री माधवराव सप्रे, अमृतलाल चक्रवर्ती, बाबूराव विष्णु पराड़कर, लक्ष्मण नारायण गर्दे, गौरीशंकर हीराचंद ओझा, लज्जाराम मेहता जैसे अहिन्दी भाषी थे। कदाचित् यही उसकी राष्ट्रीयता या राष्ट्रीय भाषा होने का प्रमाण है।......"

अपनी उक्त पुस्तक (प्रथम संस्करण) वाजपेयी जी की सेवा में भेजते हुए उनसे मैंने तथ्यात्मक भूलों की ओर ध्यान दिलाने का विशेष अनुरोध किया था। उत्तर में प्राप्त उनका वह महत्वपूर्ण पत्र यहां पहली बार उपस्थित कर रहा हूं:—

श्री :

नजरबाग,
लखनऊ, 12-9-58

प्रिय गौरीशंकर जी,

आशीर्वाद। अत्र शन्तत्रास्तु। आपकी भेजी पुस्तक यथासमय मिल गयी थी। बिना पढ़े उसके विषय में कुछ लिख देना अनुचित समझकर ही इसके पहले कुछ नहीं लिखा। पहुंच तक नहीं लिखी।

पुस्तक के दूसरे पृष्ठ पर जो "आश्चर्य" प्रकट किया है उसका कारण अज्ञान है। यह न भूलना चाहिये कि जब एक भाषा का मनुष्य दूसरी भाषा के क्षेत्र में बस जाता है, तो उसका सम्बन्ध अपनी भाषा से कम और दूसरी भाषा से अधिक हो जाता है। लल्लूलाल, मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या, रामेश्वर भट्ट और उनके तीनों लड़के, गौरीशंकर ही. ओझा, लज्जाराम मेहता, अमृतलाल चक्रवर्ती, मन्मथनाथ गुप्त, सुरेश भट्टाचार्य प्रभृति बंगलाभाषी अथवा विद्याभास्कर जैसे तेलुगू भाषी हिन्दी **में क्यों लिखने लगे और हिन्दी के क्यों हो गये क्या यह विचारणीय** नहीं है? **यही प्रश्न मराठी भाषी हिन्दी लेखकों के सम्बन्ध में है।** चाहे वे मध्य प्रदेश में रहते हैं या उत्तर प्रदेश की काशी या बिठूर में। लेखक का आश्चर्य यह जानकर अवश्य बढ़ जायेगा कि सखारामजी गणेश देउस्कर की वंश भाषा मराठी और आचार्य रामेन्द्र सुंदर त्रिवेदी की हिन्दी थी, पर न उन्होंने कभी कुछ मराठी में और न इन्होंने कभी कुछ हिन्दी में लिखा। दोनों ही बंगला के प्रसिद्ध लेखक हैं। क्यों? इसलिये कि वंशभाषा से तो इनका नाता एक प्रकार से टूट ही चुका था। सखारामजी ने बोलने और पढ़ने भर की मराठी तो सीख भी ली थी, पर त्रिवेदी जी तो शायद हिन्दी बोल भी नहीं सकते थे। लिखना तो दूर की बात है।

यह प्रकृति का नियम है। यहां के विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. अय्यर की वंशभाषा तमिल है, पर वे बस गये जाकर केरल में। इसलिये तमिल में उतने दक्ष नहीं हुए जितने मलयालम में। इसी प्रकार लोकसभा के सर्वप्रथम स्पीकर अनंत शयनम् अयंगर तमिल भाषी हैं, पर बस गये आन्ध्र में, इसलिये तमिल की अपेक्षा तेलुगू अधिक अच्छी जानते हैं। इसलिये यदि कोई समझे कि उन्होंने मलयालम या तेलुगू के प्रेम के कारण ऐसा किया है, तो उसका अज्ञान ही प्रकट होगा। जिन लोगों ने दूसरी भाषा को अपनाया है, उनमें प्रायः सबने दूसरी भाषा की ही शिक्षा पायी है। वे वंशभाषा का प्रयोग घरों में वैसे ही करते हैं जैसे हम बैसवाड़ी या अवधी बोली का और बनारसी बोली का।

कहीं-कहीं लोगों ने वंशभाषा सीखने के लिये विद्यालय भी स्थापित किये हैं। पर यह प्रवृति थोड़े दिनों की है। इसे 60 वर्ष भी अभी नहीं हुए। फिर भी बंगालियों को अपनी भाषा का अभिमान अधिक है और उन्होंने बंगला स्कूल भी चलाये हैं। हां, पं. ऋषीकेश शास्त्री भट्टाचार्य ने बंगला में हिन्दी व्याकरण लिखा, यह अवश्य ही महत्व की बात है। कोलापुर के पं. दामोदर शास्त्री सप्रे ने जब तक उत्तर भारत में संचार किया, चाहे काशी में रहे या पटने में हिन्दी की सेवा की और उसका व्याकरण भी लिखा। संस्कृत के प्रचार का भी काम किया और फिर महाराष्ट्र में चले गये। इन्हें काशी के मराठी भाषियों से भिन्न समझना चाहिये।

हम उन लोगों को हिन्दी अपनाने के लिये कोई महत्व नहीं देते, जो यहीं जन्मे, सयाने और शिक्षित हुए और जिन्होंने स्कूलों में द्वितीय भाषा के रूप में गुजराती, बंगला या मराठी के बदले हिन्दी ही पढ़ी। पर हिन्दी के लेखक गम्भीर चिन्तन से बहुत दूर रहते हैं और अपने आचरण से "काता और ले दौड़ी" कहावत चरितार्थ करते हैं। इसका यह अर्थ न समझना चाहिये कि जिनकी जन्मभाषा हिन्दी नहीं रही है और जिन्होंने हिन्दी में काम किया है, हम उनके काम को महत्व नहीं देते। पर हमें वस्तुस्थिति की अवहेलना नहीं करनी चाहिये। ऐसी ही टिप्पणी बाबूरावजी के "संसार" से हटने पर किसी बिहारी पत्र में हमने पढ़ी थी। इसलिए आपकी जानकारी के लिये इतना लिखा है।

'..........आपने परिश्रमपूर्वक यह पुस्तक छपायी और हम लोगों को बहुत ही आदर और सम्मानपूर्ण शब्दों में याद किया अथवा लोगों के सामने उपस्थित किया इसके लिए आपको धन्यवाद है। हम लोगों को अपने कार्य पर कोई गर्व नहीं है, क्योंकि हम इसे कर्तव्यपालन मात्र समझते हैं। सम्भव है इसमें भी त्रुटियां हुई हों और जैसा अंगरेजी में कहते हैं "गलती इन्सान से ही होती है"। आशा है आप इसमें बतायी बातों को छिद्रान्वेषण न समझेंगे।

भवदीय,
अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी

बन्धुवर डा. कृष्ण बिहारी मिश्र का यह कथन बहुत महत्वपूर्ण है कि वाजपेयीजी की अनेक प्रकाशित पुस्तकों में वह विपुल सामग्री नहीं आ सकी है, जो विभिन्न पत्रों के माध्यम से उन्होंने रची है। शताब्दी–जयंती वर्ष में कम-से-कम वाजपेयी जी की लिखावट को व्यवस्थित ढंग से संकलित कर उसकी पुस्तक रूप में प्रकाशन व्यवस्था की जा सके तो हम परवर्ती पीढ़ी को एक विशिष्ट विचार-सम्पदा दे सकेंगे। **हिन्दी-पत्रकारिता के आधार-स्तम्भ पं. अंबिकाप्रसाद वाजपेयी को श्रद्धांजलि देने की यही** सारस्वत शैली है।.....□ □

राष्ट्रभाषा और हिन्दी

—डा० परमेश्वरदीन शुक्ल

भारतवर्ष की राष्ट्रभाषा तथा हिन्दी के सम्बन्ध में मेरी कुछ धारणाएं हैं जिन्हें मैं पाठकों के सामने रखना चाहता हूं। व्यावहारिक दृष्टि से राजभाषा और राष्ट्रभाषा में अन्तर करना प्रायः नामुमाकिन है। इसलिए जो कुछ मैं यहां राष्ट्रभाषा हिन्दी के सम्बन्ध में कह रहा हूं, वही राजभाषा हिन्दी पर ही लागू होता है। मेरी प्रार्थना है कि किसी भी भाषा के साथ साधारणतः जो भावुकता लगी रहती है उसको दूर रख कर ही इन धारणाओं पर विचार किया जाए। यह भी आवश्यक है कि राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार व प्रसार में जो प्रगति अभी तक हुई है (या नहीं हुई है) और उसके द्वारा जो स्थिति पैदा होती है उसको भी ध्यान में रखा जाये। मेरी मातृ-भाषा हिन्दी है, मैं हिन्दी क्षेत्र उत्तर प्रदेश का हूं और मेरी शिक्षा अंग्रेजों के समय और अंग्रेजी के माध्यम से हुई, फिर भी मैं हिन्दी से रूचि रखता हूं और उसे प्रोत्साहन देने का लगातार प्रयत्न करता रहता हूं। मैंने तकनीकी और साहित्यिक दोनों प्रकार की पुस्तकें हिन्दी में लिखी हैं। मैं अपनी तनख्वाह हिन्दी के दस्तखत से (अंग्रेजी के नहीं) लेता रहा हूं। मैं चैक हिन्दी में लिखता हूं अंग्रेजी में छपे फार्म हिन्दी में भरता हूं और अधिकतर पत्र-व्यवहार हिन्दी के माध्यम से ही करता हूं। इसलिए आशा है कि पाठक मुझे हिन्दी का विरोधी नहीं समझेंगे जहां तक मेरा ताल्लुक है, मैं इन धारणाओं को सच्चाई से राष्ट्रभाषा तथा हिन्दी के हित में ही मानता हूं।

मेरी पहली धारणा के अनुसार हिन्दी के दो रूप हैं: हिन्दी (हिन्दी क्षेत्र में) और राष्ट्रभाषा (हिन्दीतर क्षेत्र में)। या यों कहिए कि (i) साहित्यिक हिन्दी और (ii) साधारण हिन्दी। हिन्दी भाषा के कई गुण हैं और वह पूर्ण रूप से स्वनिक है। लेकिन इसका व्याकरण काफी ढीला है। हिन्दीतर मातृभाषा वालों की हिन्दी व्याकरण में काफी कठिनाई होती है। हिन्दी में "दही खाया जाता है पर इमली खाई जाती है।" इसी प्रकार घोड़ा आता है और हाथी भी आता है। मैं मानता हूं कि हम हिन्दी मातृ-भाषा वालों का उत्तरदायित्व है कि इस कठिनाई को समझें और हिन्दी सीखने वालों को उस भाषा के बोलने तथा लिखने में काफी छूट दें। भाषा का उद्देश्य अपनी बात को दूसरों तक पहुंचाना है। यदि यह ध्येय पूरा होता है तो कुछ हद तक शुरू के अशुद्ध व्याकरण वाली हिन्दी को भी ठीक मानकर उसके बोलने या लिखने वालों को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

मेरी दूसरी धारणा है कि राष्ट्रभाषा हिन्दी में भारतवर्ष की अन्य भाषाओं के प्रचलित अथवा दूसरे प्रकार के अच्छे शब्द दिल खोलकर लेने चाहिएं और उन पर हिन्दी व्याकरण की छाप लगाकर हिन्दी का ही बना लेना चाहिए। उदाहरण के लिए, तमिल में "इले" और "आमा" क्रमशः "नहीं" तथा "हां" के लिए प्रयोग किए जाते हैं। ये बड़े सुन्दर और सरल शब्द हैं। इन्हें क्यों न हिन्दी में ले लिया जाये। इस प्रयत्न से हिन्दी का शब्द भण्डार बढ़ेगा और हिन्दीतर लोगों को हिन्दी अधिक स्वीकार होगी। इस दिशा में प्रयास करना भी हिन्दी लेखकों और पाठकों की जिम्मेदारी है।

तीसरी धारणा यह है कि अपने त्रिभाषा सूत्र के अन्तर्गत हिन्दी क्षेत्र में स्कूल के बच्चों को दक्षिण की या भारतवर्ष की कोई अन्य आधुनिक तीसरी भाषा को उस भाषा की लिपि के द्वारा नहीं बल्कि देवनागरी लिपि में सिखाना चाहिए। मैं ऐसा मानता हूं कि अपने देश के भाषाई संदर्भ में (और वैसे भी) भाषा और उसकी लिपि को अलग-अलग समझना चाहिए। कुछ हद तक ये अलग-अलग हैं भी जैसे स्वतंत्रता के पहले हमारे फौजियों को हिन्दी रोमन लिपि में सिखाई जाती थी और सिन्धी भाषा आज अधिकतर देवनागरी में लिखी जाती है पर कुछ लोग इसे अरबी लिपि में भी लिखते हैं। सच बात तो यह है कि अपने देश की कोई भी भाषा काफी हद तक देश की किसी भी दूसरी भाषा की लिपि में लिखी जा सकती है।

त्रिभाषा सूत्र के अन्तर्गत हिन्दीतर क्षेत्रों के स्कूलों में बच्चों को उनकी मातृभाषा, हिन्दी और अंग्रेजी (अथवा कोई अन्य विदेशी भाषा) सिखाई जानी है और इसी प्रकार हिन्दी क्षेत्रों में हिन्दी, देश की कोई अन्य आधुनिक भाषा जिसमें प्राथमिकता दक्षिण की भाषाओं को हो और अंग्रेजी (अथवा कोई अन्य विदेशी भाषा) सिखानी है। तमिलनाडू को छोड़कर सभी हिन्दीतर प्रान्तों में त्रिभाषा सूत्र लागू है और वहां के स्कूली बच्चे थोड़ी बहुत हिन्दी सीखते भी हैं, पर हिन्दी क्षेत्रों में हिन्दी और अंग्रेजी के अतिरिक्त दक्षिण की कोई भाषा अथवा देश की कोई अन्य आधुनिक भाषा के स्थान पर अधिकतर संस्कृत सिखाई जाती है। संस्कृत का अपना महत्व है। हिन्दी क्षेत्रों में भी बच्चों को दक्षिण की कोई भाषा अथवा देश की कोई आधुनिक भाषा पढ़ाने के प्रयत्न होते रहते हैं, पर वे प्रयत्न सफल नहीं हुए हैं। उनकी असफलता के कारण भी समझ में आते हैं। कुछ भी हो, हिन्दीतर क्षेत्रों की यह शिकायत है कि हिन्दी क्षेत्र वाले लोग किसी हिन्दीतर आधुनिक भाषा की पढ़ाई अपने विद्यार्थियों को नहीं करवाते जबकि हिन्दीतर क्षेत्र के बच्चे हिन्दी पढ़ते हैं।

इस स्थिति में हिन्दी क्षेत्रों में देवनागरी लिपि के माध्यम से दक्षिण की या देश की किसी अन्य आधुनिक भाषा के सिखाने का प्रयोग किया जाना चाहिए। इससे बच्चे के ऊपर

नई भाषा के सीखने का बोझ आधा हो जायेगा और वह दूसरी भाषा बोलने लगेगा चाहे वह उसे लिख न पाए। इससे हिन्दी में अन्य भाषाओं के शब्द आने के संस्कार बनने लगेंगे और इस प्रकार हिन्दी प्रान्तों के खिलाफ त्रिभाषा सूत्र को न चलाने की शिकायत दूर हो जाएगी। हिन्दी क्षेत्र वाले जिन बच्चों को साहित्यिक रुचि होगी और यदि वे चाहेंगे तो सम्बन्धित भाषा की लिपि भी बाद में सीख सकते हैं।

मेरी चौथी धारणा के अनुसार हिन्दी और उर्दू को दो अलग-अलग भाषाएं नहीं मानना चाहिए। हिन्दी के कई रूप हैं: बृज भाषा, भोजपुरी, अवधी इत्यादि जो अधिकतर सीमित क्षेत्रों में बोली जाती है। इसी प्रकार उर्दू भी हिन्दी का एक रूप है जो लखनऊ, दिल्ली और हैदराबाद में खासतौर से बोली जाती है। हिन्दी और उर्दू के प्रचलित शब्द एक ही हैं। हां, उर्दू की लिपि भिन्न है। पर लिपि भिन्न होने से भाषा भिन्न नहीं हो जाती। जैसा कि अभी कहा गया है कि सिन्धी भाषा देवनागरी और फारसी दोनों लिपि में लिखी जाती है, पर भाषा सिन्धी ही है। इसलिए मैं चाहता हूं कि हिन्दी जगत को उर्दू के सारे शब्द हिन्दी के ही शब्द मानक इस्तेमाल करना चाहिए।

मेरी अन्तिम धारणा यह है कि राष्ट्रभाषा के प्रचार और प्रसार के कार्य में अहिन्दी भाषी विद्वानों का अधिक से अधिक सहयोग प्राप्त करना चाहिए। उन्हीं हिन्दी मातृभाषा वाले विद्वानों के मुकाबले अधिक आसानी से नये हिन्दी सीखने वालों की समस्याएं समझ में आएंगी। उन समस्याओं का हल, जो वे निकालेंगे, वह भी राष्ट्रभाषा सीखने वालों को अधिक मान्य हो सकता है। इसमें मनोवैज्ञानिक लाभ भी है।

मैंने स्वयं इन धारणाओं पर काफी सोचा और विचारा है। राष्ट्रभाषा हिन्दी की प्रगति को भी सबके साथ देखा है और देख रहा हूं। मैं कभी-कभी सोचता हूं कि यदि हिन्दी की जगह पर संस्कृत को राष्ट्रभाषा का पद दिया गया होता, तो जो कठिनाइयां आज राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रति उठ रही हैं, वे नहीं उठतीं। पर संभवतः ऐसा वैज्ञानिक परिवर्तन अब नहीं हो सकता है। दूसरी बात यह भी मन में आ जाती है कि यदि स्वतन्त्रता के बाद नया विधान लागू होते ही हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में सारे देश में फैला दिया जाता जैसा कि रूसी सरकार ने रूसी भाषा के सम्बन्ध में अपने देश की क्रान्ति के बाद किया था तो राष्ट्रभाषा की समस्या ही हल हो गई होती। पर समय वापस नहीं आता, वह तो आगे ही आगे जाता रहता है। इसलिए मेरी सारी धारणाएं भविष्य को सामने रखकर बनी हैं और उनका आधार व्यावहारिक है, भावुकता का नहीं। ●

> मेरे लिए हिन्दी का प्रश्न स्वराज्य का प्रश्न है।
>
> —महात्मा गांधी

भारतीय भाषाओं में हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं का स्थान

—डा० रामचन्द्र तिवारी

हिन्दी के आदि संपादक अभिव्यक्ति की उद्दम कामना एवं देशहित की उदात्त भावना से प्रेरित होकर ही पत्र-प्रकाशन की ओर उन्मुख हुए थे। उस समय संपादन-कर्म संपादक की लेखनी के पैनेपन तथा देश एवं समाज की अवस्था की व्यापक अनुभूति से प्रेरित था। साक्षरता का व्यापक प्रसार नहीं था, मुद्रण की सुविधाएं सीमित थी और पत्र प्रकाशन व्यवसाय नहीं था, मिशन था। उनके सामने संपादन के कोई मानदण्ड भी नहीं थे। उनका विवेक ही उनका मार्ग दर्शक था। पत्रों की संख्या भी थोड़ी ही थी। वह युग ही और था।

पहला पत्र

हिन्दी का सप्रमाण पहला पत्र है 'उदन्त मार्तण्ड' जिसके संपादक, प्रकाशक और मुद्रक कानपुर निवासी पं, युगल किशोर शुक्ल थे और यह 30 मई, 1826 को कलकत्ता से निकला था। पश्चिमोत्तर प्रदेश से नौकरी धंधे की तलाश में कलकत्ता आये लोगों में से बहुतों ने अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त करके आधुनिक चेतना से जुड़ने की चेष्टा की। हिन्दी समाज को आधुनिकता से जोड़ने की इस बलवती प्रेरणा का परिणाम ही 'उदन्त मार्तण्ड' का प्रकाशन था।

स्वतंत्रता के बाद परिस्थितियां ही नहीं, हमारी आवश्यकताओं का स्वरूप भी बदल गया और लोक कर्तव्य एवं अधिकार ने दूसरी दिशा ग्रहण की। देश के सामने निर्माण का महान कार्य उपस्थित हुआ और इस कार्य को सफल बनाने का सबसे अधिक भार पत्रकारों पर आ पड़ा। देश को स्वतंत्र राष्ट्र के अनुरूप निर्मित करना एवं राष्ट्र जीवन के सभी अंगों के विकास में समुचित सहायता प्रदान करना पत्रकारों का दायित्व बन गया।

स्वतंत्रता के पूर्व पत्रिकाओं के उद्देश्य थे:—(1) वैचारिक क्रांति ला कर देश की स्वतंत्रता के लिए प्रयत्न करना और (2) हिन्दी और देवनागरी लिपि को बढ़ावा देना। स्वतंत्रता के उपरान्त पत्रिकाओं के उद्देश्य व्यापक रूप से ये हो गये:—(1) देश को नया दृष्टिकोण प्रदान करना; (2) हिन्दी के माध्यम से ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्रों का उद्घाटन करना; (3) नूतन निर्माण की विविध विधाओं को प्रोत्साहन देना; (4) भारतीय संस्कृति और सभ्यता को मुक्त वातावरण में फैलाना; (5) भावनात्मक ऐक्य की दृष्टि से संपूर्ण भारतीय भाषाओं के मध्य सामंजस्य पैदा करना; (6) रचनाकारों की कुंठा तिरोहित कर उनकी सृजनशीलता जगाना; (7) विविध क्षेत्रों में विचार मंथन, मौलिक शोध एवं सशक्त अभिव्यक्ति की उत्प्रेरणा देकर वाणी देना; और (8) सामाजिक स्तर पर नैतिकता की वरीयता प्रतिष्ठित करना।

संख्या वृद्धि

स्वतंत्रता के बाद, जन मानस की सदियों से अवरुद्ध आशा-आकांक्षाओं एवं शक्तियों को सप्रयोजन अभिव्यक्ति का मार्ग मिला। उद्वेलित विचार वाणी पाने को आकुल हो उठे। पत्रिकाओं ने इस दृष्टि से अपनी अभीष्ट भूमिका अभिनीत की और पत्रिकाएं ऐसा माध्यम बनीं जिसका जनता पर सर्वाधिक प्रभाव हो और जनता जिससे अपनी सहायता, पथ-प्रदर्शन एवं अधिकार संरक्षा की अपेक्षा रख सके। हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं की पत्र-पत्रिकाओं का देश की उस जनता के साथ सम्बन्ध निकटतर हुआ जो बौद्धिक विकास की दृष्टि से पिछड़ी हुई स्थिति में है।

पत्र पत्रिकाओं सम्बन्धी जानकारी व्यवस्थित रूप से 1959 से मिलती है जब पहले प्रैस कमीशन (1952) की रिपोर्ट (1954) के अनुसार रजिस्ट्रार आफ न्यूज पेपर्स के कार्यालय की स्थापना हुई। यह कार्यालय देश की सभी भाषाओं में प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं का रजिस्ट्रेशन करता है, एक विशाल रजिस्टर रखता है और पत्र-पत्रिकाओं के नियमित प्रकाशन की जांच करता है। इस कार्यालय से प्रकाशित रिपोर्ट 'भारत के समाचार पत्र' (प्रैस इन इंडिया) दो भागों में होती है जिसमें से प्रथम भाग में पत्र-पत्रिकाओं की संख्या, प्रसार, स्वामित्व, विषय वर्गीकरण, प्रकाशन केन्द्र आदि से सम्बन्धित जानकारी का विश्लेषण होता है और दूसरे भाग में विभिन्न राज्यों से प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं की नियतकालिकता के अनुसार भाषावार सूची रहती है। इस सूची में हर पत्रिका का नाम, प्रकाशन आरंभ होने का वर्ष, प्रकाशन स्थान का पता, प्रकाशक का नाम, मुद्रक का नाम, संपादक का नाम, प्रत्येक अंक का विक्रय मूल्य, मुद्रणालय का नाम, मालिक का नाम, प्रसार संख्या तथा पत्रिका के विषय-वस्तु की जानकारी क्रमानुसार दी जाती है। इसमें पहले अंग्रेजी, फिर हिन्दी और फिर अन्य भारतीय भाषाओं की पत्र-पत्रिकाओं का विवरण वर्ण-क्रमानुसार दिया जाता है।

1956 की स्थिति

31 दिसम्बर, 1956 को भारत में 6015 पत्रिकाएं थीं इनमें से अंग्रेजी की पत्रिकाएं 1063, हिन्दी की 1147, असमी की 14, बंगाली 618, गुजराती 382, कन्नड 162, मलयालम 142, मराठी 299, उड़िया 130, पंजाबी 98, संस्कृत 7, तमिल 320, तेलुगु 200, उर्दू 494, द्विभाषी 533, बहुभाषी 296 तथा अन्य 120 थीं।

रजिस्ट्रार आफ न्यूज पेपर्स की यह पहली रिपोर्ट थी, इसलिए इसमें जातीय, ज्योतिष, विद्यालय पत्रिकाएं और बाजार रिपोर्ट या प्रतिष्ठान पत्रिकाएं आदि सभी शामिल थीं। बाद में इस प्रकार की पत्रिकाओं की अलग श्रेणी बना दी गई। इस प्रकार की पत्रिकाओं की भी काफी बड़ी संख्या होती है अतः इस रिपोर्ट

की तुलना 1977 की संख्या से करने पर लगेगा कि प्रगति अधिक नहीं है। फिर भी पत्रिका वर्ग में परिगणित 1977 की 14,531 की संख्या 21 वर्षों में हुई आसाधारण प्रगति की सूचक है। 1956 में दर्ज 6015 पत्रिकाओं में से अंग्रेजी की 1063, द्विभाषी 533, बहुभाषी 296 तथा अन्य 110 पत्रिकाएं निकाल दें तो भारतीय भाषाओं की पत्रिकाओं की 4013 पत्रिकाओं में हिन्दी पत्रिकाओं (1147) का स्थान बहुत महत्वपूर्ण रहा है। संख्या की दृष्टि से हिन्दी पत्रिकाओं ने अपनी सर्वप्रथम स्थिति बनाये ही रखी है।

1977 की स्थिति

भारत के समाचार पत्रों के रजिस्ट्रार का नवीनतम प्रतिवेदन 1978 के वर्ष का है। इसके अनुसार दिसम्बर, 1977 में भारत में प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं की संख्या 14,531 थी जिनमें से सर्वाधिक अर्थात् 3736 पत्र-पत्रिकाएं हिन्दी में, उसके बाद 2892 अंग्रेजी में, फिर क्रमशः 1047 उर्दू में, 1003 बंगला में, 861 मराठी में, 653 तमिल में, 618 गुजराती में और 567 मलयालम में थीं।

1194 पत्र द्विभाषी और 279 पत्र बहुभाषी थे। ये पत्र-पत्रिकाएं भारत की कुछ 68 भाषाओं में प्रकाशित होते हैं, जिनमें 16 मुख्य भाषाएं और बोलियों एवं विदेशी भाषाओं सहित 'अन्य' 52 भाषाएं हैं।

हिन्दी में 281 दैनिक पत्र निकलते हैं, 26 पत्र सप्ताह में दो या तीन बार प्रकाशित होते हैं। हिन्दी में साप्ताहिकों की संख्या 1705, पाक्षिकों की 525, मासिक पत्रिकाएं 982, त्रैमासिक 154, वर्ष में दो या तीन बार प्रकाशित होने वाली 46 और वर्ष में एक बार प्रकाशित पत्रिकाएं 17 हैं। इस प्रकार हिन्दी पत्रिकाओं की कुल संख्या 3429 है।

हिन्दी पत्रिकाओं की विषय के अनुसार संख्या इस प्रकार है:—समाचार एवं सामयिक विषय–2129, साहित्य एवं संस्कृति–468, धर्म एवं दर्शन–242, वाणिज्य एवं उद्योग–37, चिकित्सा और स्वास्थ्य–59, शिक्षा–25, कानून और लोक प्रशासन–13, इंजीनियरी और प्रौद्योगिकी–9, कृषि और पशु पालन–63, बाल–34, परिवहन एवं संचार–10, बीमा, बैंकिंग एवं सहकारिता–16, विज्ञान–8, वित्त एवं अर्थशास्त्र–12, महिला–19, कला–3, रेडियो एवं संगीत–6, खेल-कूद–9 तथा अवर्गीकृत–3।

अन्य भाषाओं की पत्रिकाएं

अंग्रेजी की कुल पत्रिकाओं की संख्या 2734 है। इन्हें तथा हिन्दी की 3429 पत्रिकाएं निकाल दें तो सभी भाषाओं की पत्रिकाओं की संख्या 13,524 में से भारतीय भाषाओं की पत्रिकाओं की संख्या कुल 7301 बैठती है। इनमें से असमिया की पत्रिकाओं की संख्या–46, बंगला की–967, गुजराती की–579, कन्नड–272, कश्मीरी–1, मलयालम–474, मराठी–754, उड़िया–141, पंजाबी–296, संस्कृत–25, सिंधी–57, तमिल–592, तेलुगु–440, उर्दू–949, द्विभाषी–1165, बहुभाषी–277 और अन्य–166 हैं।

हिन्दी और अंग्रेजी को छोड़कर अन्य भारतीय भाषा में विषय वैविध्य बहुत नहीं है। असमिया में समाचार एवं सामयिक विषय की 13 और फिल्म, समाज कल्याण, कृषि एवं पशुपालन, बाल और रेडियो-संगीत की एक एक पत्रिका है और अवर्गीकृत पत्रिकाएं 21 हैं। कश्मीरी में तो केवल साहित्य की एक पत्रिका है। संस्कृत में समाचार-सामयिक विवेचन की तीन, साहित्य संस्कृति की 18 और धर्म एवं दर्शन की 4 पत्रिकाएं हैं। इसी प्रकार सिंधी में समाचार एवं सामयिक विवेचन की 20, साहित्य संस्कृति की 15, धर्म एवं दर्शन की 9, फिल्म की पांच, बच्चों की दो और रेडियो एवं संगीत की एक पत्रिका है। पांच पत्रिकाएं अवर्गीकृत हैं। उड़िया में समाचार एवं सामयिक विवेचन की 16, साहित्य एवं संस्कृति की 23, धर्म-दर्शन की 14 पत्रिकाएं हैं, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य, श्रम और परिवहन-संचार को दो-दो, फिल्म एवं समाज कल्याण की तीन-तीन, बच्चों की पांच और कृषि-पशु पालन एवं बीमा बैंकिंग आदि की एक-एक पत्रिका है। उड़िया की 69 पत्रिकाएं अवर्गीकृत श्रेणी की हैं।

इन भाषाओं में इंजीनियरी एवं प्रौद्योगिकी, परिवहन एवं संचार, बीमा, बैंकिंग व सहकारिता, वित्त एवं अर्थ-शास्त्र, कला और रेडियो एवं संगीत की पत्रिकाएं थोड़ी हैं।

इंजीनियरी एवं प्रौद्योगिकीकी तो गुजराती एवं मराठी में ही एक पत्रिका है। **परिवहन संचार की** बंगला एवं तेलुगू में तीन-तीन और कन्नड, मलयालम, मराठी एवं तमिल में एक एक पत्रिका है। **वित्त और अर्थ शास्त्र** की बंगला में चार पत्रिकाएं हैं लेकिन गुजराती, कन्नड, मराठी और तमिल में एक पत्रिका है। कला की भी बंगला में चार और मराठी में दो तथा कन्नड एवं तेलुगू में एक-एक पत्रिका है। इसी तरह रेडियो एवं संगीत की बंगला में चार, तमिल तेलुगू में दो-दो और गुजराती, कन्नड एवं उर्दू में एक-एक पत्रिका है।

इस प्रकार प्रकट है कि पत्रिकाओं की दृष्टि से बंगला को छोड़कर अन्य भाषाएं उक्त विषयों में अधिक आगे नहीं बढ़ी हैं। बड़ी संख्या में पत्रिकाएं समाचार एवं सामयिक विवेचन, साहित्य संस्कृति एवं धर्म-दर्शन की ही हैं। आधुनिक युग की विज्ञानमयता ने इस क्षेत्र में विशेष प्रभाव नहीं डाला है। बड़ी संख्या में अवर्गित पत्रिकाओं का सभी भाषाओं में होना यही प्रकट करता है कि वहां पचमेल शोरनी बनाने की प्रवृत्ति अधिक है। विज्ञान आदि विषयों की विशेषज्ञतायुक्त पत्रिकाएं या तो है हो नहीं, या बहुत कम हैं।

इस दृष्टि से हिन्दी में विषय विविध अधिक हैं हिन्दी की अवर्गित पत्रिकाएं केवल तीन ही हैं और जिन 21 अन्य वर्गों की पत्रिकाएं देश में निकलती हैं, उन सभी विषय वर्गों की पत्रिकाएं हिन्दी में हैं। समाचार एवं सामयिक विवेचन की पत्रिकाओं में से अंग्रेजी, द्विभाषी एवं बहुभाषी पत्रिकाएं छोड़कर अन्य भारतीय भाषाओं की 3,877 पत्रिकाओं में से हिन्दी की पत्रिकाएं आधे से भी कहीं अधिक अर्थात् 2,159 हैं। इसी प्रकार साहित्य संस्कृति की सभी भाषाओं की 1647 पत्रिकाओं में से हिन्दी की 468 और धर्म-दर्शन की 892 पत्रिकाओं में से

हिन्दी की 242 पत्रिकाएं हैं। वाणिज्य उद्योग विषय की भारत में प्रकाशित कुल 512 पत्रिकाओं में से अंग्रेजी की 365 द्विभाषी 66 और बहुभाषी 8 पत्रिकाएं हैं। इन्हें निकाल दें तो समस्त भारतीय भाषाओं में प्रकाशित शेष 73 पत्रिकाओं में से 37 हिन्दी की हैं। हिन्दी पत्रिकाओं की यही स्थिति लगभग सभी अन्य विषय वर्गों में है। विज्ञान की हिन्दी में 8, इंजीनियरी एवं तकनीकी पत्रिकाएं 9, परिवहन-संचार की दस, वित्त अर्थ-शास्त्र की 12, खेलों की 9 तथा बाल-महिला पत्रिकाओं की संख्या 53 है। अंग्रेजी सहित किसी भी भाषा की तुलना में बाल पत्रिकाएं हिन्दी में सर्वाधिक (34) हैं। कृषि-पशु पालन की भी 63 पत्रिकाएं हिन्दी में हैं।

एक भाषा में निकलने वाली पत्रिकाओं के अलावा 1164 पत्र-पत्रिकाएं द्विभाषी और 279 पत्र-पत्रिकाएं तीन चार या पांच भाषाओं में निकलती थीं। द्विभाषी पत्र-पत्रिकाओं में 630 में एक भाषा हिन्दी थी और बहुभाषी पत्र पत्रिकाओं में 206 में हिन्दी खंड भी था। तमिल, असमी, कन्नड, बंगला, तेलुगू की द्विभाषी पत्रिकाओं में तो हिन्दी बहुत कम में थी, किन्तु बहुभाषी पत्रिकाओं में हिन्दी प्रायः मिलती है। विद्यालयीय बहुभाषी पत्रिकाओं में अधिकांशतः हिन्दी का होना स्वस्थ लक्षण है।

हिन्दी पत्रिकाओं की प्रसार संख्या

भारत की सभी भाषाओं में प्रकाशित कुल 13,524 पत्रिकाओं में से हिन्दी पत्रिकाओं की संख्या सर्वाधिक (3429) तो थी ही, प्रसार संख्या की दृष्टि से भी हिन्दी पत्रिकाएं सबसे आगे रहीं। उनकी 1977 में प्रसार संख्या 64,84,000 प्रतियां थी जो कुल प्रसार संख्या का 24.3 प्रतिशत है। हिन्दी के बाद अंग्रेजी की पत्रिकाएं कुल प्रसार संख्या की 24 प्र.श. थी। प्रसार संख्या की दृष्टि से तमिल पत्रिकाएं 10.1 प्र.श. प्रसार के साथ तीसरे स्थान पर थीं। उसके बाद मलयालम, गुजराती, बंगला, मराठी, उर्दू, तेलुगू और कन्नड़ भाषा की पत्रिकाओं की प्रसार संख्या आती है।

भारतीय भाषाओं की पत्रिकाओं में सबसे अधिक प्रसार संख्या वाली पत्रिका तमिल साप्ताहिक कुमुदम् (मद्रास) की 4,76,694 थी। उसके बाद मलियाली साप्ताहिक 'मलयाली मनोरमा' (कोट्टायम्) की प्रसार संख्या 3,57,430 थी। 'वारान्तरी रानी' तमिल साप्ताहिक की प्रसार संख्या 3,19,683 थी। हिन्दी मासिक 'मनोहर कहानियां' (इलाहाबाद) की प्रसार संख्या इसके बाद 2,60,812 थी। हां, धर्म दर्शन की पत्रिकाओं में हिन्दी का 'कल्याण' सबसे अधिक प्रसार संख्या (1,48,889) वाला मासिक था। हिन्दी की बाल पत्रिकाएं 'नंदन' (1,90,257) और 'पराग' (1,41,839) भी आगे थीं। हिन्दी फिल्म पत्रिका माधुरी (1,16,202) और 'सरिता' पाक्षिक (1,80,278) भी काफी आगे हैं। 'धर्म युग' (2,68,869), हिन्दी ब्लिट्ज (2,39,984), चंदा मामा हिन्दी (1,60,667) और साप्ताहिक हिन्दुस्तान (1,13,052) भी अनेक पत्रों से आगे हैं। शिक्षा की पत्रिकाओं के केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद के द्विमासिक 'हिन्दी परिचय' (45,000) का स्थान सबसे ऊपर है)।

सरकारी पत्रिकाएं

लोकतन्त्र में सरकार की सफलता इस बात से आंकी जाती है कि सरकारी नीतियों एवं कार्यक्रमों के अमल में उसे जनता का कितना सहयोग प्राप्त होता है। अतः यह आवश्यक है कि सरकार अपने कार्य-कलापों की जानकारी जनता को बराबर देती रहे। इस अधिकारिक जानकारी से ऐसा वातावरण बनने में सहायता मिलती है जो सरकारी तंत्र के सुचारू संचालन एवं विविध योजनाओं को क्रियान्वित करने के अधिक अनुकूल हो।

दैनिक पत्रों, रेडियो, टेलीविजन एवं पत्रिकाओं में स्थान की और समय की सीमा रहती है, अतः सरकार को अपनी विभागीय जानकारी सविस्तार देने के लिए किसी न किसी प्रकाशन का आरम्भ करना अनुकूल लगता है। सरकारी पत्रिकाओं के प्रकाशन के पीछे एक दृष्टि यह भी काम करती रही है।

सूचना प्रसारण के अलावा सरकारी पत्रिकाओं के प्रकाशन का एक उद्देश्य ऐसे विषयों के प्रकाशन देना भी रहा है, जिन विषयों की पत्रिकाएं निकालना गैर सरकारी क्षेत्र के लिए लाभकर सौदा न हो। 'विज्ञान प्रगति', 'खेती', 'भारतीय रेल' आदि इसी कोटि की पत्रिकाएं हैं। सरकारी पत्रिका 'आजकल' और 'बाल भारती' ने आरंभ में हिन्दी पत्रिकाओं के लिए प्रकाशन के मानदण्ड का काम किया। इस प्रकार सरकारी पत्रिकाओं ने लोक रुचि के पीछे न जाकर ऐसी सामग्री निरन्तर जनता तक हिन्दी में पहूंचाई जो जनता, हिन्दी एवं देश सभी के हित में हो।

राज्य सरकार की पत्रिकाओं ने आंचलिक विशेषताओं, भाषा, साहित्य, सांस्कृतिक परिवेश, आर्थिक एवं सामाजिक क्षेत्रों की विशिष्ट उपलब्धियों को रेखांकित किया है। इस प्रकार सरकारी प्रकाशन मार्ग दर्शन करने वाले, जनता की आधिकारिका सूचना देने वाले जन संपर्क के सशक्त माध्यम बने हैं। इस रूप में आज भी इनकी जबर्दस्त उपयोगिता है। 'रोजगार समाचार' इस दृष्टि से जो उपयोगी सेवा समाज की कर रहा है, वह उसकी विशाल प्रचार संख्या से ही प्रकट है।

इन सरकारी प्रकाशनों ने विभागीय सामग्री हिन्दी में प्रस्तुत करके विभागीय वाङ्मय हिन्दी में लाने और हिन्दी भाषा की सामर्थ्य बढ़ाने में उल्लेखनीय योगदान दिया है। इससे हिन्दी में पत्रिकाओं में विषय वैविध्य भी बढ़ा है।

1977 में सरकारी पत्रिकाओं की संख्या 515 थी जिनमें से केन्द्रीय सरकार की 286 और राज्य सरकार की 229 पत्रिकाएं थीं। सरकारी प्रकाशनों में मासिकों की संख्या सर्वाधिक (228) थी। पाक्षिक 58 थे और त्रैमासिक 143 थे। सरकारी पत्रिकाओं में भाषा की दृष्टि से सर्वाधिक (207) पत्रिकाएं अंग्रेजी में निकली और हिन्दी पत्रिकाओं की संख्या 105 थी। केन्द्रीय सरकार की हिन्दी पत्रिकाओं की संख्या 44 और राज्य सरकार की हिन्दी पत्रिकाएं 61 थीं।

सरकारी हिन्दी पत्रिकाओं की दिक्कतें

सरकारी हिन्दी पत्रिकाएं विशेषत: केन्द्रीय सरकार की हिन्दी पत्रिकाएं जहां निकलती हैं, वहां उनके साथ अंग्रेजी पत्रिकाएं भी प्रकाशित होती हैं। पहले से चली आ रही परंपरा के अनुसार हिन्दी पत्रिकाओं में समकक्ष अंग्रेजी पत्रिका की तुलना में अधिकारियों एवं कर्मचारियों की संख्या वेतनमान आदि में अन्तर रहता है। इस दृष्टि से अंग्रेजी की पत्रिकाओं की स्थिति सुखद होती है। अंग्रेजी संपादक ही प्राय: इन पत्रिकाओं की प्रबंध व्यवस्था के लिए भी उत्तरदायी होते हैं और हिन्दी संपादक को अंग्रेजी संपादक का अनुवर्ती हो कर चलना पड़ता है। अधिकांशत: हिन्दी पत्रिकाओं को अनूदित सामग्री लेनी होती है और अनुवाद का भार वहन करने पर भी कर्मचारियों की संख्या कम होती है।

हिन्दी पत्रिकाओं के संपादक को समान काम के लिए समान वेतन मिले, इसका निर्णय 12 दिसम्बर, 1977 को प्रधान मंत्री की अध्यक्षता में हुई केन्द्रीय हिन्दी समिति की बैठक में किया गया जिसमें कहा गया था कि विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं के संपादकीय विभागों में हिन्दी व अन्य भारतीय भाषाओं के जो अधिकारी या कर्मचारी काम करते हैं, उनके तथा समान प्रकार का अंग्रेजी में काम करने वाले व्यक्तियों के वेतनमान, पदनाम तथा अन्य सेवा शर्तों में कोई भेदभाव नहीं होना चाहिए और इस बारे में एकरूपता लाने के लिए आवश्यक उपाय किये जाने चाहिएं।

इस निर्णय के अनुसार एक अनुदेश भी गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग ने निकाला था और प्रमुख संपादकों की एक उपसमिति की अनेक बैठकें हुई थीं जिनमें हिन्दी पत्रिकाओं के आकार एवं स्तर के अनुसार मानक पदक्रम तथा वेतनमान की सिफारिशें की गई थीं।

सरकारी प्रकाशनों में भाषा सम्बन्धी भेदभाव दूर करना एक बड़ा एवं समय साध्य कार्य है जिसमें पर्याप्त समय लगना स्वाभाविक है।

हिन्दी में प्रकाशित सरकारी पत्रिकाओं के विषय में यह नीति स्पष्टत: बन जानी चाहिए कि विभागीय हिन्दी पत्रिकाएं सरकार की भाषा नीति के अनुरूप प्रकाशित होती हैं, अत: उनके साथ हानि-लाभ का प्रश्न नहीं जुड़ना चाहिए। इनके प्रकाशन के लिए निश्चित वित्तीय व्यवस्था रहे। संपादक या अन्य कर्मचारियों की स्थिति अंग्रेजी की समकक्ष पत्रिका के समान हो। संपादन एवं मुद्रण की स्तरीयता ऐसी हो कि हिन्दी पत्रिका अंग्रेजी से घटिया न लगे। इससे पत्रिका का स्तर स्वयं अच्छा होगा और उसे विज्ञापन आदि सहज रूप से मिलने लगेंगे। इन पत्रिकाओं में विभागीय लोगों से हिन्दी में मौलिक लेखन को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। पत्रिकाओं को विभागीय नीरस सामग्री का संकलन न बनाकर सुरुचिपूर्ण एवं रोचक बनाने का प्रयत्न किया जाना चाहिए।

कुल मिलाकर देखें तो हिन्दी की स्थिति में लगातार सुधार हुआ है। उनकी संख्या, प्रसार संख्या और उनका स्तर सभी कुछ बढ़ा है। आज हिन्दी की पत्रिकाएं राजभाषा के स्तर के अनुरूप अपना स्तर ऊंचा कर रही हैं। उनमें लोकरुचि के साथ लोकहित तथा भारतीय गरिमा का तत्व और बढ़ जाए तो हिन्दी पत्रिकाएं निश्चय ही देश का दिशा-बोध कराने वाली सिद्ध होंगी।

(पत्रिकाओं के विषय वैविध्य की दृष्टि से बंगला, गुजराती, कन्नड, मराठी, तमिल, मलयालम, तेलुगू एवं उर्दू काफी आगे बढ़ी हुई हैं। विविध विषयों की इन भाषाओं में कितनी पत्रिकाएं हैं, यह नीचे की तालिका में दिया जा रहा है :—)

विषय वर्ग	बंगला	गुजराती	कन्नड़	मलयालम	मराठी	तमिल	तेलुगु	उर्दू
समाचार व सामयिक विवेचन	302	92	88	50	141	124	101	608
साहित्य-संस्कृति	319	55	35	192	109	70	30	160
धर्म-दर्शन	80	46	32	90	30	114	64	89
वाणिज्य उद्योग	4	6	3	3	7	7	1	4
चिकित्सा स्वास्थ्य	12	10	4	9	5	8	13	17
फिल्म	14	6	11	31	6	31	32	21
समाज कल्याण	11	64	5	1	26	8	11	7
श्रम	7	8	2	1	7	11	3	4
शिक्षा	13	13	12	2	17	9	11	6
कानून लोक प्रशासन	2	3	1	1	10	3	4	6
कृषि-पशु पालन	14	11	9	9	17	11	10	1
बाल	26	12	3	9	10	17	6	10
विज्ञान	3	2	3	1	1	4	—	2
महिला	2	13	—	3	6	4	1	6
खेल	13	—	1	2	3	1	—	6
बीमा बैंकिंग सहकारिता	1	3	4	—	14	9	1	1
अवर्गित	129	232	155	70	340	157	146	—

नागरी लिपि तथा संक्षिप्तीकरण

डा० कैलाश चन्द्र भाटिया

आज इस भागदौड़ के युग में हर आदमी की यह आदत बनती जा रही है कि कम से कम समय में कम से कम शब्दों में अपने मन के भावों को अभिव्यक्त करे। इस स्वाभाविक प्रवृत्ति के फलस्वरूप ही संस्थाओं तथा संगठनों के लम्बे-लम्बे नाम संक्षिप्त होते जा रहे हैं और व्यक्तियों के नाम तो अधिकांशत: छोटे ही प्रचलित हो पाते हैं। "संक्षिप्तीकरण" की भिन्न-भिन्न प्रक्रियाओं पर मैंने कई बार विस्तार से प्रकाश डाला है। आज यहां इस समस्या पर "नागरी लिपि" के संदर्भ में ही कुछ विचार प्रकट करना चाहता हूं।

यहां यह भी उल्लेखनीय है कि शब्द-निर्माण के जो अनेक सिद्धान्त भारत सरकार के शब्दावली निर्माण के स्थायी आयोग ने निश्चित किये हैं उनमें से एक "संक्षिप्तीकरण" भी है। इसके अनुसार शब्द किसी संयुक्त शब्द अथवा वाक्यों के पदों को संक्षिप्त करके भी गढ़ा जा सकता है। इन संक्षिप्तियों के लिये अक्षर अथवा अलग-अलग वर्ण विशेषकर आदि वर्ण लिये जा सकते हैं, जैसा कि संक्षिप्त नामों में होता है। इन उदाहरणों में रडार, यूनेस्को आदि शब्द आते हैं। इस प्रक्रिया में हिन्दी में भी शब्द बने हैं और बन रहे हैं। हिन्दी में प्रचलित "वदी" और "सुदी" आदि शब्द इसी प्रक्रिया के फलस्वरूप हैं, "सु" सुदि:, शु.-शुक्लपक्ष तथा व (बहुल)-कृष्णपक्ष।

मुख्य समस्या के कई पहलू हैं। पहली बात यह है कि क्या संक्षिप्त रूप अंग्रेजी के संक्षिप्त रूप के आधार पर मात्र नागरीकरण हो अथवा हिन्दी रूप के आधार पर। वैसे हिन्दी में अंकटाड, सैम, मीडो, सीटो, इंटक, नाटो, यूनेस्को आदि पर्याप्त शब्द प्रचलित हैं पर शब्दों, नामों तथा नामपदों के संक्षिप्त रूप कैसे बनाये जाएं इस संबंध में सिद्धांन्त स्पष्ट होना चाहिए, जैसे---

	Joint Secretary	=	जे० एस०
	Deputy Director	=	डी० डी०
अथवा	संयुक्त सचिव	=	सं० स०/संस
	उप निदेशक	=	उ० नि०/उनि

प्रशासन में नाम पदों के संक्षिप्त रूपों का विशेष प्रचलन है। अभी बहुत से मंत्रालयों ने इस ओर ध्यान दिया है। पदनाम लोगों में प्रचिलित संक्षिप्त रूप में ही प्रचलित होते हैं, ऐसी स्थिति में नागरीकरण मात्र ही अधिक उपयोगी सिद्ध होगा क्योंकि उसके हिन्दी रूप में नये फिर संक्षिप्त रूप तो और भी अधिक अस्पष्ट रहेंगे जब तक सरलीकरण, उच्चारण आदि की दृष्टि से सहजता की ओर ध्यान न दिया जाए।

इस दिशा में रेलवे बोर्ड ने विशेष ध्यान दिया है। बोर्ड द्वारा स्वीकृत कुछ पदनामों के हिन्दी पर्याय और उसके संक्षिप्त रूप इस प्रकार हैं:---

हिन्दी पद नाम	नागरी संक्षिप्त रूप	
मुख्य कार्मिक अधिकारी	मुकाधि	C.P.O.
मुख्य परिचालन अधीक्षक	मुपाधि	C.O.P.S.
मुख्य सुरक्षा अधिकारी	मुसुअधि	C.S.O.
मुख्य वाणिज्य अधीक्षक	मुवाधि	C.C.S.
मुख्य यांत्रिक इंजीनियर	मुयांइंजी	C.M.E.
मुख्य इंजीनियर	मुइंजी	C.E.
मुख्य इंजीनियर (विनिर्माण)	मुइंजी (वि.)	C.E.(C)
मुख्य विद्युत इंजीनियर	मुविइंजी	C.E.E.
भंडार नियंत्रक	भंनि	C.O.S.
(वित्त सलाहकार व) मुख्य लेखा अधिकारी	मुलेअधि	(F.A.&) C.A.O.
मंडल लेखा परीक्षा अधिकारी	मंलेपअधि	D.Au.O.
क्षेत्रीय अधीक्षक	क्षेअधी	A.S.
मंडल चिकित्सा अधिकारी	मंचिअधि	D.M.O.
सहायक कार्मिक अधिकारी	सकाअधि	A.P.O.

ऊपर जो संक्षिप्त रूप दिये गये हैं उनके पीछे जो सिद्धांन्त हैं वे स्पष्ट रूप से इस प्रकार हैं :---

1. प्रत्येक शब्द का पहला "अक्षर Syllable अर्थात् स्वर/मात्रा युक्त व्यंजन वर्ण जैसे "मुख्य" के स्थान पर "मु" क्षेत्रीय के स्थान पर "क्षे"।

2. अन्तिम शब्द जो प्राय: "अधिकारी" है उसका प्रथम अंश "अधि"। ऐसी स्थिति में यदि पहला वर्ण मात्र व्यंजन है तो उसमें स्वर समाप्त हो जाता है, जैसे "कार्मिक" के "का" में आदि का "अ" संधियुक्त है तथा "परिचालन" के संक्षिप्त रूप में "प" में

"अधीक्षक" आदि "अ" संधि युक्त होकर "पा" कर दिया गया है ।

यहां विचारणीय समस्या यह है कि जो भी संक्षिप्त रूप बने हैं उनको कहां तक सरलता से बोला जा सकता है और कहां तक नहीं । मेरी राय में "मंचिअधि", "मुविइजी", "मुसुअधि" आदि रूप संक्षिप्त होते हुए भी लम्बे तथा कठिन हैं और रोमन की तुलना में बोलने में पर्याप्त मुश्किल हैं । फलतः इस प्रकार के रूपों से हिन्दी रूप बदनाम होते हैं और प्रकारान्तर से "नागरी" की बदनामी होती है और "रोमन" का पक्ष प्रबल हो जाता है। यही बात है कि बोलने और लिखने की सुविधा न होने के कारण नागरी के संक्षिप्त रूप न बोले जाते हैं और न लिखे जाते हैं और रोमन के रूप ही बोलने/लिखने में चलते हैं । उदाहरण के रूप में हिन्दी नाम "भारतीय क्रांतिदल" का संक्षिप्त रूप "भाक्रांद" तथा अंग्रेजी नाम "कांग्रेस फार डेमोक्रेसी" का संक्षिप्त रूप "कांफाडे" बिल्कुल नहीं चल पाये । फलतः रोमन के रूप "बी.के.डी" तथा सी.एफ.डी ही चलते रहे ।

रोमन में तो सामान्य नियम है कि प्रथम वर्ण/अक्षर को लेते हैं। स्वरों को जोड़कर Aeronym बनाने की भी प्रथा अब काफी प्रचलित हो गई है । क्या हिन्दी में भी स्वरों की संधि की जाए । यदि हां, तो संधि के नियम क्या होंगे? हिन्दी में शब्दों, नामों, पदों के जो संक्षिप्त रूप बनाये जा रहे हैं उनका कहां तक प्रचलन हो रहा है इसका अध्ययन होना चाहिए। उदाहरण के लिए "रामचन्द्र श्रीवास्तव" नाम का संक्षिप्त कैसे बनाया जाएगा, "राचश्र" अथवा "राचश्री" कहा/लिखा जाए, क्यों न "रचश्र" लिखा जाए ।

आजकल बहुप्रचलित Small Farmers Development Agency के लिए रोमन में संक्षिप्त रूप SFDA (एस.एफ.डी.ए.) प्रयोग में आता है जबकि इसके हिन्दी रूप "लघु कृषक विकास अधिकरण" का नागरी में संक्षिप्त रूप "लकृविअ" बनेगा । मैं नहीं समझता कि कोई इसका प्रयोग कर सकेगा । सरलता की दृष्टि से यदि "कृषक" के स्थान पर "किसान" बदल दिया जाये तो इसका रूप बनेगा "लकिविअ" जो अपेक्षाकृत सरल है। पर जैसी पद्धति की ओर ऊपर संकेत किया गया है उसके अनुसार नागरी में संक्षिप्त रूप बनेगा "लकवा" जो निश्चित रूप से रोमन की तुलना में सरल है । यह बात दूसरी है कि यह शब्द भिन्न अर्थ को भी अभिव्यक्त करता है ऐसी स्थिति में रेखांकित करना जरूरी हो जाता है ।

यदि नागरी के संक्षिप्त रूपों को चलाना है तो उन्हें यथासंभव संधि से मुक्त रखना होगा और रोमन की तुलना में अधिक नहीं तो समान रूप से सरल भी । □ □ □

अंग्रेजी का पौधा

....कौन भाषा घटकर है और कौन बढ़कर है, इस बहस में हम दूसरी बात यह भूल जाते हैं कि इस देश की कोई भी भाषा-तमिल भी-नितांत अलगाव की दशा में नहीं फली-फूली है। यूरोप की भाषाओं की तुलना में ये भाषाएं एक-दूसरे के ज्यादा निकट रही हैं, शब्दावली से भी ज्यादा इनके साहित्य में जो भावराशि मिलती है, वह किसी एक जाति के ही प्रयत्नों का फल नहीं है। वैदिक काल और उससे पहले से लेकर आज तक किसी भी प्रदेश की संस्कृति दूसरों के प्रभाव से बिल्कुल मुक्त होकर नहीं पनपी। बीसवीं सदी में स्वाधीनता संग्राम के दौरान नए राष्ट्रीय और जनवादी विचारों से इन सभी भाषाओं का साहित्य समृद्ध हुआ है। इन सभी भाषाओं के साहित्य का एक प्रमुख भाग दिन पर दिन वैज्ञानिक समाजवाद की विचार धारा से प्रभावित होता जा रहा है। पुरानी विरासत और नई विचार धारा का असर सभी भाषाओं में विद्यमान है। इन सबके फलने-फूलने में ही भारत राष्ट्र का गौरव है। लेकिन आपस का यह सम्बन्ध न देखकर एक दूसरे की सहायता करने के बदले हम दूसरे सभी पौधे नोंच डालें और सबकी जगह सिर्फ अंग्रेजी का पौधा लगा दें तो हमारे बगीचे की शोभा क्या रह जाएगी? इसलिए इस श्रेष्ठता-अश्रेष्ठता के विवाद से जरा सावधान रहना चाहिए।

—डा. रामविलास शर्मा

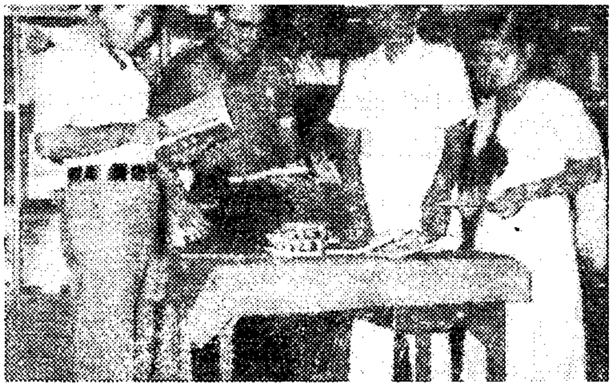

पुलिस अनुसंधान ब्यूरो में पुस्तकालय के लिए हिन्दी पुस्तकों का चयन करते हुए ब्यूरो के अधिकारीगण

दक्षिण मध्य रेलवे के राजभाषा सप्ताह के अवसर पर तेलुगु के भक्त कवि पोतना के कृतित्व का परिचय देते हुए डा० वी० आर० रेणु। बाईं ओर हैं श्री राज कृष्ण बंसल, उपसचिव, राजभाषा विभाग

चित्र समाचार

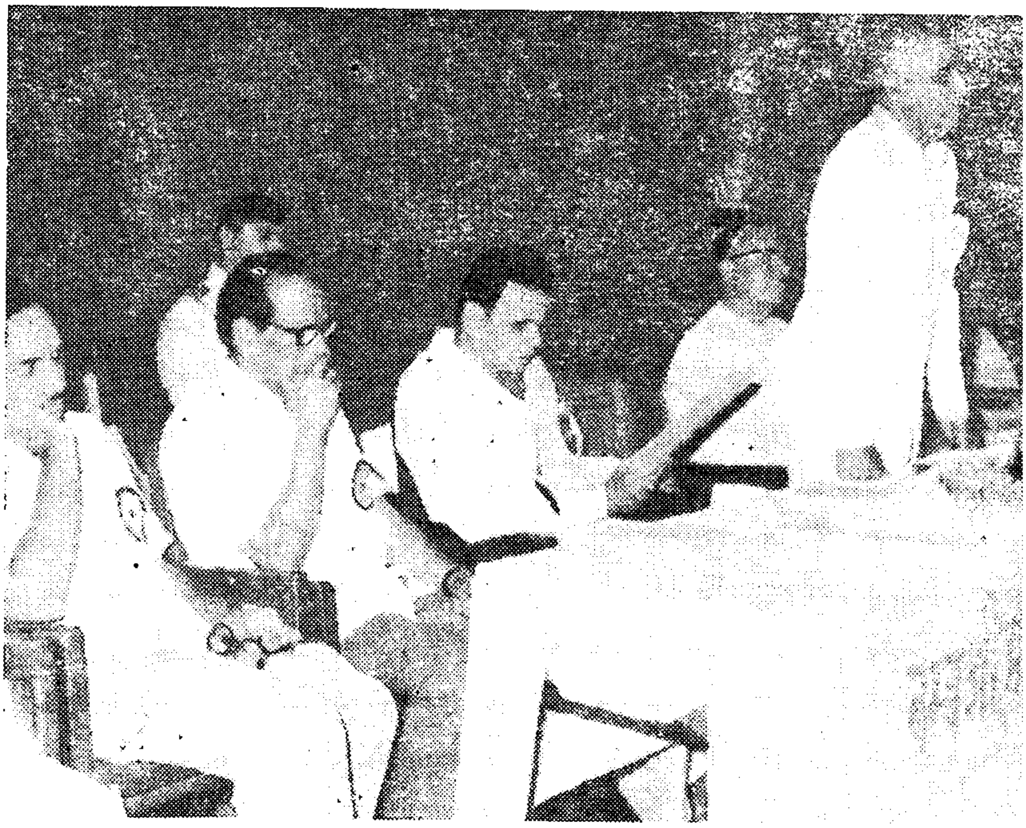

नगर हिन्दी सप्ताह समिति, बम्बई द्वारा आयोजित हिन्दी समारोह का उद्घाटन करते हुए महाराष्ट्र के राज्यपाल श्री ओमप्रकाश मेहरा, बम्बई के महापौर डा० ए० यू० मेमन, श्री हरि शंकर तथा श्री कांतिलाल जोशी

इंडियन आयल कार्पोरेशन लिमिटेड, बम्बई के अधिकारियों के साथ राजभाषा विभाग के सचिव

एफ० सी० आई० सिन्द्री में हिन्दी कार्यशाला

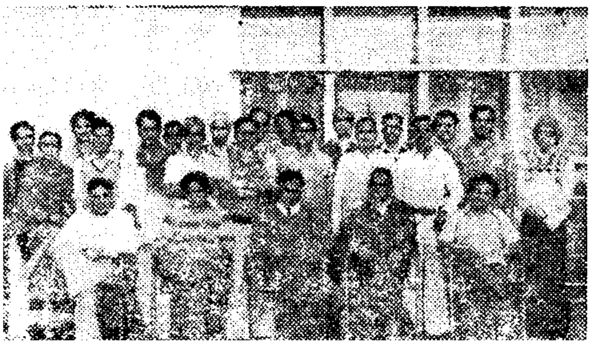

चित्र समाचार

हिन्दुस्तान जिंक लिमिटेड, विशाखापट्टनम् के उपमहाप्रबंधक द्वारा पुरस्कार वितरण

केन्द्रीय योजना एवं श्रम
मुद्रणालय, देवास

पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, नई दिल्ली में हिन्दी कार्यशाला

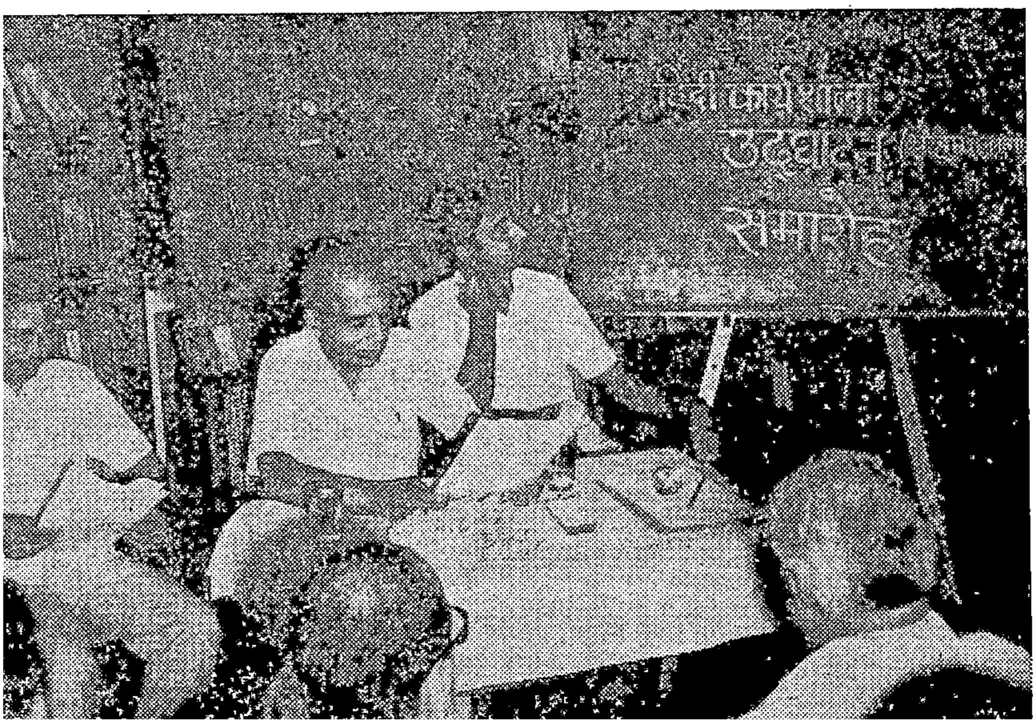

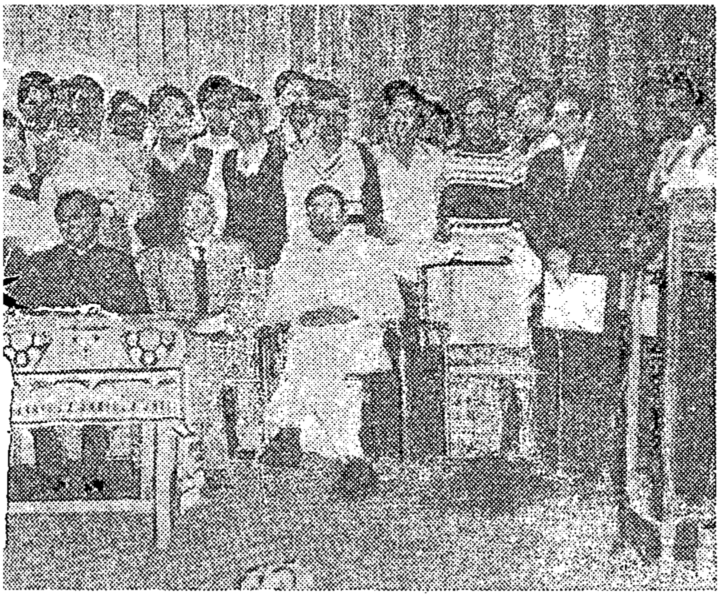

डा० राम मनोहर लोहिया अस्पताल, दिल्ली में आयोजित हिन्दी कार्यशाला के समापन के अवसर पर डा० नीहार रंजन लस्कर, राज्य स्वास्थ्य मंत्री, भारत सरकार (दाएं) तथा ऊपर हैं प्रशिक्षार्थीगण एवं अन्य अधिकारी

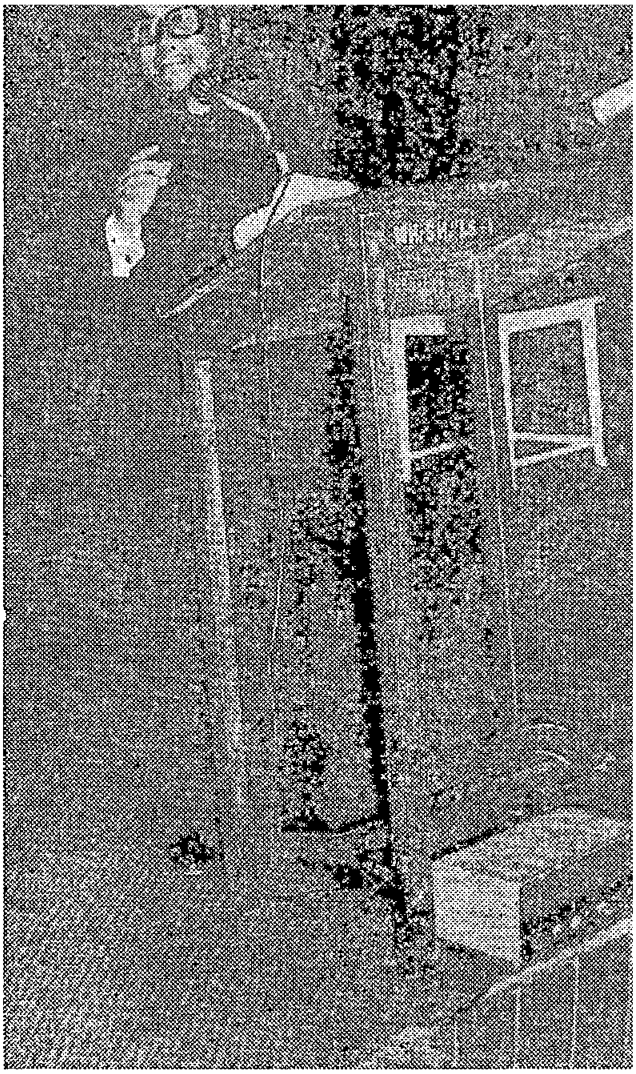

श्री नारायण दत्त तिवारी बैंक नोट
स्कार वितरण करते हुए

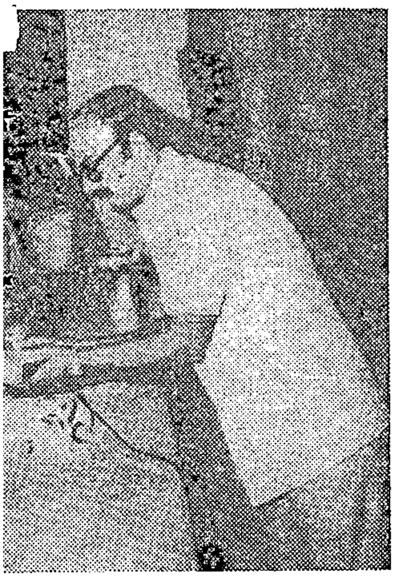

हिन्दी दिवस समारोह, कैनरा बैंक, आगरा

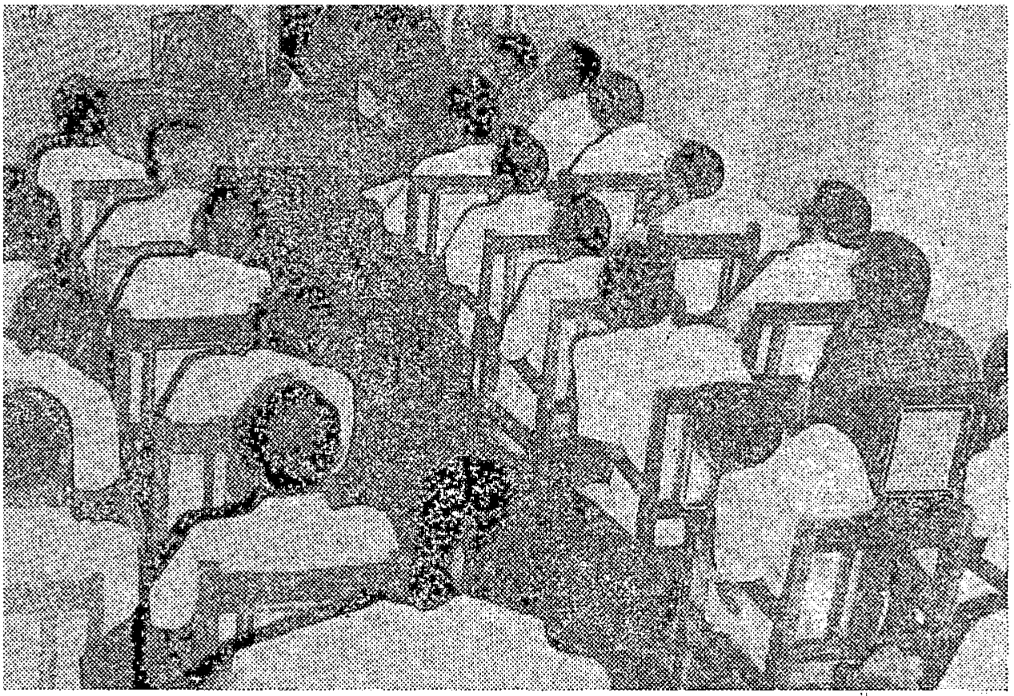

श्री जयनारायण तिवारी, सचिव, राजभाषा विभाग (गृह मंत्रालय) पोर्ट ब्लेअर में वरिष्ठ अधिकारियों को सम्बोधित करते हुए। उनके दाएं हैं संयुक्त सचिव, राजभाषा और पास में उपसचिव (कार्यान्वयन), राजभाषा विभाग

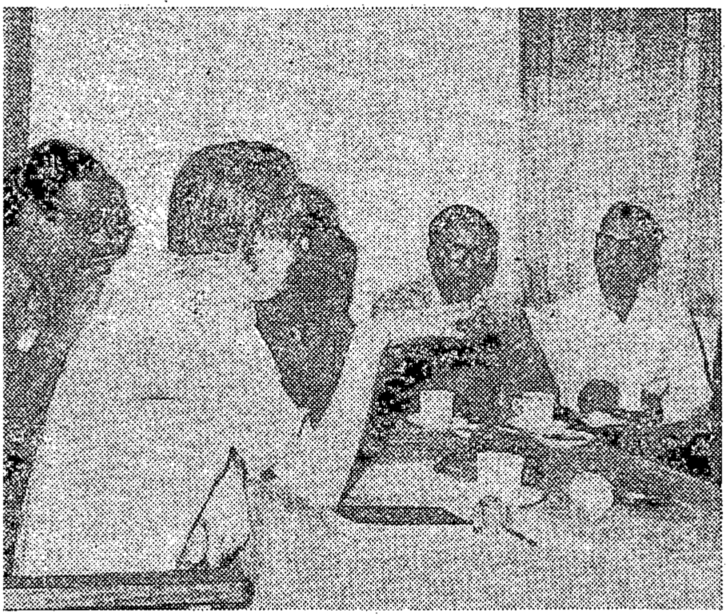

सचिव तथा संयुक्त सचिव आदि से वहां के हिन्दी अधिकारी का विचार-विमर्श

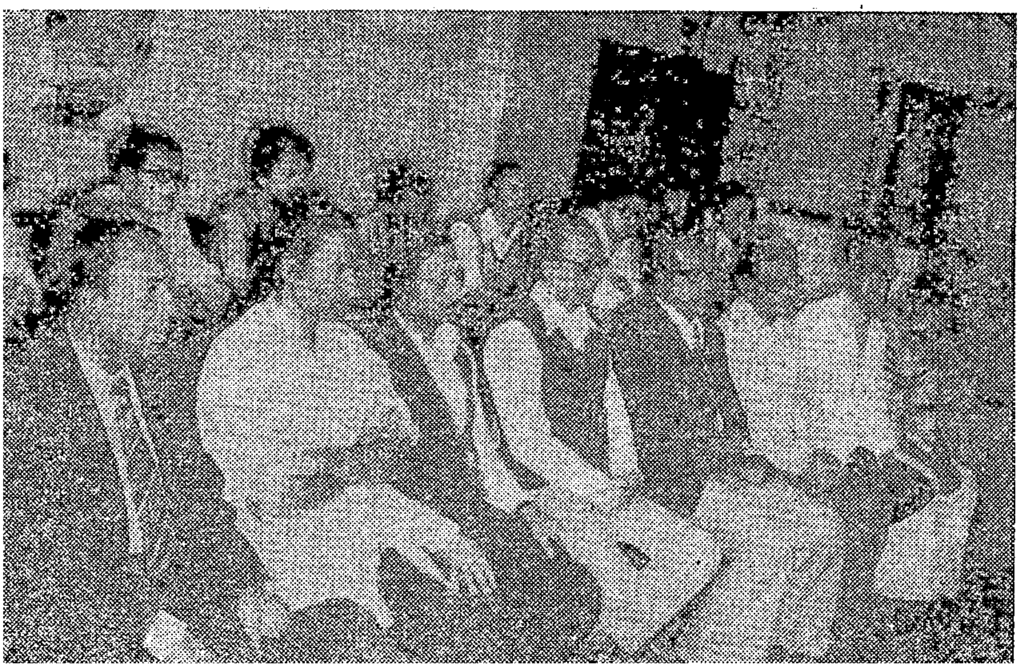

स्मिथ स्टेनिस्ट्रीट फार्मास्युटिकल, बम्बई के हिन्दी प्रशिक्षण केन्द्र का उद्घाटन

सर्वभारतीय साहित्य : शिखर की तलाश

रंग नाथ राकेश

[परिचर्चा में एक विख्यात गुजराती साहित्यकार ने कहा है कि भाषागत अनेकता अपने आप में किसी समस्या को उत्पन्न नहीं करती। भाषाई विवाद तब खड़ा होता है जब किसी भाषा विशेष के उग्रवादी समर्थक यह दावा करना शुरू करते हैं कि केवल उनकी भाषा ही सर्वोत्तम, सर्वगुण संपन्न और सभी भारतीय भाषाओं में श्रेष्ठ है। यह केवल भाषाई उग्रवाद या राजनीतिक अवसरवाद नहीं बल्कि इससे अन्य भाषाओं के बारे में मुकम्मल अनभिज्ञता जाहिर होती है—**कुएं के मेंढक जैसी प्रवृत्ति**। कारण यह कि विभिन्न भारतीय भाषाओं के बीच व्यापक पैमाने पर आदान-प्रदान का अभाव रहा है। चाहे वह विश्वविद्यालय के प्रोफेसर हों, चाहे क्षेत्रीय भाषाओं के पत्रकार, उनके लिए अपनी भाषा को छोड़कर अन्य भारतीय भाषाएं उतनी ही परायी हैं जितनी कोई विदेशी भाषा। इस संकुचित क्षेत्रीयता के दायरे से बाहर निकल कर यदि अन्य भाषाओं की साहित्यक विधाओं और कृतियों का अध्ययन करें तो भाषागत कट्टरपथियों को पता चलेगा कि चिंतन, रचनात्मक अभिव्यक्ति या कलात्मक कृति में केवल उनकी ही भाषा का एकाधिकार नहीं है। अहंकार की इस दीवार के टूटते ही राष्ट्रीयता की भावना जागृत होगी। ऐसा हमारा विश्वास है।

इसी विशाल राष्ट्रीय दृष्टि और सर्वभारतीय चेतना को जागृत करने के उद्देश्य से "भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार" का प्रवर्तन किया गया है।

इस स्तम्भ के अन्तर्गत 'राजभाषा भारती' सर्व भारतीय साहित्य के शिखर की तलाशमें श्रेष्ठतम कृतियों और कृतिकारों का परिचय उपस्थित कर रही है। सर्वभारतीय साहित्य की विभिन्न विधाओं का परिचय यहां दिया जाएगा। भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार भारतीय साहित्य-जगत में सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार है। इसी क्रम में सर्वप्रथम पुरस्कार विजेता मलयालम कवि श्री जी० शंकर कुरूप का परिचय तथा उनकी दो कविताएं सानुवाद प्रस्तुत हैं।

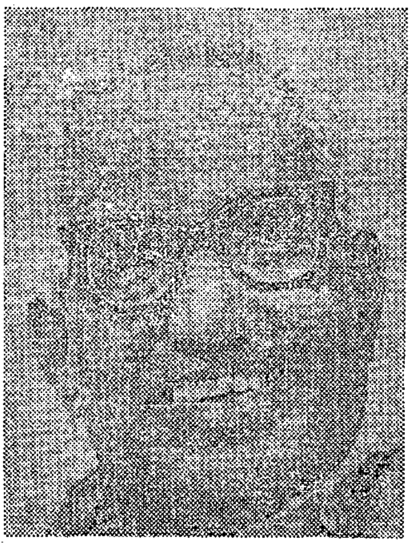

महाकवि जी. शंकर कुरुप

पुरस्कार या इनाम-इकराम तो बहुत से हैं, लेकिन वे प्रायः क्षेत्रीय साहित्य से जुड़े हुए हैं। भारतीय साहित्य को समग्रता की दृष्टि से देवनागरी लिपि के माध्यम से मूल और अनुवाद दोनों ही को हिन्दी में एक विस्तृत राष्ट्रीयता के फलक पर उभारने का प्रयास एक पुरस्कार योजना ने किया है—वह है भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार। सर्वभारतीय चेतना से सम्पृक्त राष्ट्रीय श्रेष्ठता के साहित्य-शिखर की तलाश पहली बार भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार के माध्यम से शुरू हुई है।

क्षेत्रीय भाषा के स्तर पर, उस भाषा की निजी विशेषताओं सहित अभिव्यक्ति के अनेक रंग उभरते हैं सतरंगी इन्द्रधनुष से रंग—इन सभी रंगों में से, इन सभी अभिव्यक्ति-माध्यमों में से "सर्वोत्कृष्ट-सर्वोपरि", कृति का चयन काफी कुछ कठिन प्रक्रिया है। असंभव नहीं तो कठिन जरूर है।

ज्ञानपीठ साहित्य पुरस्कार ने कुछ वर्षों में ही ऐसे प्रतिष्ठापद की अर्जना की है जो देश के विशाल सर्जनात्मक साहित्य के अनुरूप है। इस समग्र साहित्य का समाकलन यह पुरस्कार इस दृष्टि से करता है कि विभिन्न भाषाकृतियों के तुलनात्मक मूल्यांकन द्वारा एक निर्धारित काल की सर्वोत्कृष्ट कृति का चयन हो।

'भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार' का प्रवर्तन उसकी विशाल राष्ट्रीय दृष्टि और सर्वभारतीय संचेतना का द्योतक है। इस पुरस्कार के द्वारा समस्त भारतीय लेखन की श्रेष्ठ उपलब्धि को देश-विदेश की चेतना में स्थापित तथा सम्मानित किया जाता है। इसका फल यह हुआ है कि भारतीय साहित्य अपनी क्षेत्रीय सीमाओं को लांघकर, अखिल भारतीय स्तर पर देश की सांस्कृतिक एकता का, भारतीय विरासत का, इस देश की थाती का, प्रत्यक्ष प्रतिबिम्ब बन गया है।

अपनी साहित्यिक अभिरुचि, न्याय-भावना और निष्पक्षता के लिए सुख्यात एवं प्रतिष्ठित व्यक्तियों की एक प्रवर परिषद है, जो ज्ञानपीठ द्वारा गठित है और जिस पर पुरस्कार-निर्णय के लिए अपेक्षित एक सौ से अधिक बहुभाषाविज्ञ साहित्य समीक्षकों का हार्दिक सहयोग सदा उपलब्ध रहा है।

यह पुरस्कार संविधान-विहित 15 भाषाओं के लिए उपलब्ध है जिनमें अंगरेजी सम्मिलित नहीं है और वे ही कृतियां इसके लिए प्रतियोगी होती हैं जो जीवित भारतीय नागरिकों की हों, सर्जनात्मक साहित्य लेखन वर्ग की हों एवं निर्धारित काल ही में छपी हों। ऐसे सर्जनात्मक रचना-संकलन भी प्रस्ताव्य होंगे जिनकी सामग्री का कम से कम 60 प्रतिशत अंश पुस्तक रूप में सर्वप्रथम निर्धारित काल के अंतर्गत प्रकाशित हुआ हो।

प्रतियोगी पुस्तकों के प्रस्तावों की परख उनसे संबंधित भाषा परामर्श समितियां करती हैं, जो अपनी-अपनी भाषा के तीन-तीन प्रतिष्ठित साहित्य समीक्षकों की होती हैं। किन्तु ये समितियां अपनी विचार-संस्तुतियों को प्राप्त प्रस्तावों तक संसीमित रखने के लिए बाध्य नहीं होतीं। निर्धारित काल के अन्य श्रेष्ठ प्रकाशनों को अपनी ओर से सम्मिलित करके एक-एक ऐसी पुस्तक की संस्तुति करती हैं जो उनकी दृष्टि से पुरस्कार योग्य हो। विभिन्न संस्तुतियों को फिर बहुभाषाविद् साहित्य समीक्षकों के द्वारा तुलनात्मक परख एवं मूल्यांकन-प्रतिमूल्यांकन की विस्तृत क्रिया से गुजरना होता है। इस प्रकार अन्त में जो तीन या चार पुस्तकें चुनी जाकर अन्तिम चरण में आती हैं उनका इस दृष्टि से सम्पूर्णतः अथवा अंशतः हिन्दी अनुवाद किया जाता है कि निर्णय के लिए अधिकतम संभव समान-माध्यम उपलब्ध हो। प्रवर परिषद् के सदस्य तब प्रत्येक पुस्तक से संबंधित मन्तव्यों-मूल्यांकनों एवं सूचनाओं आदि का अध्ययन करके, गम्भीर और व्यापक रूप से विचार-विमर्श के उपरान्त, अन्तिम निर्णय लेते हैं।

समान स्तर की दो कृतियों का सहवरण होने पर पुरस्कार राशि को दोनों कृतिकारों में समान मात्रा में विभाजित होने की व्यवस्था है। भाषा समिति द्वारा संस्तुत होने के उपरान्त यदि लेखक का देहावसान हो जाये तो उसका नाम जीवनोत्तर पुरस्कार के लिए विचारणीय होता है, पर सारी स्थिति पर विचार करके यह निर्णय प्रवर परिषद् लेगी कि पुरस्कार-राशि का उपयोग किस रूप में किया जाये। जिस भाषा की कृति को किसी वर्ष पुरस्कार मिलता है उसकी कृतियां अगले तीन पुरस्कार-वर्ष तक विचारणीय नहीं होतीं, न ही जो लेखक एक बार पुरस्कृत हो जाता है वह दोबारा चुना जा सकता है।

प्रवर परिषद् के मत से किसी वर्ष यदि अनुशंसित पुस्तकों में से कोई भी पुरस्कार के राष्ट्रीय स्तर के अनुरूप सिद्ध न हो तो उस वर्ष पुरस्कार नहीं दिया जायेगा।

सर्व प्रथम भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार के प्रथम प्रवर परिषद् के अध्यक्ष देश-रत्न डा. राजेन्द्र प्रसाद थे। डा. उमाशंकर जोशी, डा. नीहार रंजन रे, डा. वी. राघवन, डा. जगदीश चन्द्र माथुर डा. कर्ण सिंह, डा. हरेकृष्ण मेहताब, डा. विनायक कृष्ण गोकाक, डा. देवी प्रसन्न पटनायक आदि विभूतियां सन् 1965 से अद्यावधि इस पुरस्कार चयन समिति से सम्बद्ध रही हैं।

1965 से 1980 तक के भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेताओं की सूची विधा, भाषा, तथा कृति के नाम सहित दी जा रही है। प्रस्तुत है इस अंक में सर्व प्रथम ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता कृति "ओटक्कुषल" (बांसुरी) के कृतिकार श्री जी. शंकर कुरुप की दो श्रेष्ठतर कविताएं मलयालम मूल के साथ सानुवाद।

मलयालम के आधुनिक महाकवि प्रतिभाशाली सृजेता जी. शंकर कुरुप का जन्म 5 जून, 1901 के दिन 'नायत्तोड' ब्राह्मण पुजारियों के परिवार में हुआ था, आदि शंकराचार्य के कालड़ी गांव में ये भी जन्मे। शब्दों को उद्धृत कर रहा हूं—"पिताजी को अभी आंख भर देख भी न पाया था कि उनका देहान्त हो गया। मेरे पिताजी मुझे शोकसागर में छोड़कर चले गए और मेरे भीतर एक ऐसी रिक्तता छोड़ गए जिसकी पूर्ति असम्भव है।" शंकर कुरुप के चाचा दैवज्ञ और ज्योतिषी थे और मामा संस्कृत काव्य के रसज्ञ पण्डित। आठ वर्ष की आयु में 'अमरकोश', "सिद्ध-रूपम्" शंकर ने कंठस्थ कर लिया था। बिना किसी शैक्षणिक उपाधि के बावजूद भी श्री कुरुप महाराजा कालेज एर्नाकुलम में मलयालम के प्राध्यापक के रूप में कार्यरत रहे। सलयालय मासिक 'तिलकम्' का संपादन किया। केरल साहित्य अकादेमी के सदस्य रहे। मलयालम के तीन महाकवियों उल्लूर, वल्लतोल और कुमारन् आशान की परम्परा में इन्हें बेझिझक रखा जा सकता है। इनके 4 काव्यनाट्य, 4 साहित्यिक निबंध संग्रह 20 कविता संग्रह तथा 8 अनुवाद ग्रंथ प्रकाशित हैं।

एक कहावत है संस्कृत की 'सर्वे पदाः हस्तिपदे निमग्नाः'। सारे पांव हाथी के पांव में समा जाते हैं। ललित कलाओं की विधा में सर्वश्रेष्ठ विधा है कविता। यहां जी. शंकर कुरुप की दो श्रेष्ठतर प्रतिनिधि कवितायें चयन करके दे रहा हूं। हिन्दी अनुवाद जी. नारायणपिल्ले का है। मलयालम मूल को देवनागरी लिपि के माध्यम से पढ़ कर आप विस्मय-विमुग्ध होंगे कि भारतीय संस्कृति और सांस्कृतिक स्पन्दन सर्वत्र एक समान है। लगेगा कि आपकी अपनी ही भाषा की श्रेष्ठ भावसंपदा मलयालय के माध्यम से अभिव्यक्त की गयी है। इत्यलम्।

1. ओटक्कुषल्

लीलयिल् जीवितगीतिकल् पाटुम् दि-
क्कालातिवर्त्ति महात्म्यशालिन् !
आरालुमज्ञातमामेतो मण्णिल्
वाणाराल् नशिक्कुवान् तीर्न्नोरेन्ने
निन् दयावैभवम् जंगमाजंगम–
नन्दनमामोरु वेणुवाक्कि ।
भावल्क्कश्वासत्ताल् चैतन्यपूर्णमेन्
जीवितनिस्सारश्शून्यनालम् !

बांसुरी

लीला-भाव से जीवित गीतों को गाने वाले
दिशा और काल की सीमाओं से निर्बन्ध हे महामहिमामय !
मैं जनमा था अज्ञात–अपरिचित
कहीं मिट्टी में पड़े-पड़े नष्ट हो जाने के लिए,
किन्तु तेरी वैभवशालिनी दया ने
मुझे बना दिया है बांसुरी
चराचर को आनन्दित करनेवाली ।
तू ने अपनी सांस की फूंक से उत्पन्न कर दी है प्राणों की सिहरन
इस निःसार खोखली नली में।

मानसमादक, लोकैकगायक,
गानमायङ्ङेन्निल वर्तिय्क्कुन्नु।
अल्लेंङ्किलिज्जडसाधनम् वल्लुमो
वल्लतुम् हृष्टमायालपिप्पान !

तूमन्दहासत्तिन् वेण्नुर, निर्म्मल–
प्रेमप्रवाहत्तिन् मन्द्रध्वानम्,
जीवितमत्सरम् तन्नोलम् तल्लल्, बा–
ष्पाविलनीलनेत्रोत्पलङ्ङल्
दारिद्र्यक्कोटक्कार च्चार्त्तिन करिनिषल्,
पारिलेप्पापत्तिन्नावर्तनङ्ङल्,
एन्निव चेर्न्नोलिच्चीटट्टे मेल्क्कुमे–
लेन्निलेस्संगीतकल्लोलिनि !

ओटक्कुषलतु नीटुट्ट कालत्तिन–
कूटयिल् मुकमाय् वीषाम् नाले,
मण्चितलायक्का, मल्लेंकिलित्तरि
वेण्चारम् मात्रमाय् मारिप्पोकाम् ।
नन्मयेच्चोल्लि विनिश्वसिक्काम् चिलर;
तिन्मयेप्पट्टिटे पाटू लोकम
एन्नालुम् निन् कैयिलर्प्पिच्चोचोरेन् जन्म–
मेन्नालुमानन्दसान्द्रम् धन्यम् !

साक्षात्कारम्

मुकलिलेक्काल् मुकलिलाय् वर्तिक्कुम्
सकलगमाम् सनातनाकाशमे !
परममेयमाय् शुद्धमाय् मिन्निटुम्
परमलावण्यतत्वमे, वन्दनम् !

गिरिपरस्पर दूरमोर्त्तभुत–
भरितमुन्मुखम् नोक्कुन्नु निन् मुखम्,
करुककलो तणुत्त कविलत्तटम्
नेरुकयिलेट्टु कोल्मयिर क्कोल्लुन्नु !
अकलेयेक्कालकलेयाकुन्नु नी–
यरिकिलेक्कालरिकिलाणत्भुतम् !

ओरु हिमकणम् मात्रमाणन्धया–
मिरविन् सन्ततियाय आनेंकिलुम्,
भवदनुग्रहत्तिटयाकस्मिक–
नवकिरणमेन्नत्माविलेक्कवे,
इटयिलुण्टायिरुन्न तमोमय–
पटमतिनालुटनकन्नीटवे,
क्षणिकमाकिलेन्तेन्टेयिज्जीवित–
कणिकयिल् कण्टतङ्ङयेत्तन्ने ञान् ।
उलकम् कण्टु ञान् कालमाम् पुल्क्कूम्पिन्–
तलयिल् मिन्नुन्न तूमंजुतुल्लियाय् !

मन को मगन कर देने वाले
अखिल विश्व के अनोखे गायक !
तू ही तो है जो मेरे अन्दर गीत बनकर बसा है;
अन्यथा क्या बिसात थी इस तुच्छ जड़ वस्तु की
किंचित् भी कर सकती राग–आलाप इस प्रकार हर्षोल्लास से भरकर!

मन्द–हास का मनोरम नवल–धवल फेन,
प्रेम प्रवाह की कलकल मन्द ध्वनि,
मानव अहंकार की उद्दाम लहर का उछाल,
अश्रुसिक्त नेत्रों के नीले कमल,
दैन्य–दारिद्रय के वर्षाकालीन मेघों की काली छाया,
सांसारिक पापों के भंवर–जाल
इन सब को साथ लिये–लिये बहती रहे
मेरे अंदर की संगीत–कल्लोलिनी यह सरिता, हे प्रभु !

हो सकता है कि कल यह वंशी
मूक होकर काल की लम्बी कूड़ेदानी में गिर जाये,
या यह दीमक का आहार बन जाये, या यह
मात्र एक चुटकी राख के रूप में परिवर्तित हो जाये ।
तब कुछ ही ऐसे जो शोक–निःश्वास लेकर गुणों की चर्चा करेंगे;
लेकिन लोग तो प्रायः बुराइयों के ही गीत गायेंगे ।
जो भी हो, मेरा जीवन तो तेरे हाथों समर्पित होकर
सदा के लिए आनंद–लहरियों में तरंगित हो गया, धन्य हो गया !

साक्षात्कार

हे सर्वव्यापक,
सर्वोच्च विराजमान,
अति अमेय, अनुपम लावण्य–सार,
परमशुद्ध, सनातन आकाश ! नमस्कार है तुम्हें !

तुम्हारी दूरी से स्तब्ध ये पर्वत पंक्तियां
तुम्हें ताक रही हैं !
आश्चर्य के साथ मुंह उठाये
किन्तु दूब,
तुम्हारे शीतल कपोल का स्पर्श माथे पर अनुभव कर
पुलकित रहती है !
कितना आश्चर्य है यह कि
तुम दूर से भी दूर हो
और निकट से भी निकट !

मैं हूं एक क्षुद्र हिमकणिका अन्ध–रजनी की सन्तान,
किन्तु जब तुम्हारे अनुग्रह की नवल किरण
अचानक मेरी अन्तरात्मा पर पड़ी
और बीच का तमोमय आवरण हटा
तो इस अपने क्षणभंगुर जीवन की कनी में
मैंने आप ही को देखा;
और देखा इस दुनिया को
काल–रूपी दूब के सिर पर चमकने वाली
शबनम के रूप में !

वलरुमत्भूतहर्षड्ड़लाल्त्तल–
निर्रुकिट्टुमेन्टे मुकमाम् जीवनिल्
किलरुमानन्दपारवश्यम् पक–
र्न्नल पुलकमुलकलणिकयाय् !
निमिषमात्रानुभूतियालात्माविल्–
क्कुमियुमानन्दवेलियेट्टत्तिनाल्
करकलोक्केयुम् मुड्डय् जीवित–
क्कटलु कण्टु आनेकमाय्, पूर्णमाय् !

मैं शिथिल–सा हो गया विस्मय और आनन्द के मारे
और मेरे प्राणों में तरंगित होने वाले
आनन्द की विवश हिलोरों में घुल–मिल कर
यह धरती पुलक–कण्टकित हो गयी !
तब इस पल–भर की अलौकिक अनुभूति से
आत्मा के भीतर उमड़ने वाले आनन्द के ज्वारभाटे में
मैंने जीवन–सागर को
सीमा–विहीन, एक, अखण्ड, और परिपूर्ण देखा !

भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेताओं की सूची

कृति-शीर्षक	कतिकार	विधा	भाषा	पुरस्कार वर्ष	
1. ओटक्कुषल्	श्री जी० शंकर कुरुप	कविता	मलयालम	1965	
2. गणदेवता	श्री ताराशंकर बन्द्योपाध्याय	उपन्यास	बांङ्ला	1966	
3. श्री रामायण दर्शनम्	डा० कु० वे० पुट्टप्पा	कविता	कन्नड़	1967	सहविजेता
4. निशीथ	डा० उमाशंकर जोशी	कविता	गुजराती	1967	सहविजेता
5. चिदम्बरा	श्री सुमित्रानन्दन पन्त	कविता	हिन्दी	1968	
6. गुलेनग्मा	श्री फ़िराक़ गोरखपुरी	कविता	उर्दू	1969	
7. रामायण कल्प वृक्ष	डा० विश्वनाथ सत्यनारायण	कविता	तेलुगु	1970	
8. स्मृति सत्ता भविष्यत्	श्री विष्णुदे	कविता	बांङ्ला	1971	
9. उर्वशी	डा० रामधारी सिंह 'दिनकर'	कविता	हिन्दी	1972	
10. नाकुतन्ती	डा० द० रा० बेन्द्रे	कविता	कन्नड़	1973	सहविजेता
11. माटीमटाल	श्री गोपीनाथ महान्ती	उपन्यास	ओड़िया	1973	सहविजेता
12. ययाति	श्री वि० स० खाण्डेकर	उपन्यास	मराठी	1974	
13. चित्ति रप्पावै	श्री पे० वे० अखिलण्डम्	उपन्यास	तमिल	1975	
14. प्रथम प्रतिश्रुति	श्रीमती आशापूर्णा देवी	उपन्यास	बांङ्ला	1976	
15. मुकज्जिय कनसुगलु	डा० शिवराम कारंत	उपन्यास	कन्नड़	1977	
16. कितनी नावों में कितनी बार	श्री स० ही० वा० अज्ञेय	कविता	हिन्दी	1978	
17. मृत्युंजय	डा० वीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य	उपन्यास	असमिया	1979	
18. ओरु देशत्तिन्ते कथा	एस० के० पोट्टेक्काट	यात्रा वृतान्त	मलयालम	1980	

हिन्दी सलाहकार समितियों की बैठकें : कुछ प्रमुख निर्णय

(1) शिक्षा मंत्रालय

शिक्षा, समाज कल्याण और संस्कृति मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समिति की आठवीं बैठक शास्त्री भवन, नई दिल्ली में 2 अप्रैल, 1981 को केन्द्रीय शिक्षा मंत्री श्री शंकरराव चव्हाण की अध्यक्षता में आयोजित हुई जिसमें समिति के 23 सदस्यों एवं 10 संबंधित अधिकारियों ने भाग लिया।

समिति के सदस्यों का स्वागत करते हुए शिक्षा मंत्री ने सरकारी प्रयोजनों के लिए हिन्दी के प्रगामी प्रयोग के सम्बन्ध में मंत्रालय की उपलब्धियों पर प्रकाश डाला और इस बात का आश्वासन दिया कि उसके सदस्यों के कुशल मार्गदर्शन से शिक्षा तथा संस्कृति और समाज कल्याण मंत्रालयों में यथासंभव अधिकतम काम बहुत जल्दी हिन्दी में किया जाएगा। उनके भाषण का मूल पाठ निर्णयों के अन्त में दिया गया है।

विषय संख्या 1—राजभाषा अधिनियम, राजभाषा नियम और इस संबंध में जारी किए गए अनुदेशों के अनुसार मंत्रालय के सरकारी काम काज में हिन्दी के प्रयोग से सम्बन्धित स्थिति पर विचार करना।

मंत्रालय के सरकारी काम काज में हिन्दी के प्रयोग से संबंधित स्थिति पर विचार किया गया। **श्री राम लाल परीख** द्वारा उठाए गए एक मुद्दे पर, इस बात पर सहमति व्यक्त की गयी कि दोनों शिक्षा और संस्कृति तथा समाज कल्याण मंत्रालयों के उन कार्यालयों के नाम तथा संख्या जहां हिन्दी कार्यान्वियन समितियां विद्यमान हैं और जहां ये विद्यमान नहीं हैं, उसके कारणों को दर्शाने वाला एक विवरण अगली बैठक में रखा जाए।

विषय संख्या 2—सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग के लिए राजभाषा विभाग द्वारा तैयार किए गए वार्षिक कार्यक्रम के कार्यान्वियन पर विचार करना।

सचिव, राजभाषा विभाग ने सूचित किया कि वर्ष 1981-82 के लिए कार्यक्रम तैयार कर लिया गया है और इसे शीघ्र ही विभिन्न मंत्रालयों को भेज दिया जाएगा। इसी दौरान, विभिन्न अधीनस्थ कार्यालयों से वर्ष 1980-81 के कार्यक्रम की मूल्यांकन रिपोर्टें प्राप्त कर शिक्षा तथा संस्कृति और समाज कल्याण मंत्रालयों में से प्रत्येक के सम्बन्ध में समेकित रिपोर्ट राजभाषा विभाग को भेज दी जाए।

डा. डी. पी. पटनायक, निदेशक, केन्द्रीय भारतीय भाषा संस्थान, मैसूर ने महसूस किया कि चूंकि अधिकांश हिन्दी का काम हिन्दी भाषी राज्यों में किया जा रहा है, अतः यह जरूरी है कि अहिन्दी भाषी राज्यों में काम की गति में तेजी लाने के लिए कुछ विशेष कदम उठाए जाएं। अतः उन्होंने सुझाव दिया कि हिन्दी के प्रगामी प्रयोग के संबंध में हिन्दी टंककों, हिन्दी आशुलिपिकों हिन्दी सहायकों और हिन्दी अनुवादकों के पदों के सम्बन्ध में वित्त मंत्रालय द्वारा जारी पदों के सृजन पर प्रतिबंध सम्बन्धी आदेशों में छूट दी जानी चाहिए। श्री एच. वी. गास्वामी, संयुक्त सचिव, राजभाषा विभाग ने समिति को सूचित किया कि इस संबंध में आदेश पहले ही जारी किए जा चुके हैं और इसकी प्रतियां सभी वित्तीय सलाहकारों को भेज दी गयी हैं। इस बात से सहमति व्यक्त की गयी कि इन आदेशों की प्रति प्राप्त कर दोनों मंत्रालयों के सभी अधीनस्थ और सम्बद्ध कार्यालयों को भेज दी जाएं। डा. पटनायक ने यह भी सुझाव दिया कि सरकार को इस बात पर विचार करना चाहिये कि अहिन्दी भाषी अधिकारियों को हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त करने पर हिन्दी क्षेत्रों की यात्रा करने के लिए एक अतिरिक्त एल. टी. सी. (अवकाश यात्रा रियायत) दी जाए। प्रोत्साहन और पुरस्कार प्रदान करने वाली योजना को और उदार बनाया जाए। राजभाषा विभाग के सचिव श्री जे. एन. तिवारी, इन सुझावों की जांच करने के लिए सहमत हो गए। कुछ सदस्यों ने इच्छा व्यक्त की कि यह शिक्षा मंत्रालय का उत्तरदायित्व होना चाहिये कि वह एक व्यापक रूप से स्वीकार्य हिन्दी व्याकरण तैयार करे और बोली जाने वाली हिन्दी के स्वरूप के बारे में एक सर्वेक्षण आयोजित करे ताकि अपनाई गई राजभाषा को, सर्व साधारण की स्वीकृति प्राप्त हो। इस संबंध में भाषा आयोजना समिति के गठन पर विचार किया जाए। केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय के प्रकाशनों के क्षेत्र के बारे में कुछ टिप्पणियां की गईं जिन्हें स्पष्ट किया गया।

श्री विद्यानिवास मिश्र और श्री रामलाल परीख ने इस बात का उल्लेख किया कि शिक्षा मंत्रालय के अधीन विभिन्न संगठनों के प्रकाशनों के हिन्दी अनुवाद का प्रबन्ध किया जाए। केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा इस संबंध में पहले से कुछ कदम उठाए गये हैं, परन्तु राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के हिन्दी प्रकाशनों की संख्या बढ़ाने की अधिक आवश्यकता है।

विषय संख्या 3—मंत्रालय के विभागों की राजभाषा कार्यान्वियन समितियों के महत्वपूर्ण निर्णयों/सिफारिशों पर की गई कार्रवाई का पुनरीक्षण।

इस सम्बन्ध में प्रगति नोट कर ली गई और यह सहमति हुई कि कार्यान्वियन समितियों के विभिन्न निर्णयों पर की गई

कार्रवाई, तथा बैठक के कार्यवृत्त हिन्दी सलाहकार समिति के सदस्यों को भेजे जाएं ताकि उन्हें समय-समय पर प्रगति के संबंध में अवगत कराया जा सके।

विषय संख्या 4--सम्बन्धित मंत्रालयों द्वारा चलाई जा रही मौजूदा हिन्दी की योजनाओं के संबंध में एक रिपोर्ट प्राप्त करना।

इस सम्बन्ध में स्थिति नोट की गई। तथापि इस बात पर सहमति हुई कि क्योंकि शिक्षा मंत्रालय की कोई अपनी योजना (राजभाषा विभाग द्वारा तैयार की गई योजनाओं के अतिरिक्त) नहीं है। अतः इस मद को कार्यसूची में हर बार शामिल करने की आवश्यकता नहीं है। बैठक में यह निर्णय लिया गया कि इस मद को भविष्य में विचारार्थ छोड़ दिया जाए।

शिक्षामंत्री श्री शंकरराव चह्वाण का वक्तव्य

मित्रो,

मैं शिक्षा तथा संस्कृति और समाज कल्याण मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समिति की आठवीं बैठक के अवसर पर आप सबका सहर्ष स्वागत करता हूं। जैसा कि आपको पता है, यह बैठक दो वर्ष के बाद हो रही है। अनेक कारणों की वजह से, जिनमें से मुख्य 1979 में छठी लोक सभा की समाप्ति है, समिति के गठन में परिवर्तन आवश्यक हो गया था। संसदीय कार्य विभाग को सातवीं लोक सभा के सदस्यों में से नामांकन करना पड़ा और यह प्रक्रिया इस वर्ष जनवरी में ही समाप्त हुई। यह कहते हुए मुझे सन्तोष है कि फिर भी शिक्षा और संस्कृति तथा समाज कल्याण मंत्रालयों की राजभाषा कार्यान्वयन समितियों की बैठकें निश्चित अवधि के अनुसार होती रही हैं और आपको इन मंत्रालयों में हिन्दी के प्रयोग तथा उसकी गतिविधियों से बराबर अवगत कराया जाता रहा है। जबकि शिक्षा तथा संस्कृति मंत्रालय की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की छः बैठकें हो चुकी हैं और समाज कल्याण मंत्रालय की दो। इन समितियों के कार्यवृत्तों से आपको पता चल ही गया होगा कि राजभाषा हिन्दी के उत्तरोत्तर प्रयोग की दिशा में इन दोनों मंत्रालयों में कार्य को सुनियोजित ढंग से बढ़ाया गया है। इस मंत्रालय के कार्यालयों जैसे केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय तथा इस निदेशालय के चार क्षेत्रीय कार्यालयों--मद्रास, हैदराबाद, कलकत्ता तथा गोहाटी में एवं केन्द्रीय हिन्दी संस्थान आगरा और इसके तीन क्षेत्रीय केन्द्रों-हैदराबाद, गोहाटी तथा नई दिल्ली में अधिकतर कामकाज हिन्दी में होता है। समिति की पिछली बैठक के बाद शिक्षा तथा संस्कृति मंत्रालय राजभाषा अधिनियम 1963 के नियम 10(4) के अन्तर्गत (जिसके अनुसार वह कार्यालय जिसमें 80 प्रतिशत से ज्यादा कर्मचारी हिन्दी जानते हों उसे अधिसूचित किया जाना चाहिए,) अपने 32 कार्यालयों को अधिसूचित कर चुका है।

शिक्षा और संस्कृति तथा समाज कल्याण मंत्रालयों के कुल 1580 कर्मचारियों में से 1144 कर्मचारी हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखते हैं। प्रशिक्षित कर्मचारियों में से 725 वास्तव में हिन्दी में टिप्पण एवं मसौदा लेखन का कार्य करते हैं। इसका मतलब यह हुआ कि लगभग 72 प्रतिशत कर्मचारी हिन्दी का अच्छा कार्यसाधक ज्ञान रखते हैं और लगभग 45 प्रतिशत कर्मचारी वास्तव में सरकारी कामकाज हिन्दी में करते हैं। मेरे विचार से आप मुझसे सहमत होंगे कि जहां तक कर्मचारियों को हिन्दी में प्रशिक्षित करने की बात है, यह प्रगति संतोषजनक है। कुल 520 आशुलिपिकों/टंककों में से 62 को हिन्दी आशुलिपि/टंकण में प्रशिक्षित किया जा चुका है। शिक्षा और संस्कृति एवं समाज कल्याण दोनों ही मंत्रालयों में 664 टाइपराइटरों में से 66 टाइपराइटर हिन्दी के हैं।

विचाराधीन अवधि में 63 संकल्प, सामान्य आदेश, आदि जारी किए गए थे। ये सभी अंग्रेजी और हिन्दी दोनों में थे। हिन्दी भाषी राज्यों को यहां से 940 पत्र हिन्दी में जारी किए गए। हिन्दी में प्राप्त 6043 पत्रों में से केवल 277 का उत्तर अंग्रेजी में दिया गया। सेवा-पंजियों में प्रविष्टियां करने के लिए हिन्दी की रबड़ मोहरें इस्तेमाल की जा रही हैं और जब बिल हिन्दी में प्राप्त होते हैं तो उनके चैक भी हिन्दी में बनाए जाते हैं। फिर भी मेरा मंत्रालय बहुत शीघ्र कम-से-कम हिन्दी भाषी क्षेत्रों को हिन्दी में चैक भेजना शुरू कर देगा।

हिन्दी जानने वाले कर्मचारियों को हिन्दी में टिप्पण तथा मसौदा लेखन में प्रशिक्षित करने के लिए हम 1974 से लेकर अब तक 10 कार्यशालाएं आयोजित कर चुके हैं। मंत्रालय हिन्दी के प्रयोग के बारे में अपने अधीनस्थ कार्यालयों पर भी निगरानी रखता है और समय-समय पर आवश्यक मार्गदर्शन भी करता रहता है। यात्रासंबंधी मितव्ययिता के निर्देशों के कारण विभिन्न कार्यालयों का निरीक्षण करने का कार्य मंद रहा है; लेकिन अब निरीक्षण कार्य का एक नियमित कार्यक्रम बनाने का विचार है ताकि उपचारी पग शीघ्र उठाए जा सकें। वर्ष 1980-81 में शिक्षा तथा संस्कृति मंत्रालय के 9 अधीनस्थ कार्यालयों का एवं समाज कल्याण मंत्रालय के 8 अधीनस्थ कार्यालयों का निरीक्षण किया गया।

मैं आपका ज्यादा समय नहीं लेना चाहूंगा और इन शब्दों के साथ अपनी बात समाप्त करना चाहूंगा कि राजभाषा अधिनियम, 1963 के प्रावधानों तथा राजभाषा विभाग द्वारा इस सम्बन्ध में समय-समय पर जारी किए गए निर्देशों का पालन करने में शिक्षा और संस्कृति तथा समाज कल्याण मंत्रालय पूर्णतः प्रयत्नशील है। केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय ने अंग्रेजी-हिन्दी तथा हिन्दी-अंग्रेजी शब्दावली प्रकाशित की है जो हिन्दी में टिप्पण तथा मसौदा लेखन में सभी कर्मचारियों के लिए बहुत उपयोगी है। इन दोनों प्रकाशनों की एक एक प्रति इस समिति के सदस्यों को पहले ही दी जा चुकी है। कुछ और हिन्दी प्रकाशन जो इस मंत्रालय के प्रकाशन एकक ने प्रकाशित किए हैं वे भी आपके समक्ष प्रस्तुत हैं।

मुझे विश्वास है कि आपके कुशल मार्गदर्शन में मेरे मंत्रालय में अधिकतर सरकारी कामकाज शीघ्र ही हिन्दी में किया जाएगा। इस बारे में मैं सदस्यों के सुझावों का स्वागत करूंगा।

(2) डाक तार विभग

4-4-1981 को डाकतार भवन के समिति कक्ष में डाकतार हिन्दी सलाहकार समिति की 12वीं बैठक संचार मंत्री श्री सी. एम. स्टीफेन की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। अध्यक्ष महोदय के अतिरिक्त 26 सदस्य और 13 वरिष्ठ अधिकारी बैठक में सम्मिलित हुए।

2. संचार मंत्री श्री सी. एम. स्टीफेन ने समिति के सदस्यों का हार्दिक स्वागत करते हुए कहा कि पुनर्गठित समिति की इस प्रथम बैठक का उद्देश्य परिचयात्मक है, इसलिए हमने सदस्यों से विचारार्थ विषय नहीं मंगवाये और यह निश्चय किया कि संचार मंत्रालय में राजभाषा अधिनियम और उसके अधीन बने नियमों की विभिन्न व्यवस्थाओं पर अमल करने की दिशा में हुई प्रगति पर ही इस बैठक में विचार-विमर्श किया जाए। प्रारम्भ में ही संचार मंत्री ने हिन्दी की संवैधानिक स्थिति का खुलासा किया। उन्होंने कहा कि संविधान में हिन्दी को संघ की भाषा का स्थान दिया गया है। इसके लिए 15 वर्ष की एक सीमा यह सोचकर रखी गई थी कि इस अवधि में इस दिशा में इतनी प्रगति हो जाएगी कि हिन्दी में संघ का सारा कार्य किया जा सकेगा किन्तु ऐसा हो नहीं पाया। इसके कारण हम सबको मालूम हैं। हिन्दी के विकास और धीरे-धीरे राजभाषा के रूप में इसकी स्वीकृति के बारे में निराश होने की कोई आवश्यकता नहीं है।

3. हमने इस दिशा में अनेक कदम उठाये हैं। 1963 में राजभाषा अधिनियम बना, जिसका 1967 में संशोधन किया गया। अधिनियम के अधीन नियम बनाये गये हैं। फिर कई सलाहकार समितियों का गठन किया गया है। अनेक मार्गदर्शी सिद्धान्त निर्धारित किये जा रहे हैं और संघ के कामकाज में हिन्दी के प्रयोग के लिए वार्षिक कार्यक्रम बनाये जाते हैं। इन कार्यक्रमों पर अमल की जिम्मेदारी संघ के विभिन्न मंत्रालयों को सौंपी गई है।

4. हमारा देश एक बहुभाषी राष्ट्र है। **हमें राष्ट्रीय एकता की पूर्ण सफलता के लिए एक ऐसी आम भाषा का विकास करना है जिसे देश के सभी लोग समझ सकें।** संतोष की बात है कि हर साल हिन्दी सीखने वालों की संख्या बराबर बढ़ती जा रही है। हम निश्चित रूप से सही दिशा में बढ़ रहे हैं किन्तु हिन्दी के प्रचार-प्रसार के संबंध में हमारा दृष्टिकोण परस्पर समझदारी का और काफी लचीला होना चाहिए।

5. संचार मंत्री ने कहा कि भाषाएं कालान्तर में दूसरी भाषाओं और बोलियों से शब्द ग्रहण करती और उन्हें आत्मसात करती हैं। इस प्रकार उनका स्वाभाविक विकास होता जाता है। मिसाल के तौर पर शेक्सपीयर और मिल्टन के समय में जो अंग्रेजी बोली जाती थी, आज की अंग्रेजी उससे काफी अलग है। तब से आज तक अंग्रेजी ने न जाने कितने शब्द दूसरी भाषाओं से ग्रहण कर पचा लिये हैं और आज वे उस भाषा के अभिन्न अंग बन चुके हैं। कहते हैं कि अंग्रेजी भाषा में 80 फी सदी शब्द दूसरी भाषाओं से लिये गये हैं। उन्होंने भारतीय भाषाओं से भी शब्द लिये हैं। अंग्रेजी की भांति हिन्दी का भी इसी प्रकार से विकास हो रहा है। संचार मंत्री ने अपना पक्का विश्वास व्यक्त किया कि अन्ततोगत्वा हिन्दी का भी इस रूप में विकास होगा कि इसमें देश की विभिन्न भाषाओं के शब्द और उनकी अभिव्यक्तियां घुल मिल जाएंगी। फिर इसे सभी भारतवासी समझेंगे और स्वतः स्वीकार करेंगे।

6. संचार मंत्री ने सदस्यों से कहा कि वे डाक-तार विभाग में हिन्दी कार्यक्रम लागू करने के बारे में अपने सुझाव दें। उन्होंने यह भी निवेदन किया कि सुझाव देते समय सदस्यगण इस मंत्रालय की विशेष परिस्थितियों को ध्यान में रखेंगे। संचार मंत्री ने सदस्यों से प्रार्थना की कि वे सदस्य-सचिव की रिपोर्ट पर अपने विचार व्यक्त करें।

7. **डा. सीताराम जायसवाल** ने कहा कि विभाग हिन्दी की विभिन्न परीक्षाएं पास करने पर कर्मचारियों को 250 और 300 रुपये का एक मुश्त पुरस्कार देता है। यह रकम बहुत पहले निर्धारित की गई थी। चीजों के दाम बढ़ गये हैं। कर्मचारियों को हिन्दी सीखने के लिए यह रकम बहुत कम है। अब इसमें वृद्धि होनी चाहिए।

8. **डा. मलिक मोहम्मद** ने कहा कि सदस्य सचिव की रिपोर्ट में बतलाया गया है कि अंग्रेजी की अपेक्षा देवनागरी में तार सस्ते पड़ते हैं। विभाग ने आम जनता की सूचना के लिए तारघरों में पोस्टर भी लगाये हैं किन्तु सच्चाई यह है कि एक स्थान से किसी दूसरे स्थान को भेजे जाने वाले देवनागरी तार अंग्रेजी के तारों की अपेक्षा विलम्ब से पहुंचते हैं। डा. मलिक मोहम्मद का कहना था कि इस विलम्ब की वजह यह है कि भेजने और प्राप्त करने वाले दोनों सिरों पर तारघरों में हिन्दी मोर्स में प्रशिक्षित टेलीग्राफिस्ट पर्याप्त संख्या में उपलब्ध नहीं हैं।

9. सदस्य (प्रकाशन) ने समिति के सदस्यों को सूचित किया कि डाक-तार विभाग ने अनेक स्थानों पर लिप्यंन्तरण केन्द्र खोले हैं जहां विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं की लिपियों में लिखे पतों का लिप्यंन्तरण किया जाता है ताकि उनका वितरण शीघ्र किया जा सके।

10. जहां तक पोस्टमैनों के प्रशिक्षण का प्रश्न है, प्रो. एन. नागप्पा ने सुझाव दिया कि प्रत्येक वितरण डाकघर में देवनागरी और अन्य क्षेत्रीय भाषाओं की लिपियों के चार्ट रख देने चाहिएं। इससे अहिन्दी-भाषी इलाकों में ऐसे पत्रों का वितरण करने में सुविधा होगी जिनमें देवनागरी में पते लिखे रहते हैं। इस तरह से देवनागरी पते वाले पत्रों के वितरण में विलम्ब नहीं होगा। प्रो. नागप्पा ने यह भी सुझाव दिया कि डाक प्रशिक्षण केन्द्रों में पोस्टमैनों को हिन्दी ट्रैनिंग देने की व्यवस्था की जानी चाहिए।

11. **डा. प्रभाकर माचवे** ने सुझाव दिया कि देवनागरी में लिखे पते पढ़ने के लिए आधुनिक वैज्ञानिक तरीके अपनाए जाने चाहिएं। विकसित देशों में तो इस काम के लिए कम्प्यूटरों की सहायता ली जा रही है। इस विभाग को भी पते पढ़ने के लिए यंत्रों की सहायता लेनी चाहिए।

12. **श्री आंजनेय शर्मा** ने सुझाव दिया कि डाक-तार विभाग को चाहिए कि वह विभिन्न श्रेणी के कर्मचारियों को उनके कार्य को दृष्टि में रखकर हिन्दी प्रशिक्षण देने की व्यवस्था करे। गृह मंत्रालय ने यह भी माना है कि इस प्रकार की प्रशिक्षण व्यवस्था ही सही है। श्री शर्मा ने विभाग की इस बात के लिए प्रशंसा की कि उसने पोस्टमैनों के प्रशिक्षण के लिए एक विशेष पाठ्यक्रम तैयार किया है और इसी प्रकार के पाठ्यक्रम टेलीफोन आपरेटरों, लाइनमैनों इत्यादि के लिए भी तैयार किए जाने चाहिए।

13. श्री शर्मा ने इस बात पर हार्दिक प्रसन्नता जाहिर की कि डाक-तार विभाग ने टेलीफोन पर हिन्दी विशेष सेवा '177' का प्रारम्भ किया है जो बहुत ही उपयोगी सेवा है। प्रो. डी. एल. मुनीम ने जोर देकर कहा कि ऐसी भाषा का प्रयोग करना चाहिए जो सरल हो और समझ में आ सके। उन्होंने इस बात पर चिन्ता प्रकट की कि सरकारी विभागों में जिस प्रकार की हिन्दी का प्रयोग हो रहा है वह बहुत ही संस्कृतनिष्ठ है। उन्होंने यह सुझाव दिया कि हिन्दी विशेष सेवा '177' पर कोई शुल्क नहीं लगना चाहिए। उनकी यह भी राय थी कि अहिन्दीभाषी इलाकों में जिन हिन्दी अधिकारियों की नियुक्ति की जाए उन्हें वहां की स्थानीय भाषा का भी ज्ञान होना चाहिए।

14. **प्रो. डी. एल. मुनीम** ने कहा कि समूचे गुजरात राज्य के लिए डाक-तार विभाग ने दो हिन्दी अधिकारियों के पद बनाये हैं—एक की अहमदाबाद टेलीफोन में नियुक्ति की गई है और दूसरा हिन्दी अधिकारी सम्मूचे गुजरात राज्य के डाक और दूर-संचार सर्किलों के लिए है। बड़ौदा टेलीफोन में कोई हिन्दी अधिकारी नहीं है। किसी एक अधिकारी के लिए विभिन्न स्थानों में स्थित अनेक सर्किलों का काम देखना सम्भव नहीं है। हर सर्किल में अनुवादकों और टाइपिस्टों के अलावा एक हिन्दी अधिकारी का पद होना चाहिए। गुजरात राज्य में 3 डिवीजन हैं—बड़ौदा, राजकोट और सूरत। इनमें से हर एक के लिए एक हिन्दी अधिकारी की नियुक्ति की जानी चाहिए। हिन्दी के लिए जो भी पद बनाये गये हैं उन्हें भी तुरंत भरा जाए।

15 **डा० नगेन्द्र** ने कहा कि विभाग में हिन्दी के इस्तेमाल के बारे में तीन मुख्य मुद्दे हैं—(1) विभागीय कर्मचारियों जैसे—पोस्टमैनों, टेलीफोन आपरेटरों, क्लर्कों आदि को हिन्दी की ट्रेनिंग देना, (2) विभागीय कामकाज में हिन्दी का इस्तेमाल करना और (3) संचार के माध्यम के रूप में हिन्दी का इस्तेमाल जैसे ऐसी डाक का वितरण जिस पर पते देवनागरी में लिखे हों या देवनागरी में तारों का निपटारा करना। उनकी राय थी कि इनमें से प्रत्येक विषय पर एक-एक छोटी समिति बना दी जाए जो इनसे संबंधित मसलों पर गहराई से अध्ययन करेगी और समस्याओं की पहचान कर उनके हल के लिए सुझाव देगी। इन समितियों को यह निर्देश देना होगा कि वे करीब एक महीने में अपनी रिपोर्ट दे दें। डा. मलिक मोहम्मद और डा. माचवे ने भी इस प्रस्ताव का समर्थन किया।

16. **डा. कामिल बुल्के** ने कहा कि देवनागरी टेलीफोन डाइरेक्टरी मानकीकरण समिति ने सिफारिश की थी कि डाइरेक्टरियों में वर्णक्रम वही रखा जाए जो नागरी प्रचारिणी सभा के हिन्दी शब्द सागर और हिन्दी साहित्य सम्मेलन के मानक शब्द-कोष में स्वीकार किया गया है। इन दोनों शब्द कोषों के वर्णक्रमों में किंचित अन्तर है। उदाहरण के लिए चन्द्रबिन्दु और अनुस्वार का स्थान इन दोनों कोषों में अलग-अलग दिया गया है। चन्द्रबिन्दु और अनुस्वार के बीच आज अन्तर खत्म हो रहा है तथापि देवनागरी वर्णक्रम के बारे में स्पष्ट निर्देश देना आवश्यक होगा। डा. कामिल बुल्के की राय यह थी कि चन्द्रबिन्दु का इस्तेमाल नहीं किया जाना चाहिए। चन्द्रबिन्दु का कार्य भी अनुस्वार से लिया जा सकता है।

17. **श्री रामावतार शास्त्री** ने कहा कि वे संसदीय राजभाषा समिति की उपसमिति के सदस्य हैं जो डाक-तार विभाग के कार्यालयों का निरीक्षण करती है। समिति के सदस्य के नाते वे बहुत से डाक-तार कार्यालयों में गये हैं, जहां यह बात उनके ध्यान में आयी है कि राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) का पालन नहीं हो रहा है। धारा 3(3) के अनुसार 14 किस्म के दस्तावेज द्विभाषी अर्थात् हिन्दी अंग्रेजी दोनों में जारी करना आवश्यक है किन्तु डाक-तार कार्यालयों में ऐसा नहीं किया जा रहा है, क्योंकि डिविजन स्तर तक के कार्यालयों में अनुवाद और टाइपिंग के लिए स्टाफ नहीं दिया गया है और सर्किल कार्यालयों में जितना स्टाफ दिया गया है वह काफी नहीं है। बहुत से कार्यालयों में टाइपरायटर नहीं हैं। यदि टाइपरायटर है तो टाइपिस्ट नहीं है। राजभाषा अधिनियम की व्यवस्थाओं का पालन करने के लिए विभाग को साधनों की व्यवस्था करनी ही होगी। श्री शास्त्री ने कहा कि उन्हें लोकसभा में यह आश्वासन दिया गया है कि हिन्दी का कार्य करने के लिए पदों के निर्माण में कोई प्रतिबन्ध लागू नहीं है। इसलिए विभाग को पर्याप्त संख्या में हिन्दी अनुवादकों, स्टेनोग्राफरों और टाइपिस्टों की व्यवस्था करनी चाहिए।

18. श्री शास्त्री ने कहा कि राजभाषा अधिनियम के अधीन बने नियम 10 (4) की व्यवस्था के अनुसार केन्द्रीय सरकार के ऐसे सभी कार्यालयों को जिनके 80 फी सदी या इससे अधिक कर्मचारियों को हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान है गजट में अधिसूचित करना आवश्यक है। डाक-तार विभाग के कुछ कार्यालयों में यह शर्त पूरी होती है किन्तु उन्हें अभी तक गजट में अधिसूचित नहीं किया गया है। उदाहरण के तौर पर चण्डीगढ़ टेलीफोन दफ्तर एक ऐसा दफ्तर है जो यह शर्त पूरी करता है अतः इसे गजट में अधिसूचित किया जाना चाहिए।

19. **श्री गणपत हीरालाल भगत** जो कि संसदीय राजभाषा समिति के एक अन्य सदस्य हैं, श्री रामावतार शास्त्री की राय से सहमति प्रकट की। समिति के दूसरे सदस्यों ने डाक-तार विभाग के अधीनस्थ कार्यालयों में हिन्दी के लिए स्टाफ न देने का मसला उठाया। श्री भगत ने यह भी कहा कि निदेशालय से हिन्दी अधिकारी और अनुवादक आदि अधीनस्थ कार्यालयों में भेजने के बजाय इनकी भर्ती स्थानीय आधार पर की जानी चाहिए। यदि भर्ती की शर्तें पूरी करने वाले कर्मचारी पर्याप्त संख्या में विभाग में उपलब्ध न हों तो विभाग बाहर से भर्ती करे।

20. सदस्यों द्वारा उठाये गये विभिन्न विषयों पर स्पष्टीकरण देते हुए सचिव (डाक-तार बोर्ड) ने कहा कि डाक-तार विभाग ने केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा के सहयोग से पोस्टमैनों के प्रशिक्षण के लिए एक विशेष पाठ्यक्रम तैयार किया है। इस पाठ्यक्रम में देवनागरी और अन्य क्षेत्रीय लिपियों के द्विभाषी चार्ट सम्मिलित हैं। उन्होंने श्री नागप्पा के इस सुझाव का स्वागत किया कि इस तरह के चार्ट सभी डाकघरों में रहने चाहिए।

21. सदस्य (डाक-प्रचालन) ने कहा कि डाक प्रशिक्षण केन्द्रों में हिन्दी की प्रारम्भिक शिक्षा की व्यवस्था करने के प्रस्ताव की जांच की जाएगी। उन्होंने यह बात स्पष्ट की कि जहां तक पत्रों आदि को नष्ट करने का प्रश्न है विभाग ऐसे मामलों में कड़ा रुख अपनाता है। यदि किसी पत्र का पता साफ न लिखा हो या वह अपर्याप्त हो तो ऐसे पत्र पुनः प्रेषण केन्द्र में भेज दिये जाते हैं जहां इस तरह की व्यवस्था होती है कि इन पत्रों पर लिखे पतों का गहराई से अध्ययन किया जाता है और उन्हें यथा-संभव पानेवाले के पास और नहीं तो भेजने वाले के पास भेज दिया जाता है। उन्होंने कहा कि जहां देवनागरी पते वाले पत्रों के वितरण में देरी होने का प्रश्न है विभाग परीक्षण के तौर पर ऐसे पत्र भेजेगा जिससे यह पता लग सके कि अपने गंतव्य पते पर पहुंचने और इनके वितरण में कितना समय लगा। उन्होंने यह भी आश्वासन दिया कि राजभाषा अधिनियम और उसके अधीन बने सांविधिक नियमों पर अमल करने के लिए आवश्यक वाजिब स्टाफ मंजूर करने के बारे में कार्रवाई की जाएगी।

22. समिति के सदस्यों का धन्यवाद करते हुए संचार राज्य मंत्री ने कहा कि हिन्दी भाषा में अन्य भाषाओं--भारतीय और विदेशी दोनों से शब्द ग्रहण करने और उन्हें आत्मसात करने के सम्बन्ध में काफी उदारता है। यहां तक कि स्वयं हिन्दी नाम भी ऐसा है जो इसे ईरानियों ने दिया है।

इस प्रवृत्ति को उन लेखकों से बल मिला है जो अहिन्दी भाषी होते हुए भी मूल रूप से हिन्दी में मौलिक लेखन कर रहे हैं। ये लेखक अपनी मातृभाषाओं की शैली और उनके शब्द हिन्दी में ला रहे हैं और इस प्रकार हिन्दी निरन्तर समृद्ध होती जा रही है। हर्ष की बात यह है कि ऐसे लेखकों में कई तो हमारी इस हिन्दी सलाहकार समिति के सदस्य भी हैं।

हिन्दी अनेक प्रकार से राष्ट्रीय एकता को समृद्ध करती रही है। संचार राज्य मंत्री ने सदस्यों के द्वारा बैठक के बीच दिये गये सुझावों का स्वागत किया और यह आश्वासन दिया कि इन सुझावों पर अच्छी तरह से गौर किया जाएगा और यथासंभव अमल किया जाएगा।

(3) गृह मंत्रालय

गृह मंत्री ज्ञानी जैलसिंह की अध्यक्षता में 10 जुलाई, 1981 को गृह मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समिति की बैठक हुई जिसमें समिति के 20 सदस्यों ने भाग लिया। इनके अतिरिक्त गृह मंत्रालय के तीनों विभागों के अनेक वरिष्ठ अधिकारी भी बैठक में उपस्थित थे।

प्रारम्भ में अध्यक्ष महोदय ने गृह मंत्रालय की पुनर्गठित हिन्दी सलाहकार समिति की पहली बैठक में सदस्यों का स्वागत करते हुए कहा कि नई हुकूमत आने के बाद इस समिति को नये सिरे से बनाया गया है और इसमें देश के विभिन्न भाषा-भाषी विद्वानों, प्रोफेसरों, लेखकों, पत्रकारों आदि को शामिल किया गया है। उन्होंने समिति के कार्य-क्षेत्र की चर्चा करते हुए बताया कि पहले यह समिति भारत सरकार के सभी मंत्रालयों और विभागों के कामकाज में हिन्दी का इस्तेमाल बढ़ाने के बारे में सलाह देती थी किन्तु अब प्रायः सभी मंत्रालयों की अपनी अलग-अलग हिन्दी सलाहकार समितियां हैं और गृह मंत्रालय की भी अपनी अलग हिन्दी सलाहकार समिति है। इस समिति का काम केवल गृह मंत्रालय और इसके कार्यालयों के कामकाज में हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने के बारे में सलाह देना है। उन्होंने यह भी कहा कि इस हिन्दी सलाहकार समितियों के अलावा प्रधान मंत्री जी की अध्यक्षता में केन्द्रीय हिन्दी समिति है जो भाषा-नीति विषयक मसलों पर विचार तथा निर्णय करती है।

उन्होंने बताया कि भारत के संविधान का यद्यपि हिन्दी और 14 अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद हो चुका है लेकिन वह प्रामाणिक नहीं है। यह अत्यन्त आवश्यक है कि संविधान का प्राधिकृत हिन्दी पाठ होना चाहिए ताकि उसे अंग्रेजी के समान कहीं भी कोट (उद्धृत) किया जा सके। सरकार इस दिशा में प्रयत्नशील है और जल्दी ही एक विधेयक संसद के समक्ष रखा जाएगा।

गृह मंत्रालय के कामकाज में हिन्दी के प्रयोग के बारे में उन्होंने कहा कि इस मंत्रालय का आकार बहुत बड़ा है, इसकी खतोकिताबत अन्य मंत्रालयों के मुकाबले, राज्य सरकारों और जनता के साथ बहुत अधिक होती है। मंत्रालय का पत्र व्यवहार हिन्दी में तो काफी होता है परन्तु फाइलों पर नोटिंग हिन्दी में कम होती है। **उन्होंने सदस्यों से अनुरोध किया कि मंत्रालय को अपने कामकाज में हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने के लिए आपके सलाह-मश्विरे की बड़ी जरूरत है। उन्होंने आशा व्यक्त की कि यह समिति इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य करेगी।**

उन्होंने सभी सदस्यों का, समिति की सदस्यता स्वीकार करने और बैठक में भाग लेने के लिए शुक्रिया अदा किया। इसके बाद निम्नलिखित मुख्य मदों पर चर्चा हुई :--

(1) संघ शासित क्षेत्र में राजभाषा नियमों का अनुपालन किया जाना--अंडमान व निकोबार द्वीप समूह प्रशासन के कामकाज में हिन्दी प्रयोग की वस्तुस्थिति का अध्ययन :

राजभाषा विभाग के सचिव तथा भारत सरकार के हिन्दी सलाहकार श्री जय नारायण तिवारी ने समिति को बताया कि समिति की पिछली बैठक के निर्देशानुसार राजभाषा विभाग के एक अध्ययन दल ने अंडमान व निकोबार द्वीप समूह के कार्यालयों के कामकाज में हिन्दी के प्रयोग की वस्तुस्थिति का पता लगाने के लिए दौरा किया था। उन्होंने बताया कि यह बात सही नहीं है कि वहां के कार्यालयों में पहले के मुकाबले हिन्दी के प्रयोग में कमी आई है बल्कि वस्तुस्थिति यह है कि "ख" क्षेत्र में स्थित संघ

राज्य क्षेत्र होने के कारण वहां के कार्यालयों का कामकाज केन्द्रीय मंत्रालयों के समान हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में हो रहा है। इस संघ राज्य क्षेत्र में बंगला, तमिल, पंजाबी, मराठी, हिन्दी भाषा-भाषी लोग आकर बसे हुए हैं और वहां जनता में हिन्दी अपने आप एक संपर्क भाषा के रूप में विकसित हो गई है।

राजभाषा विभाग के सचिव ने बताया कि द्वीप समूह का अपना कोई विधान मंडल नहीं है, इसलिए संघ की राज भाषा ही द्वीपसमूह प्रशासन की राजभाषा है। राजभाषा अधिनियम के अनुसार वहां द्विभाषिकता का अधिक प्रयोग किया जा रहा है।

यह तय किया गया कि वहां पुनः एक अध्ययन दल भेजकर स्थिति का जायज़ा लिया जाए।

(2) **हिन्दी में मूल लेखन के लिए सरदार वल्लभ भाई पटेल और पंडित गोविन्द वल्लभ पंत पुरस्कार माला संस्थापित करना:**

श्री हिमांशु जोशी ने इस बात के लिए बधाई दी कि मंत्रालय लोक प्रशासन और प्रबंध विज्ञान तथा इनसे सम्बद्ध विषयों पर हिन्दी में मौलिक पुस्तकों के लिए सरदार वल्लभ भाई पटेल के नाम पर एक व्यापक पुरस्कार माला आरंभ करने जा रहा है। उन्होंने अनुरोध किया कि पंडित गोविन्द वल्लभ पंत के नाम पर "पुलिस प्रशासन, अन्वेषण तकनीक, अपराध शास्त्र, विधि विज्ञान और इनसे सम्बद्ध विषयों पर हिन्दी की मौलिक पुस्तकों के लिए पुरस्कार माला के नियम शीघ्र तैयार किए जाएं तथा इस योजना को भी आरंभ किया जाए।

अध्यक्ष महोदय ने आश्वासन दिया कि इसके नियमों को जल्दी अंतिम रूप दिया जाएगा।

(3) **गृह मंत्रालय और उसके विभागों के ऐसे कार्यों से संबंधित विषयों की सूची तैयार करना जिन पर हिन्दी में पुस्तकें उपलब्ध नहीं हैं :**

डा. मलिक मोहम्मद ने भी मंत्रालय को इस बात पर बधाई दी कि गृह मंत्रालय के कामकाज से संबंधित विषयों पर हिन्दी में मूल रूप से पुस्तकें लिखने, उच्च कोटि की पुस्तकों के हिन्दी अनुवाद किए जाने और विशिष्ट विषय देकर हिन्दी में पुस्तकें लिखने के लिए पुरस्कार देने का निश्चय किया गया है। उन्होंने आशा व्यक्त की कि इस योजना के चालू होने पर इन विषयों पर हिन्दी में काफी पुस्तकें लिखी जाने लगेंगी। फिर भी, उन्होंने यह अनुरोध किया कि उन विषयों की सूची तैयार की जाए जिन पर हिन्दी में पुस्तकें उपलब्ध नहीं हैं। उन्होंने यह भी अनुरोध किया कि शिक्षा मंत्रालय से निवेदन किया जाए कि वे अपनी मानक पुस्तक योजना के अंतर्गत इन विषयों की पुस्तकें भी हिन्दी में तैयार करायें।

राजभाषा विभाग के सचिव ने कहा कि उक्त विषयों की सूची अगली बैठक में प्रस्तुत की जाएगी। उन्होंने यह भी कहा कि शिक्षा मंत्रालय की योजना के अन्तर्गत केवल विश्वविद्यालय स्तर की पाठ्यपुस्तकें हिन्दी में तैयार की जाती हैं इसलिए इन विषयों की पुस्तकें उनकी योजना के अन्तर्गत नहीं आती हैं।

(4) **गृह मंत्रालय और उसके कार्यालयों के पुस्तकालयों में हिन्दी पुस्तकों की खरीद और हिन्दी पुस्तकों की खरीद पर होने वाले व्यय के प्रतिशत का निर्धारण:**

पर्याप्त विचार-विमर्श के बाद समिति ने सिफारिश की कि सामान्य पुस्तकों की खरीद पर व्यय की जाने वाली राशि में से 50 प्रतिशत अंग्रेजी की और 50 प्रतिशत हिन्दी व अन्य भारतीय भाषाओं की पुस्तकों की खरीद पर खर्च की जाए।

(5) **हिन्दी शिक्षण योजना के अन्तर्गत पुरस्कार योजना को "ट्रेनिंग-ओरियंटेड" के बदले "वर्क ओरियंटेड" बनाया जाए:**

समिति के सभी सदस्यों ने प्रस्तावित प्रोत्साहन योजना को सरकारी काम-काज में हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण और प्रभावी कदम बताते हुए इसका समर्थन किया और इस मामले में वित्त मंत्रालय की मंजूरी शीघ्र प्राप्त करने का आग्रह किया।

श्री गंगाशरण सिंह जी ने कहा कि रेलवे मंत्रालय की तरह गृह मंत्रालय में भी हिन्दी में सबसे अधिक काम करने वाले कार्यालयों को "शील्ड" देने की योजना पर विचार किया जाए।

राजभाषा विभाग के सचिव ने बताया कि प्रस्तावित पुरस्कार योजना वित्त मंत्रालय के पास मंजूरी के लिए भेजी गई है और इस मामले पर उक्त मंत्रालय से आगे और विचार-विमर्श किया जाएगा। उन्होंने यह भी बताया कि हिन्दी में सबसे अधिक काम करने वाले कार्यालयों को "शील्ड" दिए जाने की योजना पर पहले से ही विचार किया जा रहा है।

(6) **समिति की बैठक दिल्ली से बाहर, विशेषकर अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में आयोजित करने पर विचार करना:**

श्री हिमांशु जोशी ने यह सुझाव दिया कि रेल मंत्रालय की तरह गृह मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समिति की बैठक दिल्ली से बाहर भी आयोजित की जानी चाहिए। श्री गंगाशरण सिंह ने कहा कि समिति की अगली बैठकें जल्दी-जल्दी बुलाई जाएं और बैठक का नोटिस कम से कम एक महीने पहले दिया जाए।

अध्यक्ष महोदय ने इस विचार से सहमति व्यक्त की कि समिति की अगली बैठक यथासंभव दिल्ली से बाहर बुलाई जाए। सदस्यों को बैठक की सूचना काफी दिन पहले दी जाएगी और यदि आवश्यक हुआ तो बैठकों की एक से अधिक सिटिंगें भी की जाएंगी।

'ग' क्षेत्र में नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों का गठन

नवम्बर, 1976 में यह निर्णय किया गया था कि "क" और "ख" क्षेत्रों में स्थित उन नगरों में जहां केन्द्र सरकार के 10 या उससे अधिक कार्यालय हैं, एक समन्वय समिति बनाई जाए और वर्ष में कम से कम एक बार इस समिति की बैठक बुलाई जाए। यह भी निर्णय किया गया था कि संबंधित नगर में केन्द्रीय सरकार के वरिष्ठ अधिकारी इस समिति की अध्यक्षता करें। इन समितियों के कार्य वहीं हैं जो मंत्रालयों, विभागों आदि में गठित राजभाषा कार्यान्वयन समितियों के हैं तथापि चूंकि प्रत्येक नगर में समिति विभिन्न कार्यालयों की राजभाषा कार्यान्वयन समितियों के अध्यक्ष इन समितियों के सदस्य होते हैं अतः इनमें नगर की राजभाषा से संबंधित समस्याओं पर व्यापक रूप से विचार-विमर्श किया जा सकता है। वर्ष 1979 में इन समितियों के कार्यक्षेत्र को और व्यापक बनाया गया तथा उसमें राजभाषा अधिनियम, 1963, उसके अधीन बनाए गए राजभाषा नियम, 1976 तथा समय-समय पर जारी किए गए आदेशों आदि के कार्यान्वयन की प्रगति की समीक्षा करने का कार्य भी शामिल किया गया। यह भी निर्णय किया गया कि नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों की वर्ष में कम से कम 2 बैठकें हुआ करें और कम से कम एक बैठक में राजभाषा विभाग के अधिकारी भी भाग लिया करें।

जिन नगरों में नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियां सक्रिय रूप से काम करती रही हैं, उनमें स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों में सरकारी कामकाज में हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने में काफी सहयोग मिला है। इन समितियों की उपयोगिता को देखते हुए अब "ग" क्षेत्र के प्रमुख नगरों में भी नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियां गठित करने का निर्णय लिया गया है। इस क्रम से जम्मू, श्रीनगर, कलकत्ता, गोहाटी, मैसूर, कोचीन, बंगलौर, त्रिवेन्द्रम, विशाखापट्टनम में नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों का गठन किया जा चुका है और निकट भविष्य में हैदराबाद, भुवनेश्वर, दुर्गापुर नगरों में भी इनके गठित किए जाने की संभावना है। ये समितियां वहां के स्थानीय अधिकारियों और विद्वानों की प्रेरणा तथा सहयोग से बनाई जा रही हैं और इनमें उनका यथोचित सहयोग प्राप्त हो रहा है।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, कलकत्ता

कलकत्ता नगर की राजभाषा कार्यान्वयन समिति का गठन होने के पश्चात् पहली बैठक दिनांक 6-2-1981 को सायंकाल तीन बजे सेंट्रल इंस्टीट्यूट आफ पब्लिक हैल्थ एण्ड हाइजीन, चित्तरंजन एवेन्यू, के सभाकक्ष में हुई। इसका उद्घाटन श्री जय नारायण तिवारी, भारत सरकार के हिन्दी सलाहकार तथा सचिव, राजभाषा विभाग द्वारा किया गया। बैठक की अध्यक्षता श्री के. जी. नायर, आयकर आयुक्त (पं. बंगाल-I) ने की। बैठक में केन्द्रीय सरकार के कलकत्ता स्थित सभी कार्यालयों के अध्यक्षों को आमंत्रित किया गया था। इस बैठक में 25 अधिकारियों ने भाग लिया।

बैठक के प्रारम्भ में हिन्दी शिक्षण योजना के उप निदेशक डा. अशोक कुमार भट्टाचार्य ने सचिव, राजभाषा विभाग, संयुक्त सचिव, राजभाषा विभाग तथा उप सचिव, राजभाषा विभाग का परिचय समिति के सदस्यों से कराया। तत्पश्चात् सभी सदस्यों ने अपना-अपना परिचय दिया। केन्द्रीय सरकार की राजभाषा नीति तथा राजभाषा अधिनियम व नियमों आदि के संबंध में जानकारी देते हुए राजभाषा विभाग के उप सचिव श्री विजय सिन्हा ने राजभाषा संबंधी नियमों के कार्यान्वयन पर जोर दिया। उन्होंने नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के महत्व तथा कार्य-परिधि से सदस्यों को अवगत कराया और अनुरोध किया कि केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों में राजभाषा नियमों को सुव्यवस्थित रूप से लागू किया जाय।

3. गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग के सचिव, श्री जय नारायण तिवारी, ने भारत सरकार की राजभाषा नीति का सुन्दर विश्लेषण किया और उसके आधारभूत सिद्धांतों पर प्रकाश डाला। उन्होंने बताया कि भारत में हर राज्य की अपनी राजभाषा है जिसे वे अपने सरकारी काम-काज में इस्तेमाल कर सकते हैं, किन्तु ये क्षेत्रीय भाषाएं सारे देश में संपर्क के लिये काम में नहीं आ सकतीं; इसी कारण केन्द्र सरकार की राजभाषा हिन्दी को सम्पर्क भाषा के रूप में अपनाया गया है। श्री तिवारी ने इस बात पर जोर दिया कि जिस प्रकार हिन्दी को केन्द्रीय सरकार में अंग्रेजी का स्थान लेना है उसी प्रकार राज्यों में अंग्रेजी का स्थान उनकी अपनी क्षेत्रीय भाषाओं द्वारा लिया जाना है। उन्होंने कहा कि भारत सरकार का उद्देश्य सभी भारतीय भाषाओं का पूर्ण विकास करना है और यह तभी सम्भव होगा जब केन्द्रीय सरकारी कार्यलय हिन्दी का अधिकाधिक प्रयोग करने लगें और राज्य सरकार अपनी क्षेत्रीय भाषाओं में कार्य करें। श्री तिवारी ने इस प्रक्रिया को जनता तथा प्रशासन को एक-दूसरे के नजदीक लाने का एकमात्र साधन बताया।

4. बैठक के अध्यक्ष श्री नायर ने राजभाषा कार्यान्वयन पर चर्चा के लिये सदस्यों को आमंत्रित किया। कई सदस्यों ने

कलकत्ता में नगर राजभाषा कार्यान्वियन समिति के गठन का स्वागत किया और आशा प्रकट की कि नगर के केन्द्रीय कार्यालयों में हिन्दी का प्रगामी प्रयोग उत्तरोत्तर बढ़ेगा। उन्होंने संतोष प्रकट किया कि समिति में नियमित रूप से मिलकर वे अपनी समस्याओं को सुलझा सकेंगे तथा आवश्यक निर्णय भी ले सकेंगे।

5. सदस्यों द्वारा उठाये गये प्रश्न निम्न प्रकार थे:--

(क) हिन्दी प्रशिक्षण के लिये कोई अधिकतम आयु सीमा निर्धारित कर दी जाय जिससे निकट भविष्य में अवकाश-प्राप्त करने वाले कर्मचारियों को उससे छूट मिल सके।

(ख) अनुवाद के लिये अधिकतर कार्यालयों में पर्याप्त संख्या में पद नहीं हैं। ऐसे पद शीघ्र बनाये जाएं जिससे हिंदी में कार्य को तथा अधिनियम के प्रावधानों को पूरा किया जा सके।

(ग) हिन्दी तथा हिन्दी टाइपिंग एवं आशुलिपि के लिये प्रशिक्षण-व्यवस्था पर्याप्त रूप में उपलब्ध नहीं है और प्रशिक्षण केन्द्र कार्यालयों से बहुत दूर स्थित हैं। सदस्यों ने इस कमी को दूर करने का अनुरोध किया।

(घ) एक सुझाव यह भी था कि हिन्दी टाइपिंग तथा आशुलिपि के लिये 3 या 4 महीने का गहन प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाया जाए। इस सुझाव पर कई सदस्यों ने आपत्ति प्रकट की कि इतने समय के लिये कर्मचारियों को प्रशिक्षण के लिये भेजना कठिन होगा।

(ङ) राजभाषा हिन्दी के प्रगामी प्रयोग को गति देने के लिये यह आवश्यक है कि प्रोत्साहनों को और आकर्षक बनाया जाय। इसके लिये यह सुझाव दिया गया कि हिन्दी परीक्षाओं में यदि किसी को बहुत ऊंचे अंक मिले हैं तो उसे पदोन्नति में प्राथमिकता देनी चाहिये।

6. राजभाषा नियमों आदि के संबंध में प्रकट की गई शंकाओं के बारे में सचिव, राजभाषा विभाग तथा संयुक्त सचिव द्वारा स्पष्टीकरण दिये गये तथा समस्याओं के समाधान बताये गये। बैठक के अंत में अध्यक्ष श्री नायर ने राजभाषा विभाग के सचिव को कलकत्ता स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों की ओर से धन्यवाद दिया।

नगर राजभाषा कार्यान्वियन समिति, त्रिवेन्द्रम

हाल में गठित त्रिवेन्द्रम नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की पहली बैठक दिनांक 29 मई 1981 को त्रिवेन्द्रम दूरसंचार प्रशिक्षण केन्द्र में केरल परिमंडल के डाक महाध्यक्ष श्री वी. एन. सिरिल की अध्यक्षता में संपन्न हुई। भारत सरकार के हिन्दी सलाहकार तथा सचिव, राजभाषा विभाग (गृहमंत्रालय) श्री जयनारायण तिवारी मुख्य अतिथि थे। गृहमंत्रालय के उपसचिव श्री वी. बी. सिन्हा भी बैठक में उपस्थित थे।

2. अध्यक्ष ने मुख्य अतिथि और सदस्यों का स्वागत किया। मुख्य अतिथि ने अपने उद्घाटन भाषण में त्रिवेन्द्रम के वरिष्ठ केन्द्रीय सरकारी अधिकारियों को जो नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्य हैं, संबोधित करने में अपनी प्रसन्नता प्रकट की। उन्होंने कहा कि भारत के विभिन्न राज्यों में क्षेत्रीय भाषाओं का प्रयोग होना है। प्रत्येक राज्य में स्थानीय भाषा ही वहां की राजभाषा बनायी गयी है और इसलिए राज्यों के बीच में पत्र व्यवहार के लिए एक सामान्य संपर्क भाषा की आवश्यकता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले केन्द्र में प्रयुक्त राजभाषा अंग्रेजी थी। लेकिन आज हिन्दी का उत्तरोत्तर प्रयोग करके उसे अंग्रेजी के स्थान पर प्रतिस्थापित करना है क्योंकि भारतीय संविधान में हिन्दी राजभाषा के रूप में अपनाई गई है। भारत के अनेक राज्यों ने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में स्वीकार किया है और अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में भी हिन्दी को संपर्क भाषा के रूप में प्रचलित करने का परिश्रम हो रहा है। आजकल अहिन्दी भाषी क्षेत्रों के केन्द्रीय सरकारी कर्मचारियों को कार्यालय के समय में ही गृहमंत्रालय की हिन्दी शिक्षण योजना के अंतर्गत प्रशिक्षण दिया जाता है। भारत में 15 से अधिक भाषाएं प्रयुक्त हैं, लेकिन हिन्दी को ही राजभाषा के रूप में स्वीकार किया गया है क्योंकि जनता का एक वृहद भाग इस भाषा का प्रयोग करता है। केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों द्वारा हिन्दी में प्राप्त पत्रों का उत्तर हिन्दी में ही दिया जाना चाहिये। उसी प्रकार, अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों से हिन्दी भाषी राज्यों को भेजे जाने वाले पत्र, जहां तक हो सके हिन्दी में ही भेजे जाएं। उन्होंने कहा कि सदस्यगण नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति हिन्दी से सम्बन्धित सामान्य समस्याओं पर विचार कर सकते हैं और सदस्य अधिकारी अपने कार्यालयों में सरकारी आदेशों का कार्यान्वयन एकरूपता से कर सकते हैं। श्री तिवारी ने कहा कि भविष्य में इस समिति की बैठक छः महीने में कम से कम एक बार होनी चाहिए।

3. उपसचिव श्री सिन्हा ने केन्द्रीय सरकार कार्यालयों में राजभाषा अधिनियम तथा नियमों के कार्यान्वयन की आवश्यकता पर जोर दिया। उन्होंने कहा कि सामान्य आदेश, अधिसूचना, अनुज्ञप्ति आदि को हिन्दी और अंग्रेजी, दोनों भाषाओं में जारी करना चाहिए। हिन्दी में प्राप्त पत्रों का उत्तर हिन्दी में ही दिया जाना चाहिए। हिन्दी भाषी क्षेत्रों को भेजे जाने वाले पत्र जहां तक हो सके हिन्दी में ही भेजे जाएं।

निम्नलिखित पक्षों पर बैठक में विचार-विमर्श हुए :

1. फार्म, मैनुअल, कोड आदि के अनुवाद तथा छपाई की स्थिति सन्तोषजनक पायी गयी।

2. यांत्रिकी सुविधाओं की उपलब्धि के संबंध में विचार व्यक्त करते हुए श्री सिन्हा ने कहा कि यह निर्णय पहले ही कर लिया गया है कि प्रत्येक कार्यालय में कम से कम एक टाइपराइटर होना चाहिए। हिन्दी टाइपिस्ट के पद जहां-जहां न्यायसंगत है, उनकी मंजूरी दी जाती है। जिन कार्यालयों में हिन्दी टाइपिस्ट नहीं हैं वे, यदि आवश्यक हो, तो अपने मुख्यालय या मंजूरीदाता प्राधिकारी के साथ यह मामला प्रस्तुत कर सकते हैं। इस बीच में, अंग्रेजी टाइपिस्ट तथा आपुलिपिकों को हिन्दी टाइपिंग तथा आपुलिपि में प्रशिक्षणार्थ भेज दिया जाए। निकट भविष्य में त्रिवेन्द्रम में हिन्दी टाइपराइटिंग में प्रशिक्षण की सुविधायें प्रदान करने का प्रस्ताव है।

3. एक सदस्य ने कहा कि पत्रों पर पता यदि हिन्दी में लिखा गया है तो पोस्टमैन द्वारा उसका देर से वितरण किया जाता है। डाक महाध्यक्ष ने कहा कि यदि पता अस्पष्ट है तो उस पत्र को लिप्यंतरण केन्द्र में भेज दिया जाता है और लिप्यंतरण के बाद उसे ठीक रूप से पानेवाले को भेज दिया जाता है और इसलिए विलंब होता है।

4. सदस्यों ने कहा कि एक ही रबर स्टांप पर हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं का प्रयोग होने के कारण स्टांप बड़ा बन जाता है जिससे बहुत कठिनाई होती है। श्री तिवारी ने कहा कि रबर स्टांप और सील द्विभाषी रूप से तैयार करना है और उपर्युक्त कठिनाई को दूर करने के लिए छोटे टाइप का प्रयोग कर सकते हैं। केनरा बैंक के प्रतिनिधि ने चैक पर द्विभाषी स्टाम्प लगाने में होने वाली कठिनाई व्यक्त की।

5. उपसचिव श्री सिन्हा ने कहा कि सामान्य आदेश हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में जारी करना चाहिए। एक सदस्य के प्रश्न पर उन्होंने यह स्पष्टीकरण दिया कि सामान्य आदेश वे आदेश हैं जो कार्यालयों द्वारा कई लोगों की जानकारी के लिए जारी किये जाते हैं। उन्होंने सदस्यों से अनुरोध किया कि वे गृहमंत्रालय द्वारा दिये गये "सामान्य आदेश" की परिभाषा को देखें और अनुदेशों का पालन करें।

6. एक सदस्य ने कहा कि अपने कार्यालय के अधिकांश कर्मचारियों को हिन्दी में सैकन्डरी स्कूल स्तर का ज्ञान है लेकिन वे हिन्दी में सरकारी पत्र-व्यवहार करने में असमर्थ हैं। उपसचिव ने सुझाव दिया कि प्रत्येक कार्यालय में हिन्दी पत्रव्यवहार में गहन प्रशिक्षण देने के लिए कार्यशालायें चलायी जायें। सचिव ने कहा कि उपर्युक्त कठिनाइयों को ध्यान में रखकर अगले जनवरी से अधिक विस्तृत रूप में हिन्दी सिखाने का प्रस्ताव है ताकि कर्मचारियों को पत्रव्यवहार और अन्य कार्य हिन्दी में करने में सहायता मिले।

7. रेलवे के प्रतिनिधि ने कार्यालयों से हिन्दी प्रशिक्षण के लिए नामित कर्मचारियों के क्लास में अनुपस्थित होने के मामले पर चिन्ता प्रकट की। उन्होंने कहा कि ऐसे कर्मचारी नियमित रूप से क्लास में उपस्थित नहीं होते। उनकी राय में इसका कारण यह है कि निरंतर तीन वर्ष तक प्रशिक्षण पाने के बाद प्राज्ञ परीक्षा उत्तीर्ण होने वाले कर्मचारी को प्रोत्साहन के रूप में केवल एक अग्रिम वेतन-वृद्धि दी जाती है जो उनके अगले वेतन-वृद्धि में अवशोषित हो जाती है। उन्होंने सूचित किया कि यह प्रोत्साहन पर्याप्त नहीं है। इसलिए उन्होंने सुझाव दिया कि प्राज्ञ परीक्षा उत्तीर्ण होने वाले कर्मचारियों को दी जानेवाली वेतन-वृद्धि को यदि भविष्य की वेतन-वृद्धि में अवशोषित नहीं किया जाता तो हिन्दी शिक्षण योजना के अंतर्गत हिन्दी सीखने के लिए कर्मचारियों में अधिक दिलचस्पी होगी। श्री तिवारी ने कहा कि अधिक आकर्षक प्रोत्साहन देने का प्रश्न पहले से ही सरकार के ध्यान में आया है।

हिन्दी प्राध्यापक श्री डी. के. पणिक्कर द्वारा धन्यवाद प्रस्ताव के बाद बैठक समाप्त हुई।

--पी. परमेश्वरन नायर
सहायक डाक महाध्यक्ष (बेतार व डाक) एवं सचिव
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, त्रिवेन्द्रम

विधिक दस्तावेजों के मानक प्ररूपों का प्रकाशन

विधि, न्याय और कम्पनी कार्य मंत्रालय के राजभाषा खण्ड ने, विधिक दस्तावेजों के मानक प्ररूप नामक संकलन की दूसरी जिल्द प्रकाशित की है। पहली जिल्द जून, 1978 में प्रकाशित हुई थी। इस खंड में 20 विधिक प्ररूपों (फार्मों), को द्विभाषिक (हिन्दी-अंग्रेजी) रूप में संकलित किया गया है। यह प्रकाशन बहुत ही उपयोगी है। केन्द्रीय सरकार के मंत्रालय एवं विभाग इसे निम्नलिखित पत्ते से प्राप्त कर सकते हैं :--

संयुक्त सचिव एवं प्रारूपकार,
राजभाषा खण्ड, विधि, न्याय और कम्पनी कार्य मंत्रालय,
भारतीय विधि संस्थान भवन, भगवान दास मार्ग,
नई दिल्ली-110004.

भाषा बहता नीर

आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी ने कहा था "सीधी लकीर खींचना टेढ़ा काम है। सहज भाषा पाने के लिए कठोर तप आवश्यक है"। भारत सरकार की यह सुनिश्चित नीति है कि राजभाषा के रूप में प्रयोग की जाने वाली हिन्दी सरल, सुबोध और स्वाभाविक होनी चाहिए। इसी विषय को लेकर "राजभाषा भारती" में तथा अन्यत्र कई लेख छपे हैं। जहां इन लेखों में सरल भाषा की आवश्यकता, उसका स्वरूप और उसके गुणों पर बहुत विद्वत्तापूर्ण चर्चा और विश्लेषण किया गया है, वहां सरल भाषा का एक भी वास्तविक उदाहरण नहीं दिया गया है। यहां तक कि सरल भाषा के समर्थन में लिखी गई भाषा स्वयं में क्लिष्ट और जटिल थी। यही हाल उस सरकारी हिदायत का था जिसमें सरकारी कामकाज में सरल और सुबोध भाषा के प्रयोग पर ज़ोर देते हुए लेखकों को "अपने पांडित्य के प्रदर्शन का लोभ संवरण" करने को कहा गया था।

सरल हिन्दी से अभिप्राय क्या है, इस बारे में देश के अलग-अलग भागों में अलग-अलग मत हो सकते हैं। उत्तर-पश्चिम भारत में उर्दूनिष्ठ हिन्दी को ही सरल माना जाता है, जब कि महाराष्ट्र या केरल में संस्कृतनिष्ठ भाषा ज्यादा आसानी से समझी जाती है। आमतौर पर जटिलता शब्दों की नहीं होती; क्योंकि शब्दकोष और अभ्यास के द्वारा शब्दों पर अधिकार प्राप्त किया जा सकता है। भाषा में दुरूहपन कठिन शैली और गलत वाक्य-विन्यास से आता है। हर भाषा की अपनी प्रकृति और वाक्य-विन्यास होता है। जिस समय, हम हिन्दी लिखते हुए अंग्रेजी वाक्य-विन्यास का इस्तेमाल करते हैं तो एक बहुत ही लम्बे वाक्य के मध्य अर्थ और भाव कहीं रास्ते में ही खो जाते हैं और पाठक को मजबूर होकर उस फ़िकरे को दोबारा पढ़ना पड़ता है। प्रवाह और पठनीयता ही सरल भाषा को उजागर करते हैं। उसमें बहते पानी की रवानी होनी चाहिए। यही हमारे नए स्तम्भ "भाषा बहता नीर" की बुनियाद है। पाठकों से आग्रह है कि यदि उनकी नज़रों से कोई ऐसी मिसाल गुज़रे जो ऊपर लिखे मापदण्ड पर पूरी उतरती हो तो वह हमें लिख भेजें। हम उसे साभार इस स्तंभ में छापने की कोशिश करेंगे।

शुरुआत के तौर पर हम अपनी ओर से सरल भाषा का एक नमूना लेकर हाजिर हुए हैं। यह अंश "राष्ट्रभाषा संदेश" में छपे 'उपेन्द्र नाथ अश्क' के साथ एक इन्टरव्यू में से लिया गया है।

मैं साहित्यकार कैसे बना

मैंने कानून पास किया था कि मैं सब-जजी के कम्पटीशन में बैठूंगा, लेकिन इस बीच मेरी पहली पत्नी लम्बी तकलीफ़देह बीमारी के बाद चली गयी। इन दो वर्षों में ज़िन्दगी को मैंने कुछ इतने क़रीब से देखा कि मेरा दृष्टिकोण बदल गया। जब मैं एडवोकेट बन कर कचहरी गया तो दो-तीन मुकदमों के बाद ही मुझे लगा कि क़ानूनी तौर पर वकील का पेशा भी सही क्यों न हो, नैतिक रूप से निहायत ग़लत पेशा है। मैं जानता हूं मेरे मुवक्किल ने कत्ल किया है या डाका डाला है या ग़बन किया है, लेकिन वकील के नाते मैं उसका केस लेने से इंकार नहीं कर सकता और मेरा कर्त्तव्य है कि मैं उसे बरी कराऊं। उसे क़ानून के पंजों से बचाता हूं तो सफल वकील कहलाता हूं वरना असफल। जो एडवोकेट जितने ही ज्यादा हत्यारों को कानून के शिकंजे से बचाता है, वह उतना ही बड़ा फ़ौजदारी का वकील कहलाता है। .... और मुझे लगा है कि नैतिक रूप से मैं उस अपराध का भागीदार नहीं हूं, सो मैंने वह पेशा तज दिया और ज़िन्दगी साहित्य को अर्पण कर दी।....

—उपेन्द्र नाथ 'अश्क'

राज्यों में उनकी प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग

(1) केरल

1. सामान्य

मलयालम् को राज्य की राजभाषा के रूप में क्रमिक रूप से अपनाने के उपायों के बारे में रिपोर्ट देने के लिये केरल सरकार ने, अगस्त 1957 में एक समिति नियुक्त की थी। इस समिति ने अगस्त 1958 में अपनी रिपोर्ट दी जिसकी सिफारिशें इस प्रकार थी:—

1. आरंभ में, प्रशासनिक और तकनीकी शब्दावलियां तैयार की जानी चाहियें। लेकिन, चूंकि ऐसी शब्दावलियों पर निर्भर रहने से अंग्रेजी का मार्ग ही प्रशस्त होगा, अतः ऐसे प्रयास किये जाने चाहियें जिससे शासकीय मामलों को मूलतः मलयालम में निपटाया जाए।

2. मलयालम अपनाने की घोषित नीति को, चरणबद्ध कार्यक्रम के अनुसार सात वर्ष की अवधि के अंदर लागू किया जाना चाहियें।

पहली अवस्था में की जाने वाली कार्रवाइयां:—

1. जिन विभागों का आम लोगों से सीधा संबंध है, उन्हें आदेश दिये जाने चाहियें कि वे अपना काम काज मलयालम में करना तत्काल आरम्भ कर दें।

2. भविष्य में सरकारी सेवा में भर्ती किये जाने वाले कर्मचारियों और परिवीक्षाधीन कर्मचारियों को मलयालम में परीक्षा देने को कहा जाना चाहियें।

3. अंग्रेजी टाइपिस्टों को मलयालम टाइपराइटिंग का प्रशिक्षण देने के संबंध में कार्रवाई की जानी चाहियें।

4. विभिन्न विभागों में प्रयुक्त संहिताओं, नियम पुस्तकों आदि के अनुवाद के लिये अलग विभाग की स्थापना की जानी चाहियें।

5. सरकारी अधिसूचनाएं आदि मलयालम में जारी की जानी चाहियें।

दूसरी अवस्था का संबंध ऐसे विभागों से है, जिन्हें तकनीकी स्वरूप के मामलों पर कार्रवाई करनी होती है:—

लोक निर्माण विभाग, शिक्षा विभाग, स्वास्थ्य विभाग आदि को अंग्रेजी के स्थान पर मलयालम का प्रयोग करने के लिये एक वर्ष की अवधि दी जानी चाहियें।

जहां तक न्यायालय और विधान मंडलों में प्रयोग की जाने वाली भाषा का संबंध है, उनमें तब तक पहले प्रयोग में लाई जाने वाली भाषा का ही प्रयोग किया जाता रहेगा, जब तक सारे राष्ट्र पर लागू होने वाली सामान्य विधि शब्दावली स्वीकार नहीं कर ली जाती। लेकिन, अधिनियमितियों का मलयालम पाठ तैयार करना वांछनीय होगा। महाविद्यालयों और अन्य उच्च शिक्षा संस्थाओं में शिक्षा के माध्यम के रूप में अंग्रेजी के स्थान पर मलयालम को अपनाने के लिए एक समयबद्ध कार्यक्रम तैयार किया जाना चाहियें।

अन्य सिफारिशें मलयालम के अच्छे टाइपराइटरों का डिजाइन तैयार करने और आशुलिपि की अच्छी प्रणाली का विकास करने से सम्बन्धित हैं। सरकार ने इस समिति द्वारा की गई सिफारिशों को सामान्यतः स्वीकार कर लिया है।

1.02. राजभाषा के रूप में मलयालम को लागू करने से संबंधित कार्य की देखभाल के लिये वर्ष 1965 में एक विशेष अधिकारी नियुक्त किया गया था। विशेष अधिकारी द्वारा प्रस्तुत किये गये प्रस्तावों के पहले सेट को स्वीकार करते हुए, विभिन्न विभागों में राजभाषा के रूप में मलयालम को अपनाने के बारे में अक्तूबर 1965 में आदेश जारी किये गये थे।

1.03. वर्ष 1969 में केरल राजभाषा (विधायी) अधिनियम पास किया गया था जिसके द्वारा केरल विधान मंडल को यह प्राधिकार दिया गया था कि वह, मलयालम में अधिनियमितियां बना सकता है। वर्ष 1973 में, इस अधिनियम का संशोधन किया गया और केरल राजभाषा अधिनियम लागू किया गया।

1.04 वर्ष 1971 में, लोक-विभाग में अलग 'राजभाषा अनुभाग' बनाये जाने तक, इस योजना के कार्यान्वियन की जिम्मेदारी लोक (विविध) विभाग की थी। राजभाषा अनुभाग, सामान्य प्रशासन विभाग का अंग बना रहा। इस समय, राजभाषा विभाग के स्टाफ की स्थिति इस प्रकार है:—

विशेष सचिव (राजभाषा)

विशेष अधिकारी (राजभाषा)

उप-सचिव (विधि विभाग से प्रतिनियुक्ति पर)

भाषा विशेषज्ञ

तीन अनुवादक-(एक जन संपर्क विभाग से, एक सचिवालय के विधि विभाग से और एक प्रशासन सचिवालय से) एक अनुभाग अधिकारी।

चार सहायक।

दो गोपनीय सहायक—(एक मलयालम के लिये और दूसरा अंग्रेजी के लिये)

दो मलयालम टाइपिस्ट।

चार चपरासी।

1.05. मलयालम को राजभाषा के रूप में शीघ्र अपनाने के लिये, सरकार ने, वर्ष 1978 में पंचवर्षीय कार्यक्रम अपनाया है। इस कार्यक्रम के अनुसार, वर्ष 1981-82 के अन्त तक सचिवालय सहित प्रशासन के सभी स्तरों पर मलयालम राजभाषा हो जाएगी।

II. विभाग के क्रियाकलाप

2.01. सचिवालय के अन्य विभागों के लिये आदर्श प्रस्तुत करने की दृष्टि से, भारत सरकार और अन्य राज्य सरकारों के साथ किये जाने वाले पत्राचार के अलावा, राजभाषा विभाग का समस्त कार्य, मलयालम में किया जाता है।

2.02. सरकार के विभिन्न विभागों द्वारा प्रयोग में लाये जाने वाले फार्मों, नियम-पुस्तकों, रजिस्टरों और संहिताओं का अनुवाद राजभाषा विभाग द्वारा किया जाता है। जो सामग्री अनूदित और प्रकाशित हो चुकी है उसमें जिला कार्यालय नियम पुस्तक, केरल लेखा संहिता खण्ड-I और खण्ड-II, कार्यालय कार्यविधि नियम-पुस्तक और निम्न तथा मध्यम आय वर्ग की आवास योजना से संबंधित नियमावलियां शामिल हैं।

2.03. मलयालम को राजभाषा के रूप में लागू करने में सहायता के लिये, इस विभाग ने प्रशासन शब्दावली, प्रशासन शब्दावली संदर्शिका (वर्ण शब्द सहाय) राजभाषा संबंधी वाक्यांशों की संदर्शिका (वर्ण भाषा प्रयोग पद्धति) और मलयालम को राजभाषा के रूप में अपनाने के सम्बन्ध में सरकार द्वारा जुलाई, 1975 तक जारी किये गये महत्वपूर्ण आदेशों और परिपत्रों का एक पैम्फलेट प्रकाशित किया है। इस विभाग के अनुरोध पर, राजभाषा संस्थान त्रिवेन्द्रम ने 'वर्ण शब्दावली' नामक शब्दावली भी प्रकाशित की है।

2.04. यह विभाग, अप्रैल, 1978 से 'वर्ण भाषा' शीर्षक से एक मासिक पत्रिका नियमित रूप से प्रकाशित कर रहा है। यह पत्रिका, अंग्रेजी के स्थान पर मलयालम को राजभाषा के रूप में शीघ्र अपनाने में एक प्रभावी साधन सिद्ध हुई है। इस पत्रिका की पांच हजार प्रतियां छापी जाती हैं और सरकारी विभागों के अधिकारियों में निःशुल्क वितरित की जाती हैं। अन्य ग्राहकों से 6/- रुपये वार्षिक चंदा लिया जाता है।

2.05. सरकार ने, 1 अगस्त, 1979 से 31 जुलाई, 1979 के एक वर्ष को 'राजभाषा वर्ष' के रूप में मनाया है। यह अवधि 31-12-79 तक बढ़ाई गई। मलयालम को लागू करने के लिये उचित वातावरण तैयार करने की दृष्टि से, सभी जिलों में जिला स्तर की विचार गोष्ठियां आयोजित की गई हैं, जिनमें राजभाषा कार्यान्वयन से सम्बन्धित अधिकारियों, विधायकों और अन्य सम्बद्ध लोगों ने भाग लिया।

2.06. मलयालम को राजभाषा के रूप में अपनाने के लिये किये जाने वाले उपायों पर शीघ्र कार्रवाई करने के निमित्त, निम्नलिखित सदस्यों की एक समिति गठित की गई है:—

1.	मुख्य मंत्री (अध्यक्ष)	
2.	मुख्य सचिव	
3.	सरकार के विशेष सचिव (सामान्य प्रशासन विभाग)	सदस्य
4.	सरकार के सचिव, वित्त	सदस्य
5.	अध्यक्ष, राजभाषा (विधायी) आयोग।	सदस्य
6.	अपर सचिव (राजभाषा)	सदस्य
7.	जन-संपर्क निदेशक	सदस्य
8.	डा. के. भास्करन नायर, सेवा-निवृत्त निदेशक, महाविद्यालयी शिक्षा, कन्नानूर।	सदस्य
9.	श्री एन. वी. कृष्ण वारियर, त्रिवेन्द्रम।	सदस्य
10.	श्री डी. सी. किजाक्केमुरी, कोट्टायम।	सदस्य
11.	उप-सचिव (राजभाषा) सदस्य सचिव	सदस्य

2.07. इस समिति की एक उप समिति भी गठित की गई है। अपर सचिव (राजभाषा), उप-सचिव राजभाषा, निदेशक, राज-भाषा संस्थान और सर्वश्री एन. वी. कृष्ण वारियर और डी. सी. किजाक्केमुरी इस उप-समिति के सदस्य हैं। इस योजना के कार्यान्वयन के संबंध में अपनाये जाने वाले उपायों की समीक्षा करने के लिये इस उप-समिति की बैठकें काफी हद तक नियमित रूप से होती रहती हैं।

2.08. नये 'की-बोर्ड' वाले मलयालम के नये टाइपराइटरों का प्रयोग करने के सम्बन्ध में टाइपिस्टों को प्रशिक्षण देने के लिये एक योजना तैयार की गई है। इस योजना के अधीन दो पाठ्यक्रम चलाये जाते हैं—एक बैच 13 दिन का और दूसरा 30 दिन का है। यह प्रशिक्षण, अंग्रेजी के टाइपिस्टों को, नये की-बोर्ड वाले मलयालम के टाइपराइटरों के इस्तेमाल के लिये दिया जा रहा है। मलयालम के नये टाइपराइटर केवल उन्हीं कार्यालयों को सप्लाई किये जा रहे हैं, जिनके पास ऐसे टाइपिस्ट हों, जिन्होंने उपर्युक्त योजना के अधीन प्रशिक्षण प्राप्त कर लिया है। अब तक विभिन्न सरकारी कार्यालयों को लगभग 1400 मलयालम टाइपराइटरों की सप्लाई की जा चुकी है।

3. मलयालम को राजभाषा के रूप में अपनाने के सम्बन्ध में हुई प्रगति

3.01. भले ही मलयालम को राजभाषा के रूप में अपनाने के सम्बन्ध में हुई प्रगति धीमी है, फिर भी तालुक स्तर के

अधिकारियों ने उत्साह दिखाया है और सरकार द्वारा अपनाये गये कार्यक्रमों के परिणामतः, तालुक स्तर के कार्यालयों में मलयालम का प्रयोग उत्तरोत्तर बढ़ा है। लेकिन इस प्रकार के परिवर्तन के विरुद्ध अभी भी मनोवैज्ञानिक प्रतिरोध है, जो टाइपिस्ट तथा टाइपराइटरों के उपलब्ध न होने, कर्मचारियों की अपर्याप्तता, प्रशिक्षण की कमी और ऐसी ही अन्य बातों के बारे में शिकायतों के रूप में व्यक्त किया जा रहा है। सरकार, सभी स्तरों पर मलयालम का प्रयोग किये जाने के लिये अधिकारियों को प्रोत्साहित कर रही है और सचिवालय, विभाग प्रमुखों के कार्यालयों और जिला कार्यालयों में मलायमलय का प्रयोग किया जा रहा है, यद्यपि यह पर्याप्त मात्रा में नहीं है।

3.02. सरकार ने ऐसे आदेश जारी किये हैं, जिनमें मलयालम को राजभाषा के रूप में अपनाने के कार्यान्वयन में, प्रत्येक जिले में हुई प्रगति की समीक्षा करने का कार्य, एक-एक मंत्री को सौंपा गया है। आशा है कि यह व्यवस्था, इस कार्यक्रम के कार्यान्वयन की गति बढ़ाने में सहायक होगी।

प्रस्तोता—विशेष सचिव,
केरल सरकार

(2) बिहार

राजभाषा एवं सम्पर्क भाषा (Official Language & Link Language) हिन्दी के विकास, प्रसार एवं उन्नयन की दिशा में बिहार का विशिष्ट योगदान रहा है। आज़ादी मिलने के बाद जिन हिन्दीभाषी राज्यों ने हिन्दी को अंगीकार किया, उनमें बिहार राज्य अग्रणी था। यहां 4 जून, 1948 को ही देवनागरी लिपि में लिखित हिन्दी को राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित किया गया। सरकारी परिपत्र जारी करके, सभी सरकारी सेवाओं में नियुक्ति हेतु हिन्दी का ज्ञान अनिवार्य कर दिया गया। अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी का प्रयोग धीरे-धीरे शुरू कर दिया गया तथा 28 नवम्बर, 1960 ई. से सारे राज्य में, समस्त शासकीय प्रयोजनों के लिए, लागू भी कर दिया गया। सन् 1971 ई. में एक अधिसूचना के जरिए अंग्रेजी के व्यवहार में दी गई छूट को समाप्त कर, हिन्दी के प्रयोग को अनिवार्य बना दिया गया।

राजकाज में हिन्दी को लागू करने के लिए जो विविध कार्यक्रम अपनाए गए उनमें सर्वाधिक जटिल किन्तु अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य अंग्रेजी में उपलब्ध राजकीय साहित्य का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत करना था। अब तक लगभग 75 कोड मैनुअल, 7000 फार्म, 1000 नियम-अधिनियम हिन्दी में अनुदित हो चुके हैं। 'राजकीय प्रशासन शब्दावली', पद और पदाधिकारी, लोक निर्माण शब्दावली, मौसम शब्दावली, चारित्री शब्दावली, राजकीय पारिभाषिक शब्दार्णव (दो खण्ड) नामक अनेक शब्द-कोश का प्रकाशन हो चुका है। ये कोश काफी लोकप्रिय भी हुए हैं।

राज्य सरकार न्याय-प्रशासन के क्षेत्र में भी हिन्दी को समुचित स्थान देने के लिए सतत प्रयत्नशील रही है। 26 जून, 1948 को ही हिन्दी बिहार के न्यायालयों की भाषा घोषित की गई। सन् 1951 ई. में एक सरकारी आदेश के जरिए राज्य की दीवानी एवं फौजदारी अदालतों में गवाहों के बयान दर्ज करने के वास्ते हिंदी का प्रयोग आवश्यक कर दिया गया। सन् 1971 में राज्य सरकार के अनुरोध पर, पटना उच्च न्यायालय में हिन्दी को निर्णयों एवं आदेशों में वैकल्पिक भाषा के रूप में स्वीकार कर लिया गया। 26 जनवरी, 1965 ई. से 'लैंग्वेज आफ एक्ट' के लागू होने पर राज्य-विधान-मंडल में पेश किए जाने वाले विधेयकों, संविधान के अधीन जारी किए जाने वाले अध्यादेशों ordinances आदि की भाषा हिन्दी हो गई। फिर भी, न्याय-प्रशासन में हिन्दी को वह स्थान प्राप्त नहीं हो सका है जो उसे सामान्य प्रशासन में प्राप्त है।

'क्रैश कार्यक्रम' के अधीन बिहार में 1973 ई. में बनी 'अनुवाद प्रशिक्षण (TranslationTraining) योजना के अधीन, अनुवाद-कला में प्रशिक्षित युवकों को नियोजन प्रदान किया गया तथा बिहार सम्बन्धी दुर्लभ एवं उपयोगी ग्रन्थों के अनुवाद के लिए पांचवीं पंचवर्षीय योजनान्तर्गत एक नई योजना चलाई गई।

राज्य सरकार के विधि के क्षेत्र में हिन्दीकरण के हेतु हिन्दी विद्यार्थी समिति गठित की गई। अंगरेजी में पारित अधिनियमों का प्राधिकृत पाठ (Authorised Text) तैयार करना और हिंदी में विधि साहित्य का विकास करना इस समिति के गठन का मुख्य प्रयोजन है। जिन नियमों, अधिनियमों, अध्यादेशों का अनुवाद पहले हो चुका है, उनका नए सिरे से परीक्षण वांछनीय है। तभी विधि एवं न्याय की दिशा में हिन्दीकरण तेजी से हो सकेगा।

सन् 1971 ई. में सरकारी स्तर पर लिए गए निर्णयानुसार लेखा संबंधी कार्य (Accounts work) में हिन्दी का प्रयोग क्रमशः करने का आदेश जारी किया गया। इस दिशा में सर्वप्रथम राजपत्रित पदाधिकारियों के वेतन बिल का फार्म द्विभाषिक रूप में (Diglot form) तैयार किया गया। नाम आदि हिंदी में परन्तु अंक अंतर्राष्ट्रीय रूप में चलाए गए। हिन्दी में लेखा-कार्य प्रभावी ढंग से निष्पादित हो रहा है। बिहार ट्रेजरी कोड का अनुवाद सम्पन्न हो चुका है। बिहार फाइनेंनसियल रूल्स, टी. ए. रूल्स आदि का अनुवाद पहले ही हो गया है।

राज्य सरकार ने बिहार के सभी विश्वविद्यालयों, स्वायत्त संस्थाओं, उपक्रमों, निकायों, बोर्डों, प्रतिष्ठानों आदि से हिन्दीकरण की दिशा में आगे बढ़ने का अनुरोध किया है और अपनी ओर से पूर्ण वित्तीय सहायता देने का आश्वासन दिया है। हिन्दीकरण देश के मानस को आमूल परिवर्तित करने वाली एक समग्र क्रांति है। जिस प्रकार बिहार सरकार ने स्वतंत्रता के प्रथम प्रभात में ही राजकाज हिन्दी में करने का संकल्प लिया था, उसी प्रकार आज भी वह अपने संकल्प को साकार करने की दिशा में पूरी निष्ठा से विकास के आलोक-पथ पर अग्रसर है। शत-प्रतिशत हिन्दीकरण में महसूस की जाने वाली दिक्कतें दूर करने के प्रयोजनार्थ सितम्बर 1977 में एक स्वतंत्र राजभाषा विभाग के गठन का निर्णय सरकारी स्तर पर लिया गया। राज्य के जिला,

अनुमंडल, प्रखंड स्तर तक हिन्दी के विकास-विस्तार कार्यक्रम को अंजाम देने के वास्ते हरेक जिला एवं अनुमंडल में राजभाषा की इकाई की स्थापना का प्रश्न विचाराधीन है। सरकार द्वारा गठित स्वतंत्र सलाहकार निकाय (Advisory Body) और हिन्दी प्रगति समिति हरेक माह, विभिन्न जिलों, अनुमंडलों, प्रखंडों के कार्यालयों में हिन्दी की प्रगति का निरीक्षण-परीक्षण करती है। भाषा सम्बन्धी नीति और कार्यक्रम को सुनियोजित ढंग से लागू करने के उद्देश्य से सितम्बर 1977 में हिन्दी दिवस के एक सप्ताह बाद भाषा का एक पृथक् राजभाषा विभाग गठित कर, भाषा-नीति-निर्धारण एवं कार्यान्वियन, कानूनी ग्रंथों एवं गजेटियर के अनुवाद, पारिभाषिक शब्दावली के संकलन, प्रकाशन, हिन्दी प्रशिक्षण एवं परीक्षा संचालन, सम्मेलन-गोष्ठी-प्रदर्शनी का आयोजन, 'राजभाषा पत्रिका' का प्रकाशन आदि चौदह कार्यों के निष्पादन का दायित्व सौंपा गया। इस दायित्व में 'राजभाषा शोध संस्थान' की स्थापना भी प्रस्तावित है, जिसे अभी तक मूर्त्त रूप नहीं दिया जा सका है। इस दिशा में सरकार यत्नशील है। इस प्रकार सितम्बर 1977 में राजभाषा विभाग पर सम्पूर्ण राज्य में कामकाज के हरेक स्तर पर हिन्दीकरण का भार सौंपा गया।

राजभाषा हिन्दी के सर्वांगीण विकास के लिए छठी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत वृहत् कार्यक्रम बनाए गए और 1979-80 के दौरान इन कार्यक्रमों पर दस लाख रु. खर्च किए गए, जिनमें बिहार के साठ वर्ष से अधिक उम्र वाले 119 विशिष्ट साहित्यकारों में प्रत्येक को एक शाल सहित 501 रु. देकर सरकार ने जून, 79 में सम्मानित किया। प्रमंडल स्तर पर राजभाषा की इकाई खोलने की स्वीकृति दी गई, जिसके लिए उप-निदेशक के सात पद अगस्त, 79 में सृजित किए गए, जिस पर राजभाषा पदाधिकारियों की प्रोन्नति का राजभाषा मंत्री, बिहार द्वारा दिसंबर, 1980 में आदेश दिया गया है।

राज्य सरकार ने भारत सरकार द्वारा मार्च, 1978 में दिल्ली में आयोजित अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन की अनुशंसाओं पर समुचित रूप से विचार कर, उन पर ठोस कार्रवाई करने का निर्णय लिया है। तदनुसार 1979 वर्ष को 'राजभाषा वर्ष' के रूप में मनाया गया और पटना में न्यायिक हिन्दी-प्रशिक्षण-संस्थान तथा प्रमंडल-स्तर पर हिन्दी टंकण एवं आशुलिपि प्रशिक्षण-केन्द्र खोलने का निर्णय लिया गया, जिसका कार्यान्वियन शीघ्र होगा।

हिन्दी के व्यापक प्रचार-प्रसार के लिए प्रमंडल स्तर पर राजभाषा विभाग की इकाई खोली जा रही है। आवश्यकतानुसार स्थान-स्थान पर प्रदर्शनी (जैसे सिंहेश्वर स्थान, सहर्षा, सोनपुर मेला, 1980) लगाकर, जनता को राजभाषा की प्रगति से अवगत कराने के उपाय किए जा रहे हैं। अब तक विभाग की ओर से दिल्ली एवं भागाबाध (धनबाद) में राजभाषा-प्रदर्शनी लगाई जा चुकी है। राजभाषा विभाग ने बिहार संबंधी महत्वपूर्ण पुस्तकों का अनुवाद और प्रकाशन कार्य भी हाथ में लिया है। इस योजनान्तर्गत 'तेंदुलकर गांधी इन चम्पारण' नामक पुस्तक का हिन्दी अनुवाद' जब गांधीजी चम्पारण आए' नाम से प्रकाशित किया जा चुका है। इस क्रम में श्री सुरेन्द्र प्रसाद सिन्हा कृत 'बिरसा भगराम' और ग्रियर्सन कृत 'बिहार पीजेंट लाइफ' के हिन्दी संस्करण शीघ्र प्रकाशित करने का प्रस्ताव है। 1980-81 योजना-वर्ष में दो शब्दकोष अंग्रेजी से हिन्दी और हिन्दी से अंग्रेजी पाकेट बुक साइज में प्रकाशित करने की योजना है। सरकार राजकीय साहित्य के हिन्दी संस्करण यथाशीघ्र उपलब्ध कराने के लिए तत्पर है। बिहार के जीवन और संस्कृति से सम्बन्धित अंगरेजी के कतिपय दुर्लभ ग्रन्थों का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित किया गया है।

सरकार विभिन्न भाषा-भाषी जनता के साथ सद्भाव और सौहार्द बनाए रखने हेतु प्रयत्नशील है। तदनुसार गत दो वर्ष पूर्व बंगला के विख्यात उपन्यासकार श्री विमल मित्र, मलयालम के वरिष्ठ साहित्यकार श्री एन. वी. कृष्ण वारियर, तमिल के प्रख्यात साहित्यकार श्री पी. वी. अखिलन तथा गत वर्ष आंध्र प्रदेश के राजभाषा आयोग के अध्यक्ष श्री बन्देमातरम् रामचन्द्र राव का बिहार-आगमन पर भव्य स्वागत-सत्कार किया गया।

भारत सरकार और हिन्दी भाषी राज्यों के साथ निरन्तर पत्राचार द्वारा और आवश्यकतानुसार, व्यक्तिगत रूप से संपर्क एवं समन्वय होता रहा है। अब भारत सरकार और हिन्दी भाषी राज्यों के साथ बिहार सरकार का पत्राचार हिन्दी में ही हो रहा है। राज्य सरकार के राजभाषा विभाग ने आदिवासियों के बीच राजभाषा और महत्वपूर्ण राजकीय साहित्य के प्रचार-प्रसार तथा हिन्दी में आदिवासी साहित्य के सृजन एवं प्रकाशन के वास्ते अलग से एक 'आदिवासी उपयोजना' भी तैयार की है। इससे आदिवासी शिक्षितों और बेरोजगारों को नियोजन भी मिल सकेगा। ●

प्रस्तोता : सुरेन्द्र प्रसाद जमुआर
दुजरा, पटना-800001

'अंग्रेजी में स्वतंत्र भारत की गाड़ी चले, इससे बड़ा दुर्भाग्य भारत का और नहीं हो सकता!'

पाँचवां अखिल भारतीय नागरी लिपि सम्मेलन : एक विवरण

पांचवा अखिल भारतीय नागरी लिपि सम्मेलन कांस्टीट्यूशन-क्लब, विट्ठल भाई पटेल हाउस, नई दिल्ली में 25, 26 तथा 27 मार्च, 1981 को हुआ। इसका उद्घाटन 25 मार्च, 1981 को सायंकाल 6.00 बजे केन्द्रीय सूचना तथा प्रसारण मंत्री श्री वसंत साठे ने किया। अपने उद्घाटन-भाषण में श्री साठे ने कहा कि नागरी लिपि संसार की सबसे अधिक वैज्ञानिक और प्रभावी लिपि है। नागरी लिपि का प्रचार लोगों के हृदय को जीतकर ही किया जा सकता है। लोगों को संपर्क-लिपि के रूप में नागरी अपनाने की आवश्यकता अनुभव होनी चाहिए तभी नागरी लोकप्रिय हो पाएगी। विनोबाजी ने ठीक ही कहा है कि नागरी लिपि "भी", नागरी लिपि "ही" नहीं, संपर्क-लिपि बन सकती है। श्री साठे ने यह इच्छा व्यक्त की कि भारतीय भाषाओं का अच्छा साहित्य नागरी लिपि में भी प्रकाशित किया जाना चाहिए तथा अधिकाधिक लोगों को संपर्क-लिपि के रूप में नागरी लिपि अपनाने की आवश्यकता अनुभव करनी चाहिए। उन्होंने यह भी आश्वासन दिया कि विभिन्न भारतीय भाषाओं का साहित्य नागरी लिपि में तैयार किए जाने पर उनके प्रकाशन में भारत-सरकार का प्रकाशन-विभाग हर प्रकार की सहायता करने को तत्पर रहेगा।

अपने स्वागत-भाषण में परिषद के अध्यक्ष डा. मलिक मोहम्मद ने बताया कि नागरी के प्रचार का कार्य हिन्दी प्रचार कार्य का अंग नहीं समझा जाना चाहिए। भारतीय भाषाओं को एक-दूसरे के निकट लाने में संपर्क-लिपि के रूप में नागरी लिपि की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। भाषा लिपि को धर्म, सम्प्रदाय अथवा जाति संबंधी विचारों से अलग रखा जाना चाहिए। लिपि विचारों को एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक पहुंचाने का साधन मात्र है। डा. मलिक ने यह भी बताया कि **नागरी लिपि परिषद द्वारा, अरबी, जापानी, फारसी, सिंहली तथा चीनी पुस्तकें प्रकाशित की गई हैं और परिषद उत्तर-भारत में नागरी लिपि के माध्यम से दक्षिण भारत की भाषाएं सिखाने की कक्षाएं** चलाने का भी विचार कर रही है। परिषद के मंत्री श्री हरिबाबू कंसल ने परिषद का परिचय देते हुए उसकी अन्य गतिविधियों पर प्रकाश डाला।

इस सम्मेलन के लिए प्रो. सिद्धेश्वर प्रसाद विनोबाजी से विशेष संदेश और उनकी शुभकामनाएं लेकर आए थे। प्रो. सिद्धेश्वर प्रसाद ने बताया कि देश के विभिन्न भागों में सदियों से नागरी लिपि किस प्रकार व्यवहार में आती रही है। सुप्रसिद्ध कवि श्री भवानीप्रसाद मिश्र ने उस समारोह में पधारे व्यक्तियों को धन्यवाद दिया।

सम्मेलन में 26 तथा 27मार्च, 1981 को तीन विचार-गोष्ठियां निम्नलिखित विषयों पर हुई:

(1) क. नागरी लिपि के प्रचार-प्रसार की दिशाएं।
  ख. नागरी लिपि की एकरूपता और उसका प्रयोग।

(2) त्रिभाषा सूत्र को कार्यान्वित करने में नागरी की भूमिका।

(3) यन्त्रों में नागरी लिपि।

प्रथम विचार-गोष्ठी 26 मार्च, 1981 को प्रातःकाल सुप्रसिद्ध विद्वान श्री गंगाशरण सिंह की अध्यक्षता में हुई और विषय- प्रवर्तन श्री भवानी प्रसाद मिश्र ने किया। दूसरी विचार-गोष्ठी की अध्यक्षता प्रो. रामलाल पारीख, सांसद ने की तथा विषय-प्रवर्तन राष्ट्रीय शैक्षिक तथा अनुसंधान परिषद के प्रो. अनिल विद्यालंकार ने किया। "यंत्रों में नागरी लिपि" से संबंधित विचार-गोष्ठी 27 मार्च, 1981 को प्रातःकाल राजभाषा विभाग के सचिव श्री जयनारायण तिवारी की अध्यक्षता में हुई। इसका विषय-प्रवर्तन श्री हरिबाबू कंसल ने किया। इन गोष्ठियों में अनेक साहित्यकारों, समाज-सेवियों तथा विश्व-विद्यालयों से पधारे विद्वानों ने भाग लिया। तीसरी विचार-गोष्ठी में कम्प्यूटर विशेषज्ञों, मशीन-निर्माताओं आदि ने भाग लिया। उस गोष्ठी में यह बात स्पष्ट रूप से उभरकर सामने आई कि कोई भी ऐसा यंत्र जिनमें रोमन-लिपि का प्रयोग होता है, नागरी लिपि के लिए भी बनाया जा सकता है।

सम्मेलन के अवसर पर एक आकर्षक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया जिसमें नागरी लिपि के विकास तथा उसके प्रयोग के संबंध में महत्वपूर्ण सामग्री प्रदर्शित की गई थी। ब्राडमा कम्पनी ने नागरी लिपि की पतालेखी मशीनें, डाक-तार-विभाग ने देवनागरी लिपि का टेलीप्रिन्टर तथा गोदरेज ने नागरी लिपि के नवीनतम टाइपराइटर प्रदर्शित किए। भुवनवाणी ट्रस्ट, साहित्य अकादमी, भारतीय ज्ञानपीठ, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति आदि द्वारा नागरी लिपि में प्रकाशित विभिन्न भारतीय भाषाओं का साहित्य प्रदर्शनी में रखा गया था। बोडो-भाषा की अनेक पाठ्य-पुस्तकें तथा अन्य साहित्य नागरी लिपि में प्रकाशित हुआ है, उन पुस्तकों को अनेक दर्शकों ने रुचि-पूर्वक देखा। हरियाणा राज्य अभिलेखागार ने नागरी लिपि के पुरानी लिखाई तथा छपाई के नमूने प्रदर्शित किए। कम्प्यूटरों में नागरी लिपि को प्रयोग में लाने के जो प्रयास हुए हैं उनके फलस्वरूप प्राप्त छपाई के विविध नमूने भी प्रदर्शनी में लगाए गए जो दर्शकों के लिए विशेष आकर्षण का केन्द्र थे। भारतीय सर्वेक्षण विभाग द्वारा नागरी लिपि में तैयार किए गए अनेक नकशे भी प्रदर्शनी में रखे गए।

सम्मेलन का समापन सुप्रसिद्ध विचारक श्री रा. दिवाकर के भाषण द्वारा हुआ।

तीन दिन के विचार-विमर्श के पश्चात् सम्मेलन में निम्नलिखित सर्वसम्मत निवेदन पारित हुआ :—

1. भारत की सभी भाषाओं का बहुत-सा समृद्ध साहित्य अभी तक अपने ही क्षेत्र में सीमित पड़ा हुआ है। वह साहित्य अन्य क्षेत्रों में भी पढ़ा जाए और उसका लाभ अन्य भाषा-भाषी लोग भी उठाएं उसके लिए हर राज्य को चाहिए कि वे अपने क्षेत्र की भाषा के अच्छे ग्रन्थों तथा रचनाओं को मूल भाषा में किन्तु नागरी लिपि में उसके हिन्दी अनुवाद सहित प्रकाशित करके उसे प्रचारित करें। इस प्रकार के साहित्य के प्रकाशन का कार्य भारत-सरकार के सूचना तथा प्रसारण मंत्रालय द्वारा भी किया जाना चाहिए।

1.2. भारत की विभिन्न भाषाओं के संपादकों से अनुरोध है कि वे अपने पत्र-पत्रिका में समाचारों अथवा संपादकीय टिप्पणी के कुछ अंश संबंधित भाषा में किन्तु नागरी लिपि में नियमित रूप से छापें, जिससे विभिन्न भाषाओं की सहलिपि के रूप में नागरी लिपि का प्रचार हो सके।

1.3 असम की बोडो साहित्य सभा बधाई की पात्र है कि उन्होंने बोडो भाषा के लिए रोमन-लिपि की मांग छोड़कर नागरी लिपि अपनाना स्वीकार किया था। भारत-सरकार तथा असम-सरकार से अनुरोध है कि बोडो भाषा के शब्दकोष तथा अन्य साहित्य नागरी लिपि में प्रकाशित कराने के लिए आवश्यक सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएं, बोडो माध्यम वाले स्कूलों के लिए बोडो भाषा की अधिकतम पाठ्य-पुस्तकें नागरी लिपि में प्रकाशित कराई जाएं तथा उन्हें स्कूलों में वितरित कराने का संतोषजनक प्रबन्ध किया जाए।

1.4 अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में डाकियों को नागरी का ज्ञान न होने की वजह से नागरी में पते लिखे पत्र या तो पहुंचते ही नहीं हैं या बहुत विलम्ब से पहुंचते हैं। ऐसे क्षेत्रों में डाकियों को कम से कम नागरी लिपि का परिज्ञान कराने से इसका निवारण हो जाएगा। जिन क्षेत्रों में नागरी का प्रचलन नहीं है वहां के डाकियों को नागरी सिखाने की व्यवस्था होनी चाहिए।

1.5 जिन जन-जातियों एवं बोलियों की अपनी कोई लिपि नहीं है, उनके लोक-गीतों आदि को नागरी लिपि में लिपिबद्ध किया जाए और उनके प्रकाशन की व्यवस्था की जाए।

2.1 नागरी लिपि की उपयोगिता, ध्वन्यात्मक उपयोगिता तथा लिपि की संपर्णता के संबंध में हिन्दी के अतिरिक्त दूसरी भाषाओं के पत्रों में ऐसे सुरूचिपर्ण लेख लिखे जाएं जिसका प्रभाव सामान्य जन पर पड़े। नागरी लिपि के लिए अन्तर्राष्ट्रीय ध्वन्यात्मक वर्णमाला (आई.पी.ए.) के समतुल्य मानक तैयार किया जाए।

3.1 शिक्षा के क्षेत्र में त्रिभाषा सूत्र को कार्यान्वित करने में नागरी लिपि की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। यदि विभिन्न भारतीय भाषाओं की शिक्षा किसी अन्य क्षेत्र के निवासियों को प्रारंभ में नागरी लिपि के माध्यम से दी जाए, तो उससे कितने व्यापक रूप में तथा आसानी से एक क्षेत्र की भाषा दूसरे क्षेत्र में सीखी-सिखाई जा सकेगी, इस पर शिक्षाविदों तथा राज्य-सरकारों को गंभीरतापूर्वक विचार करना चाहिए तथा नागरी लिपि में विभिन्न भाषाओं की प्रारंभिक पाठ्य-पुस्तकें तैयार करवाकर उनकी सहायता से त्रिभाषा सूत्र को कार्यान्वित करने का प्रयत्न करना चाहिए।

3.2 सिविल सर्विस परीक्षा में अब एक भारतीय भाषा का प्रश्न पत्र अनिवार्य कर दिया गया है, परन्तु अनेक विद्यार्थी जिनके माता-पिता अन्य प्रदेश में रह रहे हैं, अपनी मातृभाषा घर पर बोलते हुए भी उसकी लिपि से अच्छी तरह परिचित नहीं होते। उनकी सुविधा के लिए इस पर्चे के उत्तर नागरी लिपि में देने की छूट दी जानी चाहिए।

3.3 त्रिभाषी सूत्र की भावना के अनुसार यह उचित होगा कि केन्द्रीय सरकार की विभिन्न परीक्षाओं में बैठने वाले सभी व्यक्तियों के लिए हिन्दी तथा एक अन्य भारतीय भाषा का एक-एक पर्चा अनिवार्य कर दिया जाए तथा उसमें नागरी लिपि में उत्तर लिखने की छूट रहे। इससे देश के एक भाग में दूसरे भाग की भाषाएं सीखने की प्रेरणा मिलेगी तथा सभी-भाषियों के लिए सुविधाएं-असुविधाएं एक समान रहेंगी।

4.1 बैंकों के चैक तथा ड्राफ्ट आदि तैयार करने में पिन-प्वाइंट टाइपराइटरों की आवश्यकता पड़ती है। उस प्रकार के टाइपराइटर भारत में अभी तक रोमन-लिपि के बनते रहे हैं। भारत-सरकार को ऐसे टाइपराइटर नागरी में भी बनवाने के लिए शीघ्र कदम उठाने चाहिएं।

4.2 नागरी लिपि के बिजलीचालित टाइपराइटर पहले विदेशों से मंगाए जाते थे। अब उनका आयात बन्द है और भारत में अभी तक उनके बनाने की व्यवस्था नहीं हुई है। भारत-सरकार अथवा राज्य-सरकारों द्वारा प्रयत्न किया जाना चाहिए कि ऐसे टाइपराइटरों का उत्पादन बहुत शीघ्र भारत में होने लगे।

4.3 नागरी टेलीप्रिन्टर के कुंजीपटल को बार-बार नहीं बदला जाना चाहिए तथा उसमें संशोधन करते समय नागरी टेलीप्रिन्टर प्रयोग करने वाले व्यक्तियों, संवाद-समितियों तथा संगठनों से अवश्य परामर्श किया जाना चाहिए। नागरी की वर्तमान टेलीप्रिन्टर मशीनों में अक्षर स्पष्ट नहीं छपते, अक्षरों के आकार रोमन-लिपि के टेलीप्रिन्टर के समान बड़े किए जाएं ताकि उनका उपयोग अधिक हो सके। इसके साथ ही देवनागरी कुंजी-पटल को अंतिम रूप देने के लिए एक उच्च-स्तरीय समिति गठित हो जो एक वर्ष के भीतर अपने सुझाव दे दे।

4.4 भारत के अनेक प्रमुख तारघरों का परस्पर संबंध रोमन टेलीप्रिन्टरों से जुड़ा हुआ है परन्तु उनके बीच देवनागरी टेलीप्रिन्टर नहीं लगे हैं। परिणामस्वरूप वहां देवनागरी

लिपि के तारों की संख्या नहीं बढ़ पाती है। जिन-जिन क्षेत्रों में वहां बोली जाने वाली भाषाओं की लिपि देवनागरी अथवा उससे मिलती-जुलती लिपि है, वहां जिन-जिन तार घरों में रोमन-लिपि के टेलीप्रिन्टर सर्किट हैं उनमें देवनागरी टेलीप्रिन्टर सर्किट भी लगाए जाने चाहिए।

4.5 भारतीय भाषाओं के तारों को देवनागरी लिपि के माध्यम से भेजने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन देने के लिए यह उचित होगा कि भारत-सरकार कम से कम 5 वर्ष के लिए देवनागरी लिपि के तारों की दर रोमन-लिपि के तारों की दर की अपेक्षा कम कर दे।

4.6 भारत के डाक-तार विभाग ने जनता के तारों को नागरी लिपि में भिजवाने की व्यवस्था अनेक वर्षों से की हुई है। परन्तु ऐसी व्यवस्था पुलिस बेतार द्वारा भेजे जाने वाले तारों के लिए अभी तक नहीं हुई है जिसके फलस्वरूप अनेक राज्यों को जो साधारण तारघरों द्वारा जाने वाले अपने तार नागरी लिपि में भेजते हैं, पुलिस बेतार पर अपने तार रोमन में भेजने पड़ते हैं। पुलिस बेतार संगठन में भी तारों को नागरी लिपि में भेजने की व्यवस्था शीघ्र की जानी चाहिए।

4.7 भारत के जिन क्षेत्रों में नागरी लिपि की छपाई का प्रबन्ध नहीं है वहां के अधिक से अधिक नगरों में उसकी व्यवस्था की जानी चाहिए। विशेषतः पूर्वांचल के जनजातीय क्षेत्रों में मुद्रणालयों को नागरी लिपि का टाइप कुछ वर्षों के लिए रियायती दर पर दिलवाने का प्रबन्ध किया जाना चाहिए।

4.8 जिन विभागों में पते लिखने के लिए मशीनों का प्रयोग किया जाता है उनके द्वारा नागरी लिपि वाले क्षेत्रों के लिए पत्र, पत्रिकाओं आदि पर पते लिखने के लिए नागरी लिपि की मशीनें मंगाई जानी चाहिए। जिन सरकारी विभागों ने नागरी लिपि की पते लिखने की मशीनें मंगवा ली हैं उन्हें उनका अधिकाधिक उपयोग करना चाहिए।

4.9 राजभाषा-विभाग को एक ऐसी नीति अपनानी चाहिए, जिसमें यंत्रों में नागरी के प्रयोग को प्रोत्साहन मिले। प्रोत्साहन ठोस रूप में हों। इसके लिए योग्य उत्साही वैज्ञानिक राष्ट्रीय स्तर पर विविध टैक्नालाजी विकास-परियोजनाओं का संयोजन करें। परियोजनाओं के लिए पर्याप्त धनराशि की व्यवस्था हो।

4.10 कई प्राइवेट औद्योगिक संस्थान नागरी कम्प्यूटर बनाने के लिए इच्छुक हैं। राजभाषा विभाग उन्हें सरकारी अनुदान दिलाए जाने के लिए प्रयत्न करे। सार्वजनिक प्रतिष्ठान इलैक्ट्रॉनिक्स कार्पोरेशन आफ इंडिया लि., हैदराबाद, को नागरी कम्प्यूटर बनाने के लिए सरकारी निदेश दिए जाएं। निर्विवाद है कि नागरी कम्प्यूटर तैयार करने की बौद्धिक क्षमता एवं आवश्यक टैक्नालाजी उपलब्ध है, यह तथ्य राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय प्रयासों से स्पष्ट हो गया है।

प्रस्तोता : हरिबाबू कंसल

□ □ □

राजभाषा विभाग (गृह मंत्रालय) में नये निदेशक की नियुक्ति

राजभाषा विभाग के भूतपूर्व उपसचिव श्री राजकृष्ण बंसल की उद्योग मंत्रालय में निदेशक के पद पर पदोन्नति हो जाने के पश्चात् उनके स्थान पर राजभाषा विभाग में 9 सितम्बर, 1981 से श्री देवेन्द्र चरण मिश्र की निदेशक के रूप में नियुक्ति हुई है। श्री मिश्र एक अनुभवी और कुशल प्रशासक हैं। इस विभाग में आने से पूर्व वे रेल मंत्रालय में कई वरिष्ठ पदों पर कार्य कर चुके हैं। आशा है, राजभाषा विभाग में उनकी नियुक्ति से राजभाषा हिन्दी के प्रचार, प्रसार और प्रयोग के कार्य में और अधिक तीव्रता आयेगी।

बढ़ते कदम

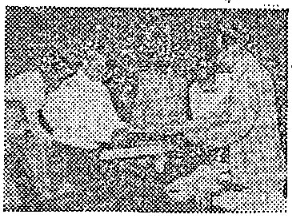

कार्मिक और प्रशासनिक सुधार विभाग में पुरस्कार वितरण

कार्मिक और प्रशासनिक सुधार विभाग अपने कार्यालय में हिन्दी के उत्तरोत्तर प्रयोग को बढ़ाने में निरंतर प्रयत्नशील है। प्रत्येक वर्ष इस विभाग के कर्मचारियों को हिन्दी में टिप्पण तथा मसौदा लेखन का व्यावहारिक प्रशिक्षण देने के लिए हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया जाता है और प्रोत्साहन योजना के अधीन हिन्दी में उत्तम टिप्पणियां तथा मसौदा लिखने वालों को नकद पुरस्कार भी दिया जाता है। यह प्रोत्साहन योजना इस विभाग में 1972 से लागू है और इस प्रकार भारत सरकार का यह पहला विभाग है जहां हिन्दी में टिप्पणियां तथा मसौदा लिखने के लिए नकद पुरस्कार योजना लागू की गई थी।

2. इस वर्ष भी इस विभाग में 6 मार्च, 1981 को हिन्दी समारोह का आयोजन किया गया। कार्मिक तथा प्रशासनिक सुधार विभाग के सचिव श्री बंद्योपाध्याय ने कर्मचारियों से अनुरोध किया कि वे सरकारी काम-काज में हिन्दी का प्रयोग करने में रुचि लें। उन्होंने इस बात की भी सराहना की कि इस कार्यशाला में ऐसे कर्मचारियों ने भी भाग लिया है जिनकी मातृभाषा हिन्दी के अलावा तमिल, कन्नड़, मलयालम, सिन्धी तथा पंजाबी आदि है।

इस अवसर पर कार्यशाला के प्रशिक्षणार्थियों को प्रमाण-पत्र दिए गए। साथ ही विभाग के तीन कर्मचारियों को क्रमशः 250 रुपये, 150 रुपये और 75 रुपये के प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय पुरस्कार भी प्रदान किए गए। कुछ अधिकारियों को हिन्दी में किए गए उनके श्रेष्ठ कार्य के लिए प्रशंसा पत्र भी दिए गए।

डा० राम मनोहर लोहिया अस्पताल, नई दिल्ली

डा. राम मनोहर लोहिया अस्पताल में हिन्दी अनुभाग की स्थापना 31 अगस्त 1978 को हुई थी। इसके पहले दिनांक 4-7-1978 को अस्पताल को नियम 10(4) के अंतर्गत अधिसूचित किया जा चुका था। उस समय केवल एक-दो कर्मचारी ही हिन्दी में टिप्पणी एवं प्रारूप लिखते थे और कुछेक हिन्दी पत्रों के जवाब ही हिन्दी में भेजे जाते थे। शुरू में ही एक खास बात यह देखने में आई कि यहां के अधिकांश अधिकारी और कर्मचारी हिन्दी जानते हैं; हिन्दी अच्छी तरह लिख-पढ़ भी सकते हैं; और कार्यालय का काम हिन्दी में करने के काबिल हैं। फिर भी संकोच, झिझक, हीन-भावना या अभ्यास न होने की वजह से वे हिन्दी में काम नहीं करते थे।

अस्पताल की विभागीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्यों और खासतौर से चिकित्सा अधीक्षक डा. पुलिन बिहारी मजूमदार तथा मुख्य प्रशासनिक अधिकारी श्री अ. स. देशपांडे की अभिरुचि, सहयोग और निर्देशन में इस हिन्दी कार्यशाला के आयोजन को मूर्तरूप दिया जा सका।

7 फरवरी, 1981 को कार्यशाला का उद्घाटन श्री कृपानारायण सचिव, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय द्वारा किया गया।

दिनांक 20-3-81 को कार्यशाला का समापन समारोह संपन्न हुआ। इसमें मुख्य अतिथि के रूप में स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण राज्य मंत्री श्री नीहार रंजन लस्कर पधारे थे। उनके अतिरिक्त स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, स्वास्थ्य सेवा महानिदेशालय, राजभाषा विभाग (गृह मंत्रालय), परमाणु ऊर्जा विभाग, लेडी हार्डिंग मेडिकल कालेज, राष्ट्रीय मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम विभाग तथा कर्मचारी राज्य बीमा निगम आदि के अनेक अधिकारी भी उपस्थित थे। विशाल सेमिनार हाल अधिकारियों/कर्मचारियों और अतिथियों से खचाखच भरा हुआ था। श्री विजय सिन्हा, उप निदेशक, राजभाषा विभाग एवं श्री राजमणि तिवारी, वरिष्ठ अनुसंधान अधिकारी एवं संपादक राजभाषा भारती ने राजभाषा विभाग की ओर से इसमें भाग लिया।

डा. पुलिन बिहारी मजूमदार, चिकित्सा अधीक्षक ने मंत्री महोदय का स्वागत करते हुए देश के लिए की गई उनकी सेवाओं का संक्षिप्त विवरण भी दिया। हिन्दी अधिकारी ने कार्यशाला की रिपोर्ट प्रस्तुत की। तत्पश्चात् कार्यशाला में भाग ले रहे कर्मचारियों के प्रतिनिधि श्री वेद प्रकाश कौशिक ने कर्मचारियों की ओर से अपनी कृतज्ञता-रिपोर्ट प्रस्तुत की। उन्होंने कार्यालय का काम हिन्दी में बढ़ाने के संदर्भ को लेकर कर्मचारियों की निम्नांकित मांगों को भी सामने रखा :—

1. हिन्दी में सहायक पुस्तकें, हिन्दी-अंग्रेजी शब्दकोश, मूल नियम तथा पूरक नियम एवं अन्य केन्द्रीय नागरिक सेवा नियमों के हिन्दी रूपान्तर की उपलब्धि कराई जाय।
2. अस्पताल के हर अनुभाग में एक-एक हिन्दी टंकक का पद संस्वीकृत किया जाय।
3. अस्पताल में राजभाषा संबंधी सरकारी आदेशों का पूर्ण रूप से पालन कराया जाय और अधिकारीगण हिन्दी में काम करके आदर्श प्रस्तुत करें, ताकि कर्मचारियों को भी प्रेरणा मिले।
4. अस्पताल के पुस्तकालय में सरल हिन्दी में लिखी कहानियों, उपन्यास, नाटक और कविताओं आदि की

पुस्तकें तथा हिन्दी-पत्र-पत्रिकाएं भी मंगाई जायं, ताकि आम कर्मचारी उन्हें पढ़कर बौद्धिक व मानसिक मनोरंजन के साथ-साथ अपना हिन्दी का सामान्य ज्ञान भी बढ़ा सकें।

राज्य मंत्री महोदय ने कार्यशाला में भाग ले रहे कर्मचारियों को प्रमाण-पत्र प्रदान किया। कार्यशाला के 5 कर्मचारियों को उन्होंने पुरस्कृत भी किया। पुरस्कारों में हिन्दी उपन्यास, कहानियों, नाटक और कविताओं की पुस्तकें शामिल की गई थीं।

मंत्री महोदय ने अपने समापन भाषण में कर्मचारियों को उनकी संकेतित जरूरतों पर यथा-संभव सहानुभूति पूर्वक विचार करने का आश्वासन दिया। उनके भाषण का अविकल रूपान्तर यहां प्रस्तुत है।

"मुझे आज आपके इस महत्वपूर्ण कार्य में सम्मिलित होने पर प्रसन्नता है। हिन्दी हमारी राजभाषा है और इसकी प्रगति के लिये खासकर प्रशासनिक मामलों में उठाये गये प्रत्येक प्रश्न का सदैव स्वागत है। संचार की मुख्य भाषा के रूप में हम अंग्रेजी पर हमेशा निर्भर नहीं रह सकते। हम निश्चय रूप से अस्पताल में आये लोगों के साथ परस्पर बातचीत के लिए, खासकर जो इलाज के लिये अस्पतालों में आते हैं अंग्रेजी पर आश्रित नहीं रह सकते हैं। अन्ततः राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी को अंग्रेजी की जगह संचार की प्रमुख भाषा बनना है। वास्तव में इसके अलावा और कोई चारा नहीं है। हमारा देश प्रजातन्त्र है और प्रजा पर किसी बात का जरा भी दबाव डालने का प्रश्न ही नहीं उठता है। यदि हिन्दी की देश के सभी भागों में प्रगति हुई—और होनी ही चाहिए—तो यह लोगों के स्वैच्छिक आपसी सहयोग के द्वारा होनी है। यह उन लोगों पर जो हिन्दी नहीं जानते, या ठीक से नहीं जानते, अधिरोपित नहीं की जा सकती। उन्हें इसे अपनाने के लिये प्रोत्साहित किया जाना है। दूसरे जिनकी मातृभाषा हिन्दी है उन्हें अनुभव करना है कि वे उन लोगों की अपेक्षा जो दूसरी भाषा-भाषी हैं; फायदे में हैं। उन्हें राष्ट्रभाषा को सीखने के लिये दूसरों को प्रोत्साहित करना है। उनका यह प्रोत्साहन अनुनयी और रचनात्मक होना चाहिये।

हिन्दी हमारे देश के अधिकांश भागों में बोली और समझी जाती है। सारे देश में और यहां तक कि विदेशों में भी हिन्दी फिल्में दिखाई जाती हैं। हिन्दी के प्रचार के लिये सिनेमा ने महान भूमिका निभाई है। श्रीलंका, बंगलादेश, पश्चिमी एशिया और अफ्रीका के देशों में भी हिन्दी के फिल्मी गीत प्रसिद्ध हैं। हिन्दी की प्रगति के लिये आकाशवाणी ने भी प्रभावपूर्ण भूमिका अदा की है। रेडियो और टेलिविजन के माध्यम से भी हिन्दी सीखी जा सकती है। वे हिन्दी के माध्यम से लोगों को वे चीजें पेश करते हैं जिन्हें लोग चाहते हैं। वे सरल हिन्दी का प्रयोग करते हैं। भाषा की प्रगति तभी होती है जब वह नित्य घरों में आने वाली जरूरतों के मुताबिक प्रयोग की जाती रहे। यह पाठ हम रेडियो और सिनेमा से सीख सकते हैं। दूसरी बात यह है कि वे शब्द जो आम लोगों की समझ में आसानी से नहीं आते हैं उनके प्रयोग से बचना चाहिये। एक भाषा को ऊपर उठाने के लिये सबसे आसान तरीका यही है कि उसकी शब्द-रचना आसान हो। भाषाएं खासकर हिन्दी अन्य सहयोगी भाषाओं के द्वारा समृद्ध हो सकती है। यह जरूरी है कि किसी भाषा की प्रगति के लिये अति-राष्ट्रीयता की भावना से बचा जाय।

हमें सदैव यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि हर समाज में ऐसे भी लोग होते हैं, जो हो सकता है कि किसी भाषा विशेष को न जानते हों। यदि हमारा उद्देश्य सबके साथ संपर्क स्थापित करना है तो हमें उन लोगों को भी साथ लेकर चलना चाहिए।

जो लोग डा. राम मनोहर लोहिया अस्पताल में आते हैं उनमें से अधिकांश हिन्दी जानते हैं। बहुत से ऐसे लोग भी हो सकते हैं जो केवल यही भाषा जानते हैं। मुझे यह जानकर प्रसन्नता है कि इस कार्यशाला ने इस आवश्यकता की ओर ध्यान दिया है। इस संस्थान के प्रशासनिक कार्यों में राजभाषा के अधिकाधिक प्रयोग के संदर्भ में यह कदम उचित दिशा की ओर उठाया गया है। कार्यशाला में भाग लेने वाले प्रशिक्षणार्थियों को मैं बधाई देता हूं। मैं यहां के अधिकारियों को भी हार्दिक धन्यवाद देता हूं, जिन्होंने प्रशिक्षणार्थियों को प्रमाण-पत्र वितरित करने के लिये मुझे निमंत्रित किया।"

कैनरा बैंक हिन्दी की सफलता हेतु हर संभव कार्य करेगा

—श्री सी. ई. कामत

'हमें एक आम भाषा की जरूरत है और वह हिन्दी ही होगी। संभव है इसमें थोड़ा समय लगे, फिर भी वह होकर रहेगी'- ये विचार कैनरा बैंक के चेयरमैन व प्रबंध निदेशक श्री सी. ई. कामत ने 29 मई को बेंगलूर में व्यक्त किये। वे बैंक द्वारा आयोजित त्रिदिवसीय राजभाषा अधिकारियों के प्रथम सम्मेलन के समापन-समारोह के अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में बोल रहे थे।

श्री कामत ने अपने हिन्दी भाषण के दौरान बताया कि हिन्दी का प्रचार हमारे लिए नहीं बल्कि आने वाली पीढ़ी के लिए जरूरी है। वह हिन्दी की उपयोगिता समझेगी और उसे आगे बढ़ाएगी। आपने आश्वासन दिया कि **कैनरा बैंक हिन्दी के प्रयोग में सफलता पाने के लिए हर संभव कार्य करने में पीछे नहीं रहेगा।** आपके अनुसार सरल और सीधी हिन्दी का प्रयोग होना जरूरी है। सब कुछ अनूदित करना ठीक नहीं। इस प्रसंग में आपने "चैक" का उल्लेख किया। आपने कहा कि सरल होने पर ही हिन्दी आम जनता की समझ में आएगी। आपने आशा व्यक्त की कि राजभाषा अनुभाग के अधीक्षक श्री प्रभु आम जनता के लिए बोधगम्य हिन्दी को रूपायित करने में और बैंक की हिन्दी नीति को सफल बनाने में हर आवश्यक और उचित कार्य करेंगे। महा प्रबंधक श्री के. एस. राव ने अपने अध्यक्षीय भाषण के

बीच सम्मेलन में भाग लेने वाले विभिन्न क्षेत्रों से आये हुए हिन्दी अधिकारियों से कहा कि वे अपने यहां जाकर यहां जो चर्चा-परिचर्चा हुई है, उसका पालन करें। आपने आशा प्रकट की कि बैंक के हिन्दी अधिकारी मिलकर बैंक-भाषा को राजभाषा हिन्दी के सरल रूप में लाने की दिशा में हर संभव प्रयास करेंगे। उनके अनुसार इस विषय में एक 'मेथड' बनाना जरूरी है। महाप्रबन्धक ने आश्वासन दिया कि हिन्दी का हित हिन्दी अनुभाग के अधीक्षक के हाथ में सुरक्षित है।

इस अवसर पर श्रीमती जीवन लता जैन (दिल्ली), मंजू तिवारी (कलकत्ता), सर्वश्री एम. एन. आदिनारायण शेट्टी (बम्बई), गोपालकृष्णन् तथा हिन्दी शिक्षण योजना के श्री वी. आर. चन्द्रन आदि ने भी भाषण दिये।

प्रारंभ में बैंक के प्रधान कार्यालय के हिन्दी अनुभाग के अधीक्षक श्री आर. एस. एल. प्रभु ने मुख्य अतिथियों का स्वागत किया और श्री पी. सी. बलराज ने धन्यवाद-ज्ञापन किया।

बम्बई नगर हिन्दी सप्ताह समिति द्वारा हिन्दी सप्ताह समारोह का आयोजन

संविधान में 14 सितम्बर को हिन्दी को राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित किए जाने के प्रावधान को मान्यता मिली थी। इसी उपलक्ष में 14 सितम्बर को हिन्दी दिवस मनाया जाता है। हिन्दी सेवी संस्थाएं इस दिन विविध प्रकार के कार्यक्रम आयोजित करती हैं। इसी सन्दर्भ में नगर हिन्दी सप्ताह समिति, बम्बई ने हिन्दी सप्ताह समारोह का आयोजन किया। समारोह का उद्घाटन महाराष्ट्र के राज्यपाल माननीय श्री ओमप्रकाश मेहरा ने किया। सप्ताह भर के कार्यक्रम में अनेक विद्वानों, विचारकों, प्रशासकों एवं उद्योगपतियों ने भाग लिया जिनमें डा. ए. यू. मेमन (महापौर, बम्बई), श्री सतीश चतुर्वेदी (सांस्कृतिक राज मंत्री, महाराष्ट्र), श्री जयनारायण तिवारी (सचिव, राजभाषा विभाग एवं भारत सरकार के हिन्दी सलाहकार), श्री कांतिलाल जोशी, श्री सत्यकाम विद्यालंकार, श्री गिरधारी लाल चांडक, श्री गुलाबदास ब्रोकर, श्री के. जी. सोमैया, श्री अभयकुमार कासलीवाल, श्री सोहन शर्मा इत्यादि के नाम प्रमुख हैं। इस आयोजन की व्यवस्था श्री शांतिलाल सोमैया, श्री हरिशंकर, श्री गिरिजाशंकर त्रिवेदी, प्रो. अनन्तराम त्रिपाठी इत्यादि विद्वानों ने की थी। समारोह के दौरान हिन्दी अध्यापक सम्मेलन, राष्ट्रभाषा सम्मेलन, राजभाषा सम्मेलन, पत्रकार सम्मेलन, नागरी लिपि सम्मेलन, चित्रपट सम्मेलन आदि के आयोजन किए गए थे।

राजभाषा सम्मेलन

समारोह के चौथे दिन, अर्थात् 17 सितम्बर, 1981 को राजभाषा सम्मेलन का आयोजन किया गया था जिसकी अध्यक्षता राजभाषा विभाग के सचिव एवं भारत सरकार के हिन्दी सलाहकार श्री जयनारायण तिवारी ने की थी। विषय का प्रतिपादन राजभाषा विभाग के वरिष्ठ अनुसंधान अधिकारी एवं संपादक राजमणि तिवारी ने किया था। विषय प्रतिपादन के अन्तर्गत राजभाषा हिन्दी की सांविधानिक और कानूनी स्थिति, राजभाषा नियम और राजभाषा विभाग द्वारा समय-समय पर जारी किए गए प्रमुख आदेशों की विस्तृत व्याख्या की गई। इसके अतिरिक्त राजभाषा विभाग में उपलब्ध प्रगति के आंकड़ों के आधार पर राजभाषा हिन्दी के प्रयोग की जानकारी भी दी गई। इसके अतिरिक्त राजभाषा विभाग द्वारा स्थापित की गई विभिन्न समितियों तथा अन्य महत्वपूर्ण कार्यों पर भी प्रकाश डाला गया।

इस सम्मेलन के अध्यक्ष राजभाषा विभाग के सचिव श्री जयनारायण तिवारी ने अपने व्याख्यान में अत्यंत विस्तार से राजभाषा नीति और केन्द्र तथा राज्यों के भाषायी सम्बन्ध का विवेचन किया। उन्होंने इस बात को विशेष रूप से प्रतिपादित किया कि हमारे बहुभाषी देश में केवल अंग्रेजी और हिन्दी के बीच स्पर्धा नहीं है, बल्कि यह स्पर्धा सारी भारतीय भाषाओं और अंग्रेजी के बीच है। अतः अंग्रेजी को हटाने के लिए यह अत्यावश्यक है कि सभी राज्यों में उनकी क्षेत्रीय भाषाओं का प्रयोग किया जाए और केन्द्र में राजभाषा हिन्दी का प्रयोग बढ़ाया जाए। इस प्रकार राज्यों से अंग्रेजी का प्रयोग हट जाने से स्वतः केन्द्र तथा राज्यों के बीच सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी का व्यवहार होने लगेगा। श्री तिवारी ने आगे कहा कि जहां तक राजभाषा के रूप में हिन्दी की प्रगति का सम्बन्ध है, राजभाषा अधिनियम में तो केवल हिन्दी की बात कही गई है लेकिन हिन्दी के साथ अन्य भाषाओं का प्रयोग भी बढ़ाया जाना चाहिए। सारे भारत के लोगों के लिए अंग्रेजी की बजाय हिन्दी सीखना आसान है किन्तु यदि प्रदेशों में अंग्रेजी का व्यवहार होता रहा तो हिन्दी नहीं आएगी। अभी तो हिन्दी प्रदेशों में भी हिन्दी का अच्छा प्रयोग नहीं हो रहा है। ऐसी स्थिति में जब तक हम व्यावहारिक निर्णय नहीं लेंगे, तब तक सफलता नहीं मिलेगी।

अभी तक आई. ए. एस. अंग्रेजी पढ़कर आते थे, परन्तु इस वर्ष से हिन्दी के माध्यम से परीक्षा देकर भी कुछ लोग आए हैं। अंग्रेजों के जाने के समय केवल दो तीन प्रतिशत लोग अंग्रेजी जानते थे। आज भी वही स्थिति है, परन्तु वे महत्वपूर्ण पदों पर हैं जो हिन्दी को नहीं चाहते। अतः हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने में कठिनाई हो रही है।

हमारे देश में लोकतंत्र प्रचलित है, यह लोकतंत्र तब तक अधूरा है, जब तक हम अपना शासन कार्य अपनी भाषा में नहीं करते। राजभाषा के रूप में हिन्दी को लागू करते हुए हमें यह ध्यान भी रखना जरूरी है कि अहिन्दी-भाषियों को नाराज न किया जाए। **विश्व तमिल सम्मेलन, मदुरई में हम गए थे, वहां विश्व के अन्य देशों से भी लोग आए थे और तमिल में बोले थे किन्तु जब कुछ भारतीय वक्ता अंग्रेजी में बोलने लगे तो उनका विरोध किया गया। श्री लल्लन प्रसाद व्यास अभी श्याम गए थे। वहां उनसे एक व्यक्ति ने कहा कि हम अपनी मातृ भाषा में परिचय पत्र देंगे, अंग्रेजी में नहीं। श्याम में नोट के लिए धन पत्र प्रचलित** है और कार के लिए रथयंत्र। श्याम में कभी अंग्रेजी नहीं रही अतः वहां संस्कृत के शब्द प्रचलित हैं। अपने कामकाज में हिन्दी का प्रयोग करने में कोई संकोच नहीं करना चाहिए।

रही शब्दों की बात, शब्द तो प्रयोग से आएंगे। विदेशी भाषा के कुछ शब्द हिन्दी में रच-पच गए हैं, उन्हें अपनाने में कोई संकोच नहीं होना चाहिए। शब्दों के लिए पुस्तकों की प्रतीक्षा मत कीजिए, कार्य शुरू कीजिए। भारत में पहले भी शिक्षा दी जाती थी, क्या उसका माध्यम अंग्रेजी था? सम्पर्क भाषा तो भारत में सदैव रही है। रामेश्वरम तथा बद्रीनाथ जाने वालों को कभी भी भाषा की कठिनाई नहीं रही। अतः आज भी सारे देश के लिए एक सम्पर्क भाषा बनाने के लिए पूरा प्रयास किया जाना चाहिए।

भारतीय रिजर्व बैंक राजभाषा शील्ड, 1981

भारतीय रिजर्व बैंक ने कैनरा बैंक को हिन्दी भाषी क्षेत्र में वर्ष 1980 में राजभाषा हिन्दी के सर्वाधिक कार्यान्वयन के लिए 'प्रथम' घोषित किया है। दिनांक 12 अगस्त, 1981 को बम्बई में भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा आयोजित पुरस्कार वितरण समारोह में विजयी कैनरा बैंक को भारतीय रिजर्व बैंक के गवर्नर श्री आई. जी. पटेल ने प्रथम पुरस्कार स्वरूप 'भारतीय रिजर्व बैंक राजभाषा शील्ड' प्रदान की।

उल्लेखनीय है कि यह बैंक नितान्त अहिन्दी भाषी क्षेत्र कर्नाटक' से है जिसने सरकार की राजभाषा नीति के अनुसार हिन्दी भाषी क्षेत्र में राजभाषा हिन्दी में सर्वाधिक कार्य करने का श्रेय अर्जित किया है।

पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो में हिंदी की प्रगति

भारत जैसे विशाल देश में जहां आदिम, मध्यकालीन और आधुनिक तीनों प्रकार की सामाजिक और सांस्कृतिक स्थितियां मौजूद हों वहां हर व्यक्ति का अपने में बहुभाषी होना स्वाभाविक है। वह गुरुजनों से अपनी ग्रामीण बोली में, पढ़े-लिखों से प्रादेशिक भाषा में, और बहु भाषा-भाषी औद्योगिक नगरों तथा उनके बाजारों में काम चलाऊ हिन्दी भाषा में तथा दफ्तरों में अंग्रेजी भाषा का प्रयोग करता है। आवागमन के साधनों और औद्योगिक नगरों के विकास के साथ-साथ प्रायः सभी बड़े नगरों में जहां देश के सभी हिस्सों से लोग आये हैं हिन्दी दैनिक व्यवहार की भाषा बन गई है। वास्तव में हिन्दी का जन्म ही संपर्क भाषा के रूप में हुआ था। मध्यकालीन संतों के द्वारा देश के एक कोने से दूसरे कोने तक किये जाने वाले सामाजिक सुधार के कार्य तथा मुगलों-पठानों के आगमन के बाद आम जनता में संपर्क के लिए जो भाषा पैदा हुई वही आगे चलकर देवनागरी लिपि में लिखी जाने पर हिन्दी और फारसी लिपि में लिखी जाने पर उर्दू कहलाई। बहरहाल जो भी हो अंग्रेजी के साथ-साथ हमारे संविधान के अनुसार हिन्दी केन्द्र सरकार के काम-काज की भाषा है।

जहां तक सरकार की राजभाषा नीति और उसके अनुपालन का प्रश्न है इस संबंध में इस दफ्तर में हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने के लिए पूरी कोशिश की जा रही है। अभी पिछले दिनों पत्र-पत्रिकाओं में हिन्दी की सामग्री भी प्रकाशित करने के लिए तथा हिन्दी सम्बन्धी अन्य कार्यों के लिए एक हिन्दी सम्पादक, एक वरिष्ठ अनुवादक और एक हिन्दी टाइपिस्ट की नियुक्ति की गई है। इसके अलावा इस दफ्तर में एक हिन्दी अनुवादक पहले से ही मौजूद है। चण्डीगढ़, हैदराबाद, कलकत्ता और शिमला स्थित हमारी यूनिटों के लिए भी एक-एक हिन्दी अनुवादक और टाइपिस्ट की व्यवस्था की जा रही है।

गृह मंत्रालय के आदेश के अनुसार, इस दफ्तर में सहायक निदेशक (प्रशासन) की अध्यक्षता में एक हिन्दी कार्यान्वयन समिति गठित की गई है। यह समिति समय-समय पर जारी आदेशों के कार्यान्वयन के संबंध में अपने सुझाव देती है और हिन्दी कार्य की प्रगति की समीक्षा करती है। अब तक सभी नामपट हिन्दी-अंग्रेजी में द्विभाषिक रूप में बनवा लिए गये हैं। सभी मोहरे द्विभाषिक रूप में बनवाकर सभी अधिकारियों एवं अनुभागों को वितरित कर दी गई हैं। हिन्दी में प्राप्त सभी पत्रों के उत्तर हिन्दी में दिए जाते हैं और फाइलों पर टिप्पणियां भी हिन्दी में लिखी जा रही हैं। इसकी सहायता के लिए प्रायः हर माह डाक द्वारा सभी कर्मचारियों को दैनिक काम-काज में आने वाली टिप्पणियों के नमूने भेजे जाने की व्यवस्था की गई है। अधिसूचनाएं अंग्रेजी-हिन्दी दोनों भाषाओं में जारी की जा रही हैं। सामान्य आदेशों को भी द्विभाषिक रूप में जारी करने के आदेश दिये जा रहे हैं। सरकारी कर्मचारियों को हिन्दी भाषा, हिन्दी टाइपिंग, हिन्दी स्टेनोग्राफी में शिक्षित करने के लिए हिन्दी शिक्षण योजना के अंतर्गत प्रबन्ध किये गये हैं। इस दफ्तर में 80 प्रतिशत कर्मचारियों को हिन्दी का काम-चलाऊ ज्ञान प्राप्त है। इसलिए राजभाषा नियम-76 की धारा 10(4) के अनुसार इसे अधिसूचित कर दिया गया है। इस ब्यूरो के अधीन कुछ बाहरी यूनिटों को भी गजट में अधिसूचित किया गया है, ये यूनिट हैं—जी.ई.क्यू.डी., हैदराबाद, कलकत्ता, शिमला और सी.एफ.एस.एल., हैदराबाद।

पुलिस प्रशिक्षण कालेजों की सहायता से प्रशिक्षण के काम में आने वाले 85 पाठों का चयन कराया गया है। इनमें से 45 पाठों का हिन्दी में अनुवाद करा लिया गया है। सभी पाठों का अनुवाद हो जाने पर, इन्हें पुस्तक के रूप में प्रकाशित करने का प्रस्ताव है। पुलिस ड्रिल के सभी कमानों (कमांडों) का पहले ही हिन्दीकरण किया जा चुका है। 'ड्रिल मैनुअल' का भी केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो के सहयोग से हिन्दी में अनुवाद कराया जा रहा है। ट्रेनिंग सीरीज का अनुवाद भी, हिन्दी में कराया जा रहा है।

फिलहाल रिसर्च एंड डेवलपमेंट जर्नल तथा इंडियन पुलिस जर्नल में कुछ हिन्दी सामग्री का प्रकाशन प्रारम्भ कर दिया गया है। पुलिस रिसर्च एंड डेवलपमेंट जर्नल के अलग से हिन्दी संस्करण के प्रकाशन के संबंध में कार्रवाई की जा रही है। 'क्राइम-इन-इंडिया' को "भारत में अपराध" नाम से हिन्दी में प्रकाशित किया जा रहा है। "एक्सीडेंटल डैथ एंड सुसाइड रिपोर्ट्स" को हिन्दी में प्रकाशित करने और हिन्दी में "पुलिस शब्दावली" के संकलन के संबंध में भी कार्रवाई की जा रही है।

गृह मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समिति के निर्णय के अनुसार पुलिस से सम्बन्धित विषयों पर हिन्दी में अच्छी पुस्तकें उपलब्ध कराने की दृष्टि से फोरेन्सिक साइंस, पुलिस प्रशासन और पुलिस प्रशिक्षण आदि विषयों पर लिखी गई पुस्तकों पर प्रतिवर्ष "पं. गोबिन्द बल्लभ पंत" के नाम से कई पुरस्कार दिये जाने के संबंध में कार्रवाई की जा रही है।

प्रस्तोता—

श्री हेमराज तलवार

निदेशक, पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो

राइफल फैक्ट्री, ईशापुर में हिंदी पुरस्कार वितरण

रक्षा मंत्रालय की आयुध निर्माणी परिषद के अन्तर्गत राइफल फैक्ट्री, ईशापुर ने वार्षिक राजभाषा समारोह, 1980 का आयोजन सितंबर, 1980 में किया। इस समारोह से संबंधित कार्यक्रमों में हिन्दी वाद-विवाद, हिन्दी व्याख्यान एवं हिन्दी निबंध लेखन प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। इसमें भाग लेने वाले प्रतियोगियों को तीन वर्गों में विभक्त किया गया—प्रथम वर्ग 'क' में वे प्रतियोगी थे जिनकी मातृभाषा हिन्दी थी, दूसरे वर्ग 'ख' में वे प्रतियोगी थे जिनकी मातृभाषा 'उर्दू' एवं 'नेपाली', थी तथा वर्ग 'ग' में वे प्रतियोगी थे जिनकी मातृभाषा 'बंगला' थी। इन तीनों वर्गों की तीन प्रतियोगिताओं के लिये प्रथम तीन स्थान पाने वालों के लिये पुरस्कार प्रदान करने की व्यवस्था थी।

सफल प्रतियोगियों को पुरस्कार वितरण दिनांक 30-1-81 को 10 बजे पूर्वाह्न में राइफल फैक्ट्री के ओ. एफ. टी. आई. भवन, ईशापुर में किया गया। पुरस्कार वितरण समारोह की अध्यक्षता श्री एन. बालाकृष्णन, महाप्रबंधक, राइफल फैक्ट्री, ईशापुर ने की। श्री ओ. पी. बहल, अपर महानिदेशक, एवं सदस्य (कार्मिक), आयुध निर्माणी परिषद् ने इस समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित होकर अपने कर कमलों द्वारा सभी 27 प्रतियोगियों को पुरस्कार एवं प्रमाण-पत्र प्रदान किया। अन्य प्रतियोगियों को भी सांत्वना पुरस्कार प्रदान किए गए। श्री बहल ने उपस्थित समूह को संबोधित करते हुए कहा कि राइफल फैक्ट्री में राजभाषा के प्रचार एवं प्रसार की दिशा में यह समारोह काफी सफल सिद्ध हुआ है। उन्होंने आगे सुझाव दिया कि यहां के कर्मचारी कार्यालय के दिन प्रतिदिन के कामों में राजभाषा हिन्दी का प्रयोग करते रहें। अपने अध्यक्षीय भाषण में श्री एन. बालाकृष्णन्, महाप्रबन्धक ने कहा कि हम लोगों को ऐसे व्यक्तियों पर विशेष ध्यान देना चाहिए जिनको हिन्दी का ज्ञान नहीं है तथा उन्हें हर तरह से प्रोत्साहन देना चाहिए।

प्रेषक - श्री जुगल किशोर प्रसाद,
संपर्क अधिकारी

एफ० सी० आई० यूनिट लिमिटेड, सिन्दूरी में कार्यशाला

हिन्दी के काम-काज में अभिरुचि पैदा करने के लिए सिंदूरी कारखाने में हिन्दी कार्यशालाएं आयोजित की जाती रही हैं। इस वर्ष भी समेकित पाठ्यक्रम पर आधारित "आलेखन तथा टिप्पणी" पर दिनांक 5-1-81 से 2-2-81 तक कार्यशाला का आयोजन किया गया जिसमें 21 कर्मचारियों/कनिष्ठ अधिकारियों ने प्रशिक्षण प्राप्त किया। एक जांच परीक्षा भी ली गयी जिसमें 19 कर्मचारियों ने सफलता प्राप्त की। अनुवाद, संक्षेपण, आलेखन, टिप्पणी, पदनाम एवं प्रशासनिक शब्दों की विशेष जानकारी के साथ विभिन्न प्रपत्रों की भी जानकारी दी गई। सिन्दूरी राजभाषा कार्यान्वयन समिति, सिन्दूरी ने कर्मचारियों को प्रोत्साहन स्वरूप हिन्दी-अंग्रेजी शब्दकोश देना निश्चित किया है ताकि कार्यालय में वे हिन्दी में कार्य सुचारू ढंग से कर सकें। प्रशिक्षण देने का कार्य उप सुरक्षा अधिकारी, श्री वी. के. सिंह तथा कनिष्ठ हिन्दी अधिकारी, श्री बी. पी. श्रीवास्तव ने किया।

इसके पहले भी 29-1-79 से 22-3-79 तक 22 कर्मचारियों के लिए कार्यशाला का आयोजन किया गया था जिसमें 16 कर्मचारियों ने प्रशिक्षण प्राप्त किया। विभागाध्यक्षों के लिए भी एक हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया था जिसमें हिन्दी की समुचित जानकारी दी गयी थी। प्रशिक्षण-कार्य बिहार प्रावैधिकी संस्थान, सिन्दूरी के प्रशासनिक अधिकारी श्री बी. राम ने किया था।

इस कार्यालय में "आलेखन एवं टिप्पणी" में प्रोत्साहन देने के लिए नकद पुरस्कार की योजना लागू कर दी गयी है। कर्मचारियों/अधिकारियों की प्रशासनिक हिन्दी की निपुणता बढ़ाने के लिए, कार्यालय सहायिका तथा हिन्दी-अंग्रेजी शब्दकोश वितरित कर दिया गया है तथा कुछ प्रशासनिक शब्दों को हिन्दी जन संपर्क विभाग द्वारा प्रत्येक माह अंतर-विभागीय स्तर पर जारी किया जाता है। अहिन्दी भाषियों के लिए भी प्रारंभिक हिन्दी कार्यशालाएं प्रारंभ करने की योजना राजभाषा कार्यान्वयन समिति, सिन्दूरी के विचाराधीन है।

नागपुर नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा आयोजित 'हिन्दी दिवस'

"हिन्दी दिवस" कार्यक्रम समारोह के अवसर पर, नागपुर के सभी केन्द्रीय सरकारी कार्यालयों, बैंकों, निगमों और कम्पनियों जिनकी संख्या लगभग 123 है, को आमन्त्रित किया गया था। इसके अतिरिक्त प्रान्तीय सरकार के वरिष्ठ अधिकारी वर्ग और हिन्दी से हमदर्दी रखने वाले स्थानीय नागरिकों को भी आमंत्रण दिया गया था तथा उनसे "हिन्दी दिवस" के उपलक्ष में कुछ कार्य-क्रम प्रस्तुत करने के लिए भी योजना मांगी गई थी। नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की सहयोगी संस्था मैंगनीज ओर (इंडिया) लिमिटेड ने "हिन्दी दिवस" के लिए प्रहसन तथा अन्य विविध कार्यक्रम प्रस्तुत करने में अग्रणी स्थान लिया।

2. स्थानीय धनवटे रंग मंदिर में संध्या 5.30 बजे से "हिन्दी दिवस" का कार्यक्रम उमड़ते घुमड़ते बादलों के बीच, वर्षा की तेज तर्रार बूंदों की चिन्ता न करते हुए चलता रहा। कलाकार एवं दर्शक रंग मंदिर में पहुंचते रहे तथा कार्यक्रम रात करीबन 9.00 बजे तक चलता रहा।

3. नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा पहली बार इस विशाल पैमाने पर "हिन्दी दिवस" के आयोजन के लिए नगर की विभिन्न हिन्दी प्रेमी संस्थाओं ने श्री अग्रवाल जी को धन्यवाद दिया तथा पुष्पमालाओं से उनका अभिनन्दन किया। स्वागतकर्ताओं में श्री पी. बी. चार्लस्, सचिव, केन्द्रीय सरकार कर्मचारी कल्याण समन्वय समिति, नागपुर; सिद्दीकी, सचिव, आई. टी. रिक्रिएशन क्लब; श्री रा. ना. निखर, सचिव, केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् (आयकर शाखा); श्री ज्ञान प्रकाश तिवारी, जीवन बीमा निगम एवं सचिव, केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् नगर समन्वय समिति और श्री एम. एन. बारमासे, अध्यक्ष राष्ट्रीय आई. टी. स्टेनोग्राफर्स एसोसिएशन, नागपुर शामिल थे।

4. अपने अध्यक्षीय भाषण में श्री अग्रवाल महोदय ने बताया कि हिन्दी देश की एकता की लड़ी की एक कड़ी है। इसे बोलने और समझनेवालों की संख्या बहुत अधिक है। सरकारी कामकाज की भाषा के रूप में सरल, सुबोध और आसान हिन्दी लिखने की हमें आदत डालनी चाहिए। आपने भारत की संविधान सभा का जिक्र किया और कहा कि आज की तारीख में हिन्दी को राजभाषा का पद मिला था। हम उसकी याद में हिन्दी दिवस मनाते हैं। हमें संकल्प लेना चाहिए कि हम अपने दैनिक कार्य में हिन्दी को अधिक से अधिक अपनाएंगे।

5. अध्यक्षीय भाषण के बाद, माइल के कलाकारों ने समूह गीत, भरत नाट्यम्, कत्थक नृत्य, शास्त्रीय संगीत पर आधारित संत प्रवर सूरदास का भजन, कव्वाली और "नारद का फेरा" नामक प्रहसन प्रस्तुत किया। इस सांस्कृतिक कार्यक्रम की विशेषता यह थी कि इसमें भाग लेने वाले सभी कलाकार अहिन्दी भाषी थे, जिन्होंने दर्शकों के हृदय पटल पर अपनी छाप अंकित कर दी।

6. कार्यक्रम के अन्त में श्री रामनारायण निखर, आयकर विभाग एवं अध्यक्ष, केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद्, नगर समन्वय समिति, नागपुर ने धन्यवाद देते हुए बताया कि हिन्दी दिवस समारोह को समिति द्वारा पहली बार शानदार ढंग से मनाने में श्री डी. सी. अग्रवाल, आयकर आयुक्त की प्रेरणा प्रमुख रही है। माइल के संचालक, श्री पी. सी. गुप्त तथा वहां के कलाकारों को और घनघोर वर्षा के बावजूद उपस्थित आदरणीय अतिथियों को धन्यवाद दिया गया। कार्यक्रम की सफलता के लिए श्री मोहन चन्द्र जोशी, निरीक्षीय सहायक आयकर आयुक्त एवं राजभाषा अधिकारी, माइल के श्री गुप्त, आयकर अधिकारी श्री एस. एम. निगम तथा जी. एम. देशपांडे का विशेष योगदान रहा।

कविवर सुमित्रानन्दन पंत जयंती एवं राजभाषा पुरस्कार वितरण समारोह

पूर्वोत्तर रेलवे हिन्दी समिति, लखनऊ के तत्वावधान में विगत 20 मई को कविवर सुमित्रानन्दन पंत जयंती समारोह का आयोजन अशोक मार्ग स्थित मण्डल कार्यालय में किया गया। पंत जी के जीवन एवं काव्य की विशेषताओं पर, विश्व साहित्य के परिप्रेक्ष्य में, प्रकाश डालते हुए लखनऊ विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग के रीडर डा. प्रताप नारायण टंडन ने पंत जी को एक मानवतावादी कवि बताया। पौर्वात्य एवं पाश्चात्य साहित्य सिद्धांतों का सारांश मानवता का संकेत पंत जी की अनुभूतियों से निखर कर मानवता के लिये प्रसाद बन गया। डा. टंडन ने आगे कहा कि पंत जी ने "सत्यं-शिवं-सुन्दरम" की पारंपरिक साहित्यिक परिभाषा को 'सुन्दरम' की ओर से देखा। काव्य जीवन के आरम्भिक वर्षों में ये संसार-प्रकृति के सौंदर्य-बोध से आकर्षित रहे। देश की राष्ट्रीय जागृति के साथ शक्तिशाली प्रगतिवादी काव्य विधा के प्रमुख कवि के रूप में उन्होंने मानवता, समाज और राष्ट्र को 'शिवत्व' की ओर प्रेरित करने का प्रयत्न किया। अरविन्द और गांधी से प्रभावित स्वातंत्र्योत्तर काल में परिवर्तित वातावरण के स्वर को अपने काव्य में मुखरित करते हुए पंत जी ने तृतीय चरण में 'सत्यं' की अनुभूति को प्रधानता दी। मानवतावादी जीवन की यथार्थ अनुभूतियों से पूर्ण 'लोकायतन' इस दृष्टि से उनका प्रतिनिधि काव्य है।

सूचना विभाग के निदेशक एवं संयुक्त सचिव श्री ठाकुर प्रसाद सिंह ने पंत जी के जीवन एवं साहित्य का सम्पूर्ण आकलन करते हुए कहा कि यदि प्रसाद के काव्य में दार्शनिक गांभीर्य, निराला में पौरुष एवं गूढ़त्व के दर्शन होते हैं तो पंत मानव मन की सुकुमार भावनाओं के कवि थे। वे कांटों भरी जिन्दगी में निष्ठुर प्रभंजन का आघात सहते हुए भी फूल ही बने रहे और उन्होंने जीवन-मूल्यों को कम नहीं होने दिया। प्रकृति की गोद में लिखी 'ग्राम्या' से 'लोकायतन' तक में उनका उद्देश्य रहा मानव मन की तृप्ति और शेष त्याज्य। श्री सिंह ने आगे कहा कि रोज फैशन की तरह बदलते कविता के स्वरूप वाले आज के युग में उनका काव्य भले ही पिछड़ा माना जाये पर यह स्वीकार करना पड़ेगा कि द्विवेदी युग से उत्तराधिकार में प्राप्त कविता को उसके मसृण रूप एवं नई भाषा-शैली के साथ उन्होंने साहित्य को सौंप दिया। जहां प्रसाद को काव्य-प्रौढ़त्व प्राप्त करने के लिए मार्ग तय करना पड़ा, वही पंत जी ने अपने प्रारम्भिक काल में ही उसे पा लिया। श्री सिंह ने सुझाव दिया कि उनकी जन्म-तिथि उत्सव के रूप में मनाई जानी चाहिए और उसका आकलन पंत जी के संदर्भ में किया जाना चाहिए।

मण्डल के हिन्दी अधिकारी श्री कामता प्रसाद अवस्थी ने छायावादी त्रयी के प्रमुख कवि पंत जी को मूलतः प्रकृति का कवि मानते हुए उनकी 'मानव' शीर्षक कविता की उन पंक्तियों को मानवता के लिये चिर संदेश बताया जिनमें कहा गया है—"क्या कमी तुम्हें है त्रिभुवन में, यदि बने रह सको तुम मानव"।

कार्यक्रम का शुभारम्भ श्री रवि सारस्वत द्वारा पंत जी के काव्य-पाठ से हुआ। आरम्भ में समिति के अध्यक्ष एवं मण्डल रेलवे प्रबन्धक श्री एल. एम. भास्कर ने अतिथियों का स्वागत करते हुये पंत जी को एक महान कवि बताया। अंत में हिन्दी अधिकारी श्री कामता प्रसाद अवस्थी ने धन्यवाद ज्ञापन किया। समारोह का संयोजन हिन्दी अधीक्षक श्री जगतपति शरण निगम ने किया।

राजभाषा पुरस्कार वितरण

मण्डल रेलवे प्रबन्धक ने इस अवसर पर हिन्दी में सराहनीय कार्य के लिए लखनऊ मण्डल के 60 कर्मचारियों को नकद पुरस्कार एवं राजभाषा प्रशस्ति-पत्र प्रदान किया। इसके अतिरिक्त 10 सामूहिक पुरस्कार भी प्रदान किये गये। पुरस्कृत कर्मचारियों में गार्ड, टिकट कलेक्टर, कोचिंग क्लर्क, माल बाबू तथा अन्य तकनीकी और गैर-तकनीकी कर्मचारी शामिल थे। सामूहिक पुरस्कार स्वास्थ्य केन्द्र, कानपुर (अनवरगंज) एवं सीतापुर, कार्य निरीक्षक कार्यालय, ऐशबाग, सिगनल निरीक्षक कार्यालय, लखीमपुर, टिकट कलेक्टर कार्यालय, मैलानी के अलावा लखनऊ सिटी के मालगोदाम, कोचिंग स्टाफ, स्टेशन स्टाफ को दिए गये। कुल 4850/-रु. की राशि पुरस्कार स्वरूप वितरित की गयी।

समीक्षा

'कथा सेतु' प्रकाशक : पारिजात प्रकाशन, पटना, प्रथम संस्करण, 1980,

सजिल्द पृष्ठ संख्या 226, मूल्य 30 रुपये

भारतवर्ष जैसे विशाल उप महाद्वीप में सर्वत्र विविधता में एकता का सूत्र किसी न किसी रूप में दिखाई पड़ता है। हमारा देश बाहर और भीतर दोनों ही दृष्टियों से विशाल है। उत्तर में देवतात्मा हिमालय से लेकर कन्याकुमारी पर्यन्त और गुजरात से कामरूप तक, यह उप महाद्वीप अपनी विशालता को प्रतिबिंबित करता है। यह विशालता आकार और हृदय दोनों की ही है। भारतीय संस्कृति महासागर की तरह व्यापक और गहरी है। भाषागत विभिन्नताओं, खान-पान तथा रीति-रिवाजों की अनेकता के बावजूद भारतवासियों की आत्मा एक है। जैसे नदियों की धाराएं तो बहुत होती हैं पर समुद्र की ही ओर सभी दौड़ती हैं--'यथा नदीनां बहवोऽम्बु वेगाः समुद्रमेवाभिमुखाश्चरन्ति।'

एकता की इसी भावना के कारण भारतीय स्वतंत्रता के पूर्व देशवासियों ने हिन्दी को सम्पर्क भाषा के रूप में अपनाया था। इसी संदर्भ में स्थित एक छोटा सा द्वीप-समूह भी मुख्य भूमि के साथ मेरे मन के फलक पर उभर आता है! अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह भारत का ही लघु रूप है। भारत के विशाल हृदय के अनुरूप ही द्वीपवासियों ने पारस्परिक सम्पर्क की भाषा के रूप में हिन्दी को व्यवहार में अपना लिया है। 'कथासेतु' नाम के कहानी संग्रह को देखकर इस द्वीप-समूह का सामाजिक आर्थिक और सहज रोजमर्रा की जिन्दगी का अंश हमारे सामने उभर आता है। भाषायी समन्वय के कारण इस द्वीप-समूह की हिन्दी में एक खास किस्म की ताजगी है, इसके अलावा एक खास रंग और खास खुशबू भी है। नारियल कुंजों से घिरे हुए इस द्वीप-समूह की सुगन्ध भाषा में गमकती-महकती रहती है।

जिस प्रकार मुख्य भूमि में हिन्दी साहित्य सम्मेलन, राष्ट्र-भाषा प्रचार समिति और अन्य संस्थाएं हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए समर्पित हैं उसी प्रकार इस द्वीप-समूह में 'नव परिमल' जैसी साहित्यिक संस्था भी हिन्दी को व्यावहारिक रूप देने के लिये प्रतिबद्ध है। 'कथा सेतु' में कई तरह के गद्य रूपों की झलक देखी जा सकती है। रोटी-रोजी की दृष्टि से इस संग्रह के लेखक जीवन के विविध पक्षों से जुड़े हुए हैं। प्रशासनिक अधिकारी, अध्यापक, वैज्ञानिक, चिकित्सक, इंजीनियर तथा और भी दूसरे व्यवसायों में लगे लोग जिन्दगी की जद्दोजहद को पूरी सचाई के साथ अंकित करने में सक्षम हुए हैं। जिजिविषा की विविधता में एक सामंजस्य का सूत्र यहां खोजा जा सकता है।

संग्रह की रचनाओं में प्रवाह और प्रभाव दोनों ही हैं। इतना जरूर है कि इनमें थोड़ी तराश और तरमीम होने पर एक खास दमक आ गई होती। 'लौटोगी नहीं मम्मी' जैसी स्तरीय कहानी के साथ 'एक चैक सम्पादक के नाम', 'कहूं तो कैसे' जैसी हल्की कहानियां भी हैं। फिर भी कुल मिलाकर यह संग्रह भाषायी और सामाजिक समन्वय की जीवंत प्रयोगशाला है। भाषा-गत समन्वय (लिंग्विस्टिक इंटरएक्शन) के कारण इनमें एक निरालापन भी है। अतीत की स्मृतियों में कैद पीढ़ी-दर-पीढ़ी भोगे यथार्थ के दर्द और संत्रास का गहरा सागर यहां लहराता है।

इस संग्रह को देखकर आशा बंधती है कि हिन्दी का स्वरूप क्रमशः विकसित हो रहा है।

--रंग नाथ राकेश

अतीत के झरोखे से (दस्तावेज) का लिप्यन्तरण :

।। श्री ।।

रूबकारी कचहरी अजेण्टी जिले भोपाल वगैरह इजलास में मिस्तरलान सिल्ट विलकिन्सन साहब बहादुर पोलिटकल एजेंट तारीख 5 जुलाई, 1841 ई. मुताबिक मिती सावन वदी 3 सन् 1249 फसली

(हस्ताक्षरित अंग्रेजी में एस. विलकिंसन)
पोलिटकल एजेंट, भोपाल

आगे ता. 15 जून, 1839 ई. में ये मुकदमा रूबकार हुआ था सो मसौदा रूबकार का इस माफिक था कि राजे महम्मद अफसर कोम पिन्डारे जागीरदार पीपलइयानगर मैंने अपने जीतेजी वसीयतनामा लिखा कि सनद हमारी जागीर की हीन हयात है अगर सरकार कम्पनी से हमारी औलाद के वास्ते बदस्तूर जागीर इनायत होगी तो मुआफिक वसीयतनामे के हमारे सब लड़के पाया करें सो नकल मुताबिक असल

टिप्पणी : रूबकारी--सुनवाई, माफिक/मुआफिक--अनुकूल, बदस्तूर--नियमानुसार, ठीक-ठीक, प्रथानुसार)

अतीत के झरोखे से :

॥ श्री ॥

सरकारी कचहरी अजंसी जिले भोपाल वगैरह इजलास मे मिसलात सिकट

विलकिनसन साहब बहादुर पोलिटिकल अजंट ता: ६ जुलाई सन १८७९ ई:

मुताबिक मि: सावन वदि ८ सन १२८८ फसली

अगे ता: १५ जून सन १८३० ई: मे मुकाम सरकार इन्दौर सोमेसोह

सरकार का इस माह बनाया कि राज महल व फसरु मा पिंडार जागीरदार

पीपल्या नगर के अपने जीते जी वासियत नामा लिखा कि सनद हमारी जागीर

की हीन हयात है अगर सरकार कंपनी से हमारी औलाद के वास्ते बदस्तूर जागीर

इनायत होगी तो मुआफ़िक वसियत नामे के हमारे सब लड़के पावेंगे सो:

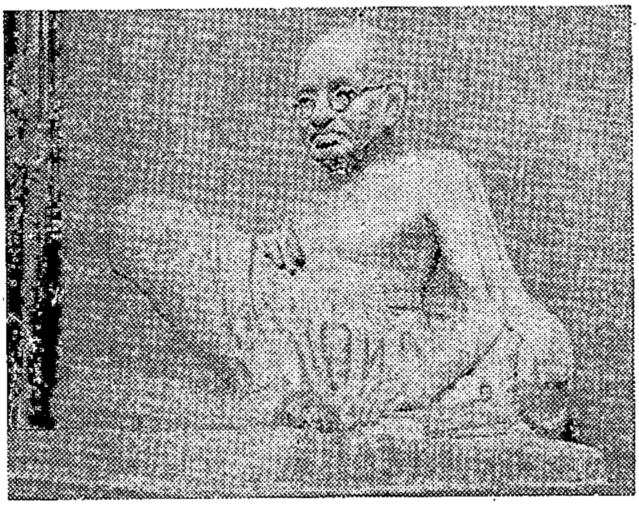

अंग्रेजी की हवा : गांधी जी का पत्र गुरुदेव के नाम

"गुरुदेव की तरह मुझे भी खुली हवा पर श्रद्धा है। मैं नहीं चाहता कि मेरा घर सब तरफ खड़ी हुई दीवारों से घिरा रहे और उसके दरवाजे और खिड़कियां बन्द कर दी जाएं। मैं तो यही चाहता हूं कि मेरे घर के आसपास देश-विदेश की संस्कृति की हवा बहती रहे, पर मैं यह नहीं चाहता कि उस हवा में जमीन पर से मेरे पैर उखड़ जायें और मैं औंधे मुंह गिर पड़ूं। मैं दूसरे के घर में अतिथि, भिखारी या गुलाम की हैसियत से रहने के लिए तैयार नहीं हूं। झूठे घमंड के वश होकर, या कही जाने वाली सामाजिक प्रतिष्ठा पाने के लिए, मैं अपने देश के भाई-बहनों पर अंग्रेजी का नाहक बोझ डालने से इन्कार करता हूं। मैं चाहता हूं कि हमारे देश के जवान-लड़कियों को साहित्य में रस हो तो वे भले ही दुनिया की दूसरी भाषा की तरह अंग्रेजी जी-भर कर पढ़ें। फिर मैं उनसे आशा रखूंगा कि वे अपने अंग्रेजी पढ़ने के लाभ डा० बोस, राय और खुद गुरुदेव की तरह हिन्दुस्तान को और दुनिया को दें। लेकिन मुझसे यह नहीं बर्दाश्त होगा कि हिन्दुस्तान का एक भी आदमी मातृभाषा को भूल जाए, उसकी हंसी उड़ाए या उससे शर्माए या उसे यह भी लगे कि वह अपने अच्छे से अच्छे विचार अपनी भाषा में नहीं रख सकता।"

("हिन्दी नवजीवन" दिनांक 13-2-1921 को प्रकाशित महात्मा गांधी द्वारा गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर को लिखे पत्र का अंश)

राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार के लिए श्री रंगनाथ त्रिपाठी 'राकेश' द्वारा लोकनायक भवन, खान मार्केट, नई दिल्ली से प्रकाशित तथा प्रबन्धक, भारत सरकार मुद्रणालय, फरीदाबाद द्वारा मुद्रित।